राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक—पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

(सम्मान्य सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर)

ग्रन्थाङ्क ७८

राघवदास कृत

भक्तमाल

(चतुरदास कृत टीका सहित)

प्रकाशक

राजस्थान राज्य संस्थापित

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE, JODHPUR.

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान राज्य द्वारा प्रकाशित

सामान्यतः अखिल भारतीय तथा विशेषतः राजस्थानदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, हिन्दी आदि भाषानिबद्ध
विविध वाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्ट ग्रन्थावलि

प्रधान सम्पादक

पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य
सम्मान्य सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर;
ऑनरेरि मेम्बर ऑफ जर्मन ओरिएण्टल सोसाइटी, जर्मनी;
निवृत्त सम्मान्य नियामक (ऑनरेरि डायरेक्टर),
भारतीय विद्याभवन, बम्बई; प्रधान सम्पादक,
सिंघी जैन ग्रन्थमाला, इत्यादि।

ग्रन्थाङ्क ७८

राघवदास कृत

भक्तमाल

(चतुरदास कृत टीका सहित)

प्रकाशक
राजस्थान राज्याज्ञानुसार
सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान
जोधपुर (राजस्थान)

राघवदास कृत

भक्तमाल

(चतुरदास कृत टीका सहित)

सम्पादक

श्री अगरचन्द नाहटा

प्रकाशनकर्त्ता

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

विक्रमाब्द २०२१ } भारतराष्ट्रीय शकाब्द १८८५ { खिस्ताब्द १९६५
प्रथमावृत्ति १००० } { मूल्य रु० ६.७५

मुद्रक : जगदीशचन्द्र स्वर्णकार, अजन्ता प्रिण्टर्स, जोधपुर.

BHAKTAMAL
OF
RAGHAVADAS

(with Commentary by Chaturdas)

Edited by
AGARCHAND NAHATA

PUBLISHED
under the orders of the Government of Rajasthan

BY

The Director, Rajasthan Oriental Research Institute,
JODHPUR (RAJASTHAN).

V.S. 2021 *Price : Rs. 6.75* 1965 A.D.

सञ्चालकीय वक्तव्य

भगवद्भक्तों के आदर्श आचरण और त्यागमय जीवन सामान्य जन-जीवन में मार्गदर्शक होते हैं। इस द्वन्द्वात्मक जगत की जटिल परिस्थितियों के झकझोलों में जब जनता के धार्मिक विश्वास डगमगाने लगते हैं, तो तारण-तरण पहुँचवान भक्तों की करुणापरिपूरित अमृतवाणी से ही भवदावदग्ध-जनों को शान्ति एवं कर्तव्यपथ का निदर्शन प्राप्त होता है। ऐसे जगदुद्धारक हरि-भक्त सन्तों के पवित्र चरित्र और महिमा का वर्णन अनेक सतसङ्गी एवं गुरुभक्तों ने विविध रूपों में किया है।

भक्तमाल, भक्त-परिचयी, मुनि-नाम-माला, साधु-वन्दना आदि अनेक प्रकार की रचनाएँ विभिन्न ग्रन्थ-सग्रहों में उपलब्ध होती हैं। ऐसी रचनाओं में महात्मा पयोहारिजी के शिष्य नाभादासजी कृत भक्तमाल प्रसिद्ध है। दादूपंथी, रामस्नेही, निरञ्जनी, राधावल्लभीय, गौडीय और हितहरिवंशीय सम्प्रदायों के भक्तों के परिचय भी पृथक्-पृथक् भक्तमालों में सन्दृब्ध हुए हैं।

दादू सम्प्रदाय के कतिपय भक्तों की परिचायिका चारण कवि ब्रह्मदास कृत भक्तमाल का प्रकाशन प्रतिष्ठान की ओर से 'राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला' के अन्तर्गत ग्रन्थाङ्क ४३ के रूप में किया जा चुका है। दादू सम्प्रदाय का जन्म और विकास राजस्थान में ही हुआ और दादूपंथी भक्तों की वाणी भी अधिकांश में राजस्थानी भाषा में ही निबद्ध है।

हरिदास अपर नाम हापोजी के शिष्य राघवदासजी ने स्वरचित भक्तमाल में अनेक दादूपंथी भक्तों के पावन-चरित्रों का चित्रण किया है। इस भक्तमाल की एक टीका भी एतत् सम्प्रदायी शिष्य कवि चतुरदास द्वारा की गई, जिसमें भक्तों का चरित्र विस्तार से दिया गया है।

कुछ वर्षों पूर्व राजस्थान के सुप्रसिद्ध उत्साही साहित्यान्वेषक श्री अगरचन्दजी नाहटा ने 'राघवदास कृत भक्तमाल चतुरदास कृत टीका सहित' की एक प्रति की प्रतिलिपि हमें दिखाकर इस कृति को प्रतिष्ठान की ओर से प्रकाशित करने का प्रस्ताव किया जो हमने स्वीकार कर लिया और प्राचीन प्रतियों के आधार पर इसका विधिवत् सम्पादन करने के लिये श्री नाहटाजी से अनुरोध किया।

प्रस्तुत रचना की दो प्रतियाँ प्रतिष्ठान के जयपुर स्थित शाखा-कार्यालय में स्व० पुरोहित हरिनारायणजी विद्याभूषण-संग्रह में विद्यमान हैं। इनमें से एक प्रति सं० १८६१ की अर्थात् चतुरदासजी कृत टीका के रचनाकाल से साढ़े तीन वर्ष बाद ही की लिखित है। इस प्रति की प्रतिलिपि करवा कर श्री नाहटाजी को भेजी गई और अन्य प्राप्य प्रतियो के पाठान्तरों सहित सम्पादन के लिये उन्हें सूचित किया गया। तदनुसार विद्वान् सम्पादकजी ने भूमिका में उल्लिखित प्रतियों को लेकर पाठान्तर आदि देते हुए प्रेसकॉपी तैयार कराई। समय-समय पर जिन अन्य प्रतियों की हमें सूचना मिली अथवा बाद में प्रतिष्ठान में जो प्रतियाँ प्राप्त हुईं, उनके विषय में भी श्री नाहटाजी को जानकारी दी गई और प्रतियाँ उनके अवलोकन व उपयोग के लिये भेजी गईं।

हमारा विचार है कि यदि ऐसी राजस्थानी रचनाओं का सम्पादन राजस्थान के विभिन्न भागों अथवा विभिन्न भूतपूर्व रियासतों में लिपिकृत प्रतियों के आधार पर किया जाय, तो भाषाशास्त्र के अन्तर्गत, ध्वनिभेद और भाषा-विकास सम्बन्धी अनेक गुत्थियों के हल निकलने के अतिरिक्त कितने ही अन्यान्य रोचक तथ्य भी सामने आ जाते हैं और उनसे नए निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। अस्तु, श्री नाहटाजी द्वारा प्रेस-कॉपी तैयार करा लेने तथा प्रेस में मूल ग्रन्थ का बहुत-सा अंश छप जाने के बाद प्रतिष्ठान में राघवदास कृत भक्तमाल (चतुरदास की टीका सहित) की दो और प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं। उनके विवरण इस प्रकार हैं :

(१) प्रतिष्ठान के संग्रहाङ्क २१६७७ पर अंकित प्रति का विवरण :
पत्र सं० ९२ पंक्ति प्रति पृष्ठ = १८
३२ × १५.८ सी. एम अक्षर प्रति पंक्ति = ४८
प्रतिलिपि संवत् १९०० वि०।

पुष्पिका. इती श्री भक्तमाल टीका सहित राघोदासजी कृत संमस्त भक्तन को जथामात बरनन संपूरण समापत: ॥ छपय छंद ॥३४३॥ मनहर छंद ॥१५०॥ हंसाल छंद ॥४॥ साषी ॥६२॥ चौपई ॥२॥ इंदव छंद ॥८८॥ एती राघवदासजी कृत संपूरण ॥५७५॥ चतुरदासजी कृत टीका ॥ इंदव अरु मनहर ॥६५३॥ समस्त मुल टीका कवित को जोड ॥१२५५॥ ग्रथ को प्रमाण श्लोक संख्या हजार ॥४५००॥

संबत अष्टादश शतक ॥ दश नवगुन अधिकाहि ॥
भाद्रमास सित प्रतिपदा ॥ भृगुबासर कै मांहि ॥

नग्र अंमारुआ मध्ये ल्यषि असतल भगवानदासजी का ता मध्ये लिषि साध रामदयाल दादूपंथी ॥ सैमत्त ॥१९००॥ मीति भादवा सुदी ॥१२॥ रांम रं रं रं रं

इस प्रति में छंद संख्या १,२५५ लिखी है, परन्तु उक्त अंकों को जोड़ने पर १,३०२ आती है। पृष्ठ संख्या, अनुपाततः प्रति पृष्ठ पंक्ति संख्या और प्रतिपंक्ति

अक्षर संख्या के गुणन से ४,९६८ श्लोक संख्या आती है, परन्तु प्रति में ४,५०० ही लिखी है।

(२) संख्या २८००० पर अंकित प्रति का विवरण :

पत्र सं० १२० पंक्ति प्रति पृष्ठ=१३
माप ३०×१३ सी. एम. अक्षर प्रति पंक्ति=५०
लिपि संवत् १९०४ वि०

पुष्पिका—"इति श्री भक्तमाल की टीका संपूरण समापत: ॥ सुभमस्तु कल्यांणरस्तु ॥ लेषकपाठकयो ब्रह्म भवतु ॥ छपै छंद ॥३३३॥ मनहर छंद ॥१४१॥ हंसाल छंद ॥४॥ साषी ॥३८॥ चौपई ॥२॥ इंदव छंद ॥७५॥ राघोदासजी कृत भक्तमाल संपूरण ॥५५३॥ इंदव छंद ॥ चतुरदास कृत टीका सब छं ॥६२१॥ सरबस कबित ॥११८५॥ ग्रंथ की श्लोक संष्या ॥४१०१॥"

यहाँ प्रति में दोहरा हंसपद लगाकर दक्षिण हाशिए पर निम्न दो दोहे सूक्ष्माक्षरों में लिखे हैं :

अष्यर बतीस ग्यन करि, संष्या चार हजार।
तामैं अरथ अनूप है, बकता लह बिचार ॥१॥
मैं मत: साख्न आपणी, ग्रन्थ जो लिष्यौ बिचार।
सचर घालै अति घणौ, बकता बकसणहार ॥२॥

लिषतं सुभसथान रांमगढ मध्ये ॥ सुकल पक्षे तिथ भादव सुधि पंचमी मंगलवार बार ॥ संबत ॥१९॥४॥ का ॥"

इसके आगे "दादूजी दयाल पाट ग्रीब मसकीन ठाठ" आदि पद्य लिखे हैं, जो पुस्तक के पृ० २७० पर मुद्रित हैं। ये पद्य २१६७७ वाली प्रति में नहीं हैं।

इस प्रति की पुष्पिका में लिखे अनुसार मूल भक्तमाल की छंद संख्या ५५३ है, परन्तु जोड़ने पर ५९३ आती है। इसमें टीका के उल्लिखित ६२१ छंद जोड़ने से योग १,२१४ आता है, परन्तु प्रति में १,१८५ ही लिखे हैं। प्रति में समस्त श्लोक संख्या ४,१०१ ही लिखी है, परन्तु उपर्युक्त प्रकार से पृष्ठ संख्या, प्रतिपृष्ठ पंक्ति संख्या एवं प्रतिपंक्ति अक्षर संख्या का गुणनफल ४,८७५ आता है।

विद्वान् सम्पादक श्री अगरचन्दजी ने प्रस्तुत पुस्तक के सम्पादन में पूरी रुचि लेकर पाठ-शोधन, पाठान्तर, सूचनागर्भित प्रस्तावना और आवश्यक परिशिष्ट आदि का सङ्कलन कर पुस्तक को उपयोगी बनाने का यथाशक्य पूरा प्रयत्न किया है। तदर्थ वे हमारे धन्यवाद के पात्र हैं। जयपुर के दादू-महाविद्यालय के प्राण स्वामी मंगलदासजी महाराज ने भी अतिरिक्त सूचनाएँ व

परिशिष्ट आदि दिये हैं, अतः उन्हें भी धन्यवाद अर्पित करना हमारा कतव्य है। इनके अतिरिक्त जिन विभागीय एवं अन्य विद्वानों ने पुस्तक को पूर्ण बनाने में श्री नाहटाजी का हाथ बटाया है, वे भी प्रशंसा के पात्र हैं।

प्रस्तुत प्रकाशन भारत सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय की ओर से "आधुनिक भारतीय भाषा-विकास-योजना-राजस्थानो" के अन्तर्गत प्रदत्त आर्थिक सहयोग से किया जा रहा है, तदर्थ भारत सरकार के प्रति हम आभार प्रदर्शित करते हैं।

१५-४-६५
राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान,
जोधपुर.

मुनि जिनविजय
सम्मान्य सञ्चालक

भूमिका

भारत अध्यात्म-प्रधान देश है। यहाँ के मनीषियों ने सब से अधिक महत्त्व धर्म को ही दिया है, क्योंकि मोक्ष की प्राप्ति उसी से होती है और मानव-जन्म का सर्वोच्च अेवं अंतिम ध्येय आत्मोपलब्धि या परमात्म-पद-प्राप्ति का ही है। साध्य की सिद्धि के लिअे साधनों की अनिवार्य आवश्यकता होती है।

भारतीय धर्मों में वैसे तो अनेक साधन प्रणालियों को स्थान दिया गया है, पर उन सब का समावेश ज्ञान, भक्ति और कर्म-योग में कर लिया जाता है। मानवों की रुचि, प्रकृति अेवं योग्यता में विविधता होने के कारण उनके उत्थान के साधनों में भी भिन्नता रहती है। मस्तिष्क-प्रधान व्यक्ति के लिअे ज्ञान-मार्ग अधिक लाभप्रद होता है और हृदय-प्रधान व्यक्ति के लिअे भक्तिमार्ग। योग अेवं कर्म-मार्ग भी अेक सुव्यवस्थित साधन प्रणाली है, क्योंकि जब तक आत्मा का इस शरीर के साथ संबंध है, उसे कुछ न कुछ कर्म करते रहना ही पड़ता है। गीता के अनुसार आसक्ति या फल की आकांक्षारहित कर्म ही कर्म-योग है। पतञ्जलि के योगसूत्र में योगमार्ग के आठ अंग बतलाये गये है, उनमें पहले चार अंग हठयोग के अन्तर्गत आते हैं और पिछले चार अंग राजयोग के माने जाते हैं। वेदान्त, ज्ञान-मार्ग को महत्व देता है, तो भक्ति-संप्रदाय सब से सरल और सीधा मार्ग भक्ति को ही बतलाता है।

जैन धर्म में सम्यक्दर्शन, ज्ञान और चारित्र को मोक्ष-मार्ग बतलाया गया है। सम्यग्दर्शन में श्रद्धा को प्रधानता दी गई है, अतः उसका संबंध भक्तिमार्ग से जोड़ा जा सकता है, कर्म या योग का चारित्र से ज्ञान तो सर्वमान्य है ही, क्योंकि उसके बिना भक्ति किसकी[1] और कैसे की जाय तथा कर्म कौन-सा अच्छा है और कौनसा बुरा—इसका निर्णय नहीं हो सकता।

'अपने से अधिक योग्य और सम्पन्न व्यक्ति के प्रति आदर-भाव होना मानव की सहज वृत्ति ही है। महापुरुष या परमात्मा से बढ़कर श्रद्धा या आदर का स्थान और कोई हो नहीं सकता। गुणी व्यक्ति की पूजा या भक्ति करने से गुणों के

---

[1] भगवान के सगुण व निर्गुण दो भेद करके उसकी उपासना दोनों रूपों में की जाती है। इस रीति से निर्गुणोपासक व सगुणोपासक भक्त कहा जाता है।

प्रति आकर्षण बढ़ता जाता है और इससे अपने गुणों का विकास करने की प्रेरणा और शक्ति प्राप्त होती है। इसलिए ईश्वर या महापुरुष की भक्ति को सभी धर्मों ने महत्वपूर्ण स्थान दिया है। भक्ति कई प्रकार से की जाती है, जिन में से नवधा भक्ति काफी प्रसिद्ध है।

भक्ति के द्वारा भगवान को प्राप्त करना या जैन-दर्शन के अनुसार प्रत्येक आत्मा परमात्म-स्वरूप है, इसलिए परमात्मा के अवलंबन से अपने में छिपे हुए गुणों का विकास कर परमात्मा बन जाना ही भक्ति-मार्ग का इष्ट है।

जिन-जिन व्यक्तियों ने भक्ति के द्वारा अपना विकास किया, वे 'भक्त' कहलाते हैं। ऐसे भक्तों के नाम स्मरण एवं गुणस्तुति के लिए ही 'भक्तमाल' जैसे ग्रंथों की रचनाएं हुई हैं—भक्तजनों की जीवनी के विशिष्ट प्रसंगों व चमत्कारों आदि का वर्णन इन ग्रंथों में संक्षेप से किया जाता है, जिससे अन्य व्यक्तियों को भी भक्ति की प्रेरणा मिले और वे भक्त बनें।

महापुरुषों, संत एवं भक्तजनों तथा अन्य विशिष्ट व्यक्तियों की गुणस्तुति या चरित्र-वर्णनात्मक साहित्य-निर्माण की परंपरा काफी प्राचीन है। वेदों और उपनिषदों में इसके सूत्र पाये जाते हैं। पुराणों तथा रामायण एवं महाभारत में इस परंपरा का उल्लेखनीय विकास देखने को मिलता है। इसके बाद भी समय-समय पर अनेकों व्यक्तियों के चरित एवं स्तुति-काव्य रचे गये। यह उनकी परपंरा आज भी है और आगे भी रहेगी। ऐसी रचनाओं में कुछ तो व्यक्ति-परक होती हैं और कुछ अनेक व्यक्तियों के संबंध में। 'भक्तमाल', जैसा कि नाम से स्पष्ट है, भक्तजनों की नामावली एवं गुणस्तुति की एक माला है। जिस प्रकार माला में अनेक मनके होते हैं, उसी तरह 'भक्तमाल' में अनेकों संतों एवं भक्तों के नाम तथा उनके जीवन-प्रसंगों का संग्रह किया जाता है।

माला नामान्त पद वाली रचनाओं की परम्परा—

माला द्वारा जप करने की प्रणाली काफी पुरानो है, पर माला नामान्त वाली रचनाएं इतनी प्राचीन प्राप्त नहीं होतीं। वैसे करीब बारह सौ वर्षों से प्राकृत, संस्कृत और अपभ्रंश भाषा में माला व माल नामान्त वाली शताधिक जैन जयमाल आदि रचनाएं[1] प्राप्त होती हैं। संभवत: हिन्दी के कवियों को उन्हीं से अपनी रचनाओं को 'माला या माल' संज्ञा देने की प्रेरणा मिली हो।

---

[1]देखिये, राजस्थान के दिगम्बर जैन ग्रंथ भण्डारों की सूचियाँ।

सतरहवीं शताब्दी के कवि नाभादास ने सर्वप्रथम 'भक्तमाल' नामक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ बनाया। उसके बाद तो उसके अनुकरण में 'भक्तमाल' और अैसी ही अन्य नामों वाली रचनाअें बहुत-सी रची गयीं और प्रायः प्रत्येक भक्ति और संत संप्रदाय के कवियों ने पौराणिक-भक्तों के नाम अेवं गुणस्तुति के साथ-साथ अपने संप्रदाय के संत अेवं भक्तजनों के नाम तथा चरित्र-संबंधी प्रसंगों का समावेश अपनी रचित भक्तमालों में किया है।

सन्त एवं भक्तों की परिचइयाँ—

१७ वीं शताब्दी से ही हिन्दी में संतों एवं भक्तों के व्यक्तिगत परिचय को देने वाली 'परिचयी' संज्ञक रचनाअें भी रची जाने लगीं, ऐसी रचनाओं में सर्व प्रथम अनंतदास रचित आठ परिचइयाँ प्राप्त हैं, जो कि सं० १६४५ के लगभग की रचनाअें हैं। इसके बाद तो छोटी व बड़ी शताधिक परिचयी संज्ञक रचनाअें रची गयीं, जिनमें से १५ परिचइयों का आवश्यक विवरण डॉ० त्रिलोकीनारायण दीक्षित ने 'परिचयी-साहित्य' नामक ग्रंथ में प्रकाशित किया है, जो लखनऊ विश्वविद्यालय से सन् १९५७ में प्रकाशित हुआ था। इसके बाद मैंने अैसी रचनाओं की विशेष रूप से खोज की, और करीब ७५ रचनाओं की जानकारी 'राष्ट्रभारती' के जनवरी और सितंबर १९६२ के अंकों में प्रकाशित मेरे दो लेखों में दी जा चुकी हैं।

अब मैं 'भक्तमाल' नामक स्वतंत्र रचनाओं की जानकारी यहाँ संक्षेप में दे देना आवश्यक समझता हूँ।

भक्तमाल साहित्य की परम्परा—

नाभादास की भक्तमाल, उसकी टीकायें और प्रकाशित संस्करण

भक्तों के चरित्र-संबंधी हिन्दी-काव्यों में सब से प्राचीन एवं सब से अधिक प्रसिद्ध ग्रंथ नाभादास की 'भक्तमाल' है। इसकी पद्य संख्या, रचना काल, आदि अभी निश्चित नहीं हो पाये, क्योंकि प्राचीनतम[1] प्रतियों के आधार से इस ग्रन्थ का सम्पादन वैज्ञानिक पद्धति से नहीं हो पाया है। कई विद्वानों की राय में मूलतः इसमें १०८ पद्य (छप्पय) थे, जैसे कि माला के १०८ मनके होते हैं। पर उतने पद्यों वाली प्राचीनतम प्रति अभी तक प्राप्त नहीं है। संवत् १७७० की

[1] जहाँ तक मेरी जानकारी है, संवतोल्लेखवाली प्राचीन प्रति सं० १७२४ की लिखित सरस्वती भण्डार उदयपुर में है। वृन्दावन से प्रकाशित भक्तमाल के पृष्ठ ८९९ में सं० १७१३ की अन्य प्रति का उल्लेख किया है, पर वह कहाँ है—इसकी जानकारी नहीं मिल सकी।

प्रति में १६४ पद्य हैं। प्रियादास की टीका में २१४ पद्य छपे हैं। शुक्लजी ने इसकी छन्द-संख्या ३१६ बतलाई है। इससे मालूम होता है कि समय-समय पर अन्य व्यक्तियों द्वारा प्रक्षेप होता रहा है। और इसलिये इसका रचना-काल भी अभी तक निश्चित नहीं हो पाया। साधारणतया इसका रचना-काल संवत् १६४२ से १७०० तक का माना जाता है। पर मूल ग्रन्थ में रचना-काल दिया हुआ नहीं है और इस ग्रन्थ में जिन व्यक्तियों संबंधी पद्य हैं, उनमें से कई व्यक्ति और उनके ग्रन्थ संवत् १६८६ और १७०० के बीच के समय के हैं। इसलिये श्री वासुदेव गोस्वामी ने इसका रचना-काल संवत् १६८६ के बाद का सिद्ध किया है—(देखें, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ६४, अंक ३-४)।

श्री किशोरीलाल गुप्त ने अपने 'भक्तमाल का संयुक्त कृतित्व' नामक लेख में, जो कि ना० प्र० पत्रिका, वर्ष ६३, अंक ३–४ में छपा है, लिखा है कि भक्तमाल अभी जिस रूप में उपलब्ध है, वह एक व्यक्ति की रचना न हो कर ३ व्यक्तियों की रचना है। उन्होंने लिखा है—"भक्तमाल के अनुशीलन से स्पष्ट होता है कि यह ग्रन्थ किसी एक व्यक्ति की रचना न होकर कम-से-कम ३ व्यक्तियों की संयुक्त कृति है। ये ३ व्यक्ति हैं—अग्रदास और उनके शिष्य नारायणदास तथा नाभादास। ……… मेरा ऐसा खयाल है कि नारायणदास के मूल भक्तमाल का परिवर्तन नाभादास ने किया और आज वह जिस रूप में उपलब्ध है, उसे वह रूप देने का श्रेय नाभादास को है। नाभादास ने ग्रन्थ की भूमिका और उपसंहार में कोई परिवर्तन नहीं किया है और भक्तमाल के सभी दोहे नारायणदास की ही रचना हैं। नाभादास ने केवल छप्पयों को ही बढ़ाया है। २४ छप्पय अग्रदास कृत हैं। जिनमें से २ में स्पष्टतः अग्रदास की छाप है। अग्रदास के छप्पय नाभादासजी ने भक्तमाल को वर्तमान रूप देते समय जोड़े। भक्तमाल के ३० से १६६ संख्यक १७० छप्पयों में भक्तों का विवरण है, इनमें से १०८ छप्पय नाराणदास के होने चाहियें और ६२ नाभादास के।" श्री किशोरीलाल गुप्त ने इस संबंध में विस्तार से प्रकाश डाला है।[†] स्वामी मंगलदासजी की राय में दादूपन्थी राघोदास ने भक्तमाल की रचना नारायणदास रचित भक्तमाल के आधार से संवत् १७१७ में की है। अतः उसके तुलनात्मक अध्ययन से भी नारायणदास (नाभा) की भक्तमाल के मूल पद्यों का निर्णय करने में सहायता मिल सकती है।

[†]इस सम्बन्ध में वृन्दावन से प्रकाशित भक्तमाल वाला बृहद् संस्करण भी महत्त्व की सूचनाएँ देता है।

भक्तमाल की निम्नोक्त टीकाओं का उल्लेख विभिन्न ग्रन्थों में देखने में आया है।

१. प्रियादास की टीका 'भक्ति-रस-बोधिनी'. सं० १७६९। में रचित सं० १९८८ में वेंकटेश्वर प्रेस से प्रकाशित संस्करण में मूल पद्य २१४ और टीका पद्य ६२४।

२. 'भक्तमाल प्रसंग' वैष्णवदास कृत (सन् १९०१ की खोज रिपोर्ट में संवत् १८२९ में लिखित प्रति) पं० उदयशंकर शास्त्री ने वैष्णवदास की टिप्पणी—'भक्तमाल-बोधिनी' टीका संवत् १७८२ में लिखी गई, लिखा है। उनकी राय में वैष्णवदास दो हो गये हैं।

३. लालदास कृत टीका—इसका रचनाकाल अनूप संस्कृत लायब्रेरी की सूची में संवत् १८६८ छपा है, पर राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान में इसकी तीन प्रतियाँ संवत् १८५६, १८७० और १८९३ की लिखी हुई हैं। इसलिये इसकी रचना संवत् १८५६ के पहले की ही समझनी चाहिये।

४. वैष्णवदास और अग्रनारायणदास कृत रसबोधिनी टीका—सन् १९०४ की खोज रिपोर्ट में इसका रचना संवत् १८४४ दिया गया है।

५. भक्तोवर्शी टीका, लालजीदास—इसका विशेष विवरण नीचे दिया जा रहा है।

भक्तमाल अर्थात् भक्तकल्पद्रुम ले० श्री प्रतापसिंह, सम्पादक-कालीचरण चोंरासिया गौड़, प्रकाशक-तेजकुमार प्रेस बुक डिपो, लखनऊ। सन् १९५२, बारहवीं वार, मूल्य दस रुपये—बडी साइज पृ० ४९३। इस ग्रन्थ में मंगलाचरण के बाद प्रस्तुत ग्रन्थ और इससे पहले की टीकाओं सम्बन्धी निम्नोक्त विवरण दिया गया है।

"छप्पय छन्द में नाभाजी ने भक्तमाल बनाया। यह माला भक्तजन मणिगण से भरा है। जिसने हृदय में धारण किया तिसने भगवत को पहिचाना, ऐसी यह माला है। श्री प्रियादासजी माध्वसम्प्रदाय के वैष्णव श्री वृन्दावन में रहते थे। उन्होंने कवित्व में इस भक्तमाल की टीका बनाई। उनके पश्चात् लाला लालजीदास ने सन् ११५८ हिजरी में पारसी में प्रियादासजी के पोते वैष्णवदास के मत से तर्जुमा किया व तर्जुमे का नाम 'भक्तोर्वशी' धरा। यह रहने वाले काँधले के थे, लक्ष्मणदास

नाम था। मथुरा की चकलेदारी में सत्संग प्राप्त हुआ। हितहरिवंशजी की गद्दी के सेवक हुये, लालजीदास नाम मिला। राधावल्लभलालजी के उपासक हुये।

दूसरा तर्जुमा एक और किसी ने किया है नाम याद नहीं है तीसरा तर्जुमा लाला गुमानीलाल कायस्थ रहने वाले रत्थक के, संवत् १६०८ में समाप्त किया। चौथा तर्जुमा लाला तुलसीराम रामोपासक लाला रामप्रसाद के पुत्र अगरवाले रहनेवाले मोरापुर अम्बाले के इलाके के, कलक्टरी के सरिश्तेदार। उस मूल भक्तमाल और टीका को संवत् १६१३ में बहुत प्रेम व परिश्रम करके शास्त्र के सिद्धान्त के अनुसार बहुत विशेष वाक्यों सहित अति ललित पारसी में उर्दू वाणी लिये हुए तर्जुमा करके चौवीस निष्ठा में रच के समाप्त किया।

संवत् उन्नीस सौ सत्रह १६१७ श्रावण के शुक्ल पक्ष में पड़रौना ग्राम में जो श्यामधाम में मुख्य भगवद्धाम है तहाँ श्री राधाराजवल्लभलालजी ठाकुर हिंडोला झूल रहे थे। उसी समय 'उमेदभारती' नामक सन्यासी रहने वाला ज्वालामुखी के जो कोटकांगड़े के पास है, भक्तमालप्रदीपन नाम पोथी, जो पंजाब देश में अम्बाले शहर के रहने वाले लाला तुलसीराम ने जो पारसी में तर्जुमा करके भक्तमालप्रदीपन नाम ख्यात किया है, तिसको लिये हुये आये। उनके सत्कार व प्रेमभाव से पोथी हम ईश्वरीप्रतापराय को मिली। जब सब अवलोकन कर गये तो ऐसा हर्ष व आनन्द चित्त को प्राप्त हुआ कि वर्णन नहीं हो सकता। साक्षात् भगवत् प्रेरणा करके मनवांछित पदार्थ को प्राप्त कर दिया। व लाला तुलसीराम के प्रेम व परिश्रम की बड़ाई सहस्रों मुख से नहीं हो सकती। कुछ काल उसके श्रवण व अवलोकन का सुख लिया, तब मन में यह अभिलाषा हुई कि इस पोथी को देवनगरी में भाषान्तर अर्थात् तर्जुमा करें कि जो फारसी नहीं पढे हैं उन सब भगवद्भक्तों को आनन्ददायक हो, सो थोड़ा २ लिखते २ तीसरे वर्ष संवत् उन्नीस सौ तेईस १६१३ अधिक ज्येष्ठ शुक्ल पूर्णिमा को श्री गुरुस्वामी व भगवद्भक्तों की कृपा से यह भक्तमाल नाम ग्रन्थ सम्पूर्ण व समाप्त हुआ, व चौवीस निष्ठा में सत्रह निष्ठा तक तो ज्यों का त्यों क्रमपूर्वक लिखा गया परन्तु अठारहवीं निष्ठा से भक्तिरस के तारतम्य से क्रम न लगाकर इस ग्रन्थ में लिखा है। प्रथम (१) धर्मनिष्ठा जिसमें सात उपासकों का वर्णन और (२) दूसरी भागवतधर्मप्रचारक निष्ठा तिसमें बीस भक्तों का वर्णन, तीसरी (३) साधुसेवा निष्ठा व सत्संग तिसमें पन्द्रह भक्तों की कथा, चौथी (४) श्रवण महात्म्य निष्ठा में ४ भक्तों की कथा और पाँचवी (५) कीर्तन

निष्ठा में १५ भक्तों को कथा है, छठई (६) भेषनिष्ठा तिसमें आठ भक्तों की कथा, सातई (७) गुरुनिष्ठा तिसमें ग्यारह भक्तों की कथा, आठई (८) प्रतिमा व अर्चानिष्ठा तिसमें पन्द्रह भक्तों की कथा, नवई (९) लीला अनुकरण जैसे "रासलीला राम लीला" इत्यादि तिसमें छहों भक्तों की कथा, दसवीं (१०) दया व अहिंसा तिसमें छवों भक्तों की कथा, ग्यारहवीं (११) व्रतनिष्ठा तिसमें दो भक्तों की कथा, बारहवीं (१२) प्रसाद निष्ठा तिसमें चार भक्तों की कथा, तेरहवीं (१३) धामनिष्ठा तिसमें आठ भक्तों की कथा, चौदहवीं (१४) नामनिष्ठा तिसमें पाँच भक्तों की कथा, पन्द्रहवीं (१५) ज्ञान व ध्याननिष्ठा तिसमें बारह भक्तों की कथा, सोलहवीं (१६) वैराग्य व शान्तनिष्ठा तिसमें चौदह भक्तों की कथा, सत्रहवीं (१७) सेवानिष्ठा तिसमें दश भक्तों की कथा, अठारहवीं (१८) दासनिष्ठा तिसमें सोलह भक्तों की कथा, उन्नीसवीं (१९) वात्सल्यनिष्ठा तिसमें नव भक्तों की कथा, बीसवीं (२०) सौहार्दनिष्ठा तिसमें छवों भक्तों की कथा, इक्कीसवीं (२१) शरणागती व आत्म-निवेदन निष्ठा तिसमें दस भक्तों की कथा, बाइसवीं (२२) सख्यभावनिष्ठा तिसमें पाँच भक्तों की कथा, तेइसवीं (२३) शृंगार व माधुर्यनिष्ठा तिसमें बीस भक्तों की कथा, चौबीसवीं(२४) प्रेमनिष्ठा तिसमें सोलह भक्तों की कथा का वर्णन लिखा गया।"

६. बालकराम कृत भक्तदाम-गुणचित्रणी टीका—इसकी एक प्रति उदयपुर के सरस्वती भण्डार में है। ४५८ पत्रों की यह प्रति सं० १९३२ की लिखी हुई है। बालकराम ने टीका के अन्त में अपना परिचय देते हुए लिखा है कि रामानुज की पद्धति में रामानन्द हुये उनके पौत्र-शिष्य श्रीपयहारी की प्रणाली में सन्तदास के शिष्य, खेम के शिष्य प्रहलाददास और मीठारामदास हुये। उनके शिष्य बालकदास ने यह टीका बनाई है। डॉ० मोतीलाल मेनारिया ने इसके संबंध में लिखा है कि "नाभाजी के भक्तमाल की यह एक बहुत बड़ी, सरस और भावपूर्ण टीका है। इसमें दोहा, छप्पय आदि कई प्रकार के छन्दों में वर्णन किया गया है, पर अधिकता चौपाई छन्द की ही है। हिन्दी के भक्त-कवियों के विषय में नाभादास ने, अपने भक्तमाल में जिन-जिन बातों पर प्रकाश डाला है, उनके अलावा भी बहुत-सी नयी बातें इसमें बतलायी गई हैं और इसलिये साहित्यिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होने के साथ-साथ वह संत महात्माओं के इतिहास की दृष्टि से भी परम उपयोगी है। इसका रचनाकाल संवत् ८०० से ११८२० तक का है। बालकराम की रचना कहने को नाभाजी के भक्तमाल की टीका है, पर वास्तव

में इसे एक स्वतन्त्र ग्रन्थ ही समझना चाहिये। यह व्रजभाषा में है, जिस पर राज-स्थानी का भी थोड़ा-सा रंग लगा है। कविता बहुत ही सरस और प्रवाहयुक्त है।" इसमें दिये हुये कबीर-चरित्र को मेनारियाजी ने अपने राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज, भाग १ में पूर्ण रूप से उद्धृत कर दिया है। इस ग्रन्थ की अन्य प्रति हिन्दी विद्यापीठ, आगरा के संग्रह में है, उसके अनुसार इसकी रचना सं० १८३३ के फाल्गुन एकादशी सोमवार को हुई है।

७. भक्तरसमाल—व्रजजीवनदास, रचना सं० १९१४। सन् १९०९ से १९११ की रिपोर्ट में इसका विवरण प्रकाशित हुआ है। पंडित महावीरप्रसाद, गाजीपुर के संग्रह में इसकी प्रति है। विवरण में इसकी श्लोक संख्या ८५० बतलाने से यह बहुत ही संक्षिप्त मालूम देती है।

८. हरिभक्तिप्रकाशिका टीका—खेतड़ी निवासी हरिप्रपन्न रामानुज-दास कायस्थ ने इसकी रचना की। जिसे पंडित ज्वालाप्रसाद मिश्र ने विस्तृत करके लक्ष्मी वैंकटेश्वर प्रेस से संवत् १९५६ में प्रकाशित की थी। भूमिका में श्री मिश्रजी ने लिखा है कि "उर्दू, भाषा, संस्कृत, छन्दोबद्ध आदि कई प्रकार की भक्तमाल इस समय मिलती हैं तथा एक इसी भक्तमाल को दोहे–चौपाई में मैंने भी रचना किया है, जो अभी तक प्रकाशित नहीं हुई है।" संवत् १९५५ मुरादाबाद में मिश्रजी ने इस हरिभक्तिप्रकाशिका टीका को नये रूप से लिखके पूर्ण की। ७७६ पृष्ठों का यह ग्रन्थ अवश्य ही महत्वपूर्ण है।

'हिन्दी पुस्तक-साहित्य' में रामानुजदास कृत हरिभक्तिप्रकाशिका टीका का उल्लेख है।

९. भक्तिसुधास्वादतिलक—इस की रचना अयोध्या निवासी श्री सीतारामशरण भगवानप्रसाद रूपकला ने संवत् १९५० के बाद की है। मूल भक्तमाल व प्रियादास की टीका के साथ इसे संवत् १९५६ में काशी के बलदेव-नारायण ने प्रकाशित की। इसका तीसरा संस्करण नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ से प्रकाशित हुआ। इसके अन्त में प्रियादास के पौत्र शिष्य वैष्णवदास रचित भक्त-माल महात्म्य भी छपा है। १००० पृष्ठों का यह ग्रन्थ अपना विशेष महत्व रखता है

१०. सखाराम भीक्षेत कृत टीका—'हिंदी में उच्चतर-साहित्य' नामक ग्रन्थ के पृष्ठ ४८० में बम्बई से इसके प्रकाशन का उल्लेख है। इसी ग्रन्थ में तुलसीराम की टीका (?) मंबाउल उलूम प्रेस, सुहाना से प्रकाशित होने का उल्लेख है तथा

भक्तमाल के कई संस्करण, (१) नृत्यलाल शील, कलकत्ता, (२) पंजाब कानोमिकल प्रेस, लाहौर, (३) चश्म-ए-नूर प्रेस, अमृतसर का भी उल्लेख है। पर ये संस्करण मेरे देखने में नहीं आये। 'हिन्दी पुस्तक साहित्य' के पृष्ठ ५३ में तुलसीराम तथा हरिबख्स मुंशी की भक्तमाल का भी उल्लेख है।

(११) मलूकदास लिखित भक्तमाल टीका—इसका विवरण सन् १६४१ से १६४३ की खोज रिपोर्ट के पृष्ठ १०५३ में छपा है। ना० प्र० सभा, काशी के पुस्तकालय में संवत् १६६२ की लिखी २६० पत्रों की प्रति है। मलूकदास बैष्णवदास के शिष्य थे और छत्रपुर रियासत में रविसागर के निकट रहते थे।

उक्त खोज रिपोर्ट के पृष्ठ १०५२ में भक्तचरितावली ग्रन्थ का विवरण छपा है जिसमें पौराणिक-चरितों का अभाव है। पर महाराजा बदनसिंह, विजयसिंह, शिवराम भट्ट आदि १६वीं शताब्दी के भक्तों का वर्णन भी है। ग्रन्थ खण्डित है। ग्रन्थ की शैली भक्तमाल के समान प्रौढ न होते हुये भी उत्तम बतलाई गई है।

(१२) जानकीप्रसाद की उर्दू टीका—पं० उदयशंकरजी शास्त्री की सूचनानुसार नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ से यह छप चुकी है।

(१३) छप्पयों पर फारसी टीका—पं० उदयशंकरजी शास्त्री के कथनानुसार मन्नूलाल पुस्तकालय, गया में इसकी हस्तलिखित प्रति है।

(१४) संस्कृत भक्तमाला—श्री चंद्रदत्त ने नाभादास की भक्तमाल (एवं टीका) के आधार से संस्कृत-पद्य-बद्ध इस ग्रन्थ को बहुत विस्तार से लिखा है। इसके तीन खण्ड—विष्णु, शिव और शक्ति में से केवल विष्णु खण्ड ही ६,७०० श्लोक परिमित वेंकटेश्वर प्रेस मे छपा हुआ हमारे संग्रह में है। श्री बाल गणक कृत और जयपुर नरेश की प्रेरणा से रचित दो ग्रन्थ संस्कृत भक्तमाल का उल्लेख वृन्दावन से प्रकाशित भक्तमाल के पृष्ठ ६५७ में है।

(१५) भक्ति-रसायनी व्याख्या—श्री रामकृष्णदेव गर्ग को यह आधुनिक व्याख्या वृन्दावन से सन् १६६० में प्रकाशित हुई है। इसमें भक्तमाल व प्रियादास की टीका भी दी गई है। करीब १००० पृष्ठ का यह ग्रन्थ भी विशेष महत्त्व का है। इसके प्रारम्भ में श्री उदयशंकर शास्त्री ने प्रियादास के बाद उनके पौत्र वैष्णवदास रचित 'भक्ति-उर्वशी' टीका का उल्लेख करते हुये वैष्णवदासजी को मथुरा में किसी सरकारी पद पर होना बतलाया है। तीसरी टीका संवत् १८६८ में रोहतक के निवासी

लाला गुमानीराम ने की है। 'वार्त्तिक-प्रकाश' नामक टीका अयोध्या के महात्मा रसरंगमणि ने बनाई, जो रामोपासक सन्तों में प्रसिद्ध हुई। श्री मार्तण्ड बुआ ने सं० १९३३ में मराठी भाषा में छन्दोबद्ध टीका की, लिखा है।

वृन्दावन से प्रकाशित श्री भक्तमाल के पृष्ठ ९५५ में लिखा है—"मार्तण्ड बुआ कृत 'भक्त-प्रेमामृत' नामक मराठी टीका, जो सं० १९३८ में पूर्ण हुई, सं० १९८४ में चित्रशाला छापाखाना में मुद्रित हुई है। मराठी में महीपति कृत 'भक्त-लीलामृत', महीपति बुआ कृत 'भक्ति-विजय' नामक ग्रन्थ भी उल्लेखनीय हैं। इनमें से 'भक्ति-विजय' में नाभाजी की भक्तमाल को भाषा ग्वालियेरी बतलाई है। 'हिन्दी को मराठी सन्तों को देन' शोध-प्रबन्ध में 'भक्ति-विजय' १७ वीं शताब्दी में रचित बतलाने से यह उल्लेख महत्त्वपूर्ण है।

(१६) बंगला भक्तमाल—लालदास या कृष्णदास बाबाजी रचित। 'हिन्दी और बंगाली वैष्णव कवि' नामक शोध-प्रबन्ध में रत्नकुमारी ने इसका विवरण देते हुये लिखा है—"बंगला के दो कवियों ने भक्तमाल का अनुकरण किया। ये दोनों ही १६ वीं शती के परवर्ती कवि हैं। एक तो लालदास या कृष्णदास बाबाजी रचित ग्रन्थ है, जिसका नाम भी श्री भक्तमाल[1] ही है। इसमें मूल हिन्दी छप्पय देकर फिर उसका बंगला में भाष्य सा किया गया है। उन सम्पूर्ण भक्तों की नामावली तो 'बंगला भक्तमाल' में नहीं है, जो 'हिन्दी भक्तमाल' में है। थोड़े से मुख्य हिन्दी भाषा-भाषी वैष्णव-भक्तों का परिचय है। दूसरी रचना जगन्नाथदास कृत भक्तचरितामृत है। यह भी भक्तमाल का अवलम्बन लेकर रची गई है।

लालदास बाबा की उक्त भक्तमाल अविनाशचन्द्र मुखोपाध्याय सम्पादित पूर्णचन्द्र शील, कलकत्ता द्वारा बंगाब्द १३५० साल में प्रकाशित हो चुकी है।

(१७) गुरुमुखी भक्तमाल—कीर्त्तिसिंह रचित इस ग्रन्थ का उल्लेख वृन्दावन से प्रकाशित भक्तमाल के पृष्ठ ९५९ में किया गया है।

(१८) अरिल-भक्तमाल—१४२ अरिल छन्दों में रचित इस भक्तमाल की प्रति गोस्वामी गोवर्द्धनलाल, राधारमण का मंदिर त्रिमुहानी, मिर्जापुर में है।

---

[1] दुर्गादास लाहिड़ी सम्पादित कलकत्ते से (प्रथम संस्करण बंगाब्द १३१२), द्वितीय संस्करण १३२० में प्रकाशित हुआ।

व्रजजीवनदास की (मांझा) भक्तमाल (इश्कमाला) के साथ ही इसका उल्लेख उक्त श्री भक्तमाल ग्रन्थ के पृष्ठ ९५८ में एवं खोज रिपोर्ट में छपा है।

(१९) भक्तमाला-रामरसिकावली—श्री रघुराजसिंह रचित यह महत्त्वपूर्ण और बड़ा ग्रन्थ लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस से सं० १९७१ में छपा था। इसकी पृष्ठ संख्या उत्तर-चरित्र के साथ ९८९ है।

(२०) भक्तमाल के अनुकरण में संवत् १८०७ में हँसवा (फतेहपुर) के चन्ददास ने भक्तविहार नामक ग्रन्थ की रचना की।

इस तरह की और भी अनेक रचनायें हैं। जिनमें दुःखहरण की भक्तमाल का उल्लेख 'उत्तर भारत की सन्त परम्परा' और मांझा भक्तमाल का उल्लेख 'खोज विवरण' में पाया जाता है।

(२१) उत्तरार्द्ध भक्तमाल—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने इसकी रचना की है। 'कल्याण' के भक्त-चरितांक के प्रारम्भ में नाभादास की भक्तमाल के बाद इसे भी दे दिया गया है। गोस्वामी राधाचरण तथा गोपालराय कवि वृन्दावन वाले ने एक भक्तमाल बनाई है। उपरोक्त तीनों रचनायें २० वीं शताब्दी की हैं। इससे स्पष्ट है कि नाभादास की भक्तमाल[1] का अनुकरण आज तक होता रहा है। गुजरात, पंजाब, महाराष्ट्र, बंगाल, आदि प्रदेशों में भी भक्तमाल का बड़ा प्रचार रहा है।

अब विभिन्न सम्प्रदायों की भक्तमालों का संक्षिप्त विवरण दिया जा रहा है।

दादूपंथी सम्प्रदाय

१. जग्गाजी रचित भक्तमाल

दादू शिष्य जग्गाजी रचित भक्तमाल, जिसमें केवल भक्तों की नामावली दी है, ६९ चौपाई छन्दों में है। उसकी प्रतिलिपि स्वामी मंगलदासजी ने अपने हाथ से करके मुझे भेजी है। उसमें पुराने भक्तों की नामावली ३२ पद्यों में देने के बाद दादूजी के शिष्य आदि संतों के नाम साढ़े पैंसठ पद्यों तक में ठूंस-ठूंस के भर दिये हैं। यह भक्तमाल प्रस्तुत ग्रन्थ के परिशिष्ट नं० २ में दे दी गई हैं।

२. चैनजी की भक्तमाल

९१ पद्यों की इस भक्तमाल की प्रतिलिपि भी स्वामी मंगलदासजी ने स्वयं करके भेजी है। इसमें भी संतों एवं भक्तों की नामावली ही दी है। अंतिम

---

[1] भक्तमाल के मूल पद्यों और नये तथ्यों के सम्बन्ध में मेरा एक लेख "सप्त सिन्धु" में शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

उपसंहार का पद्य प्राप्त प्रतिलिपि में नहीं है। यह भक्तमाल भी प्रस्तुत ग्रन्थ के परिशिष्ट नं० ३ में दे दी गई है।

३. राघवदास की भक्तमाल—

प्रस्तुत दादूपंथी कवियों में राघवदास ने ही सब से बड़ी और महत्त्वपूर्ण भक्तमाल बनाई। नाभादास की भक्तमाल के बाद यही सर्वाधिक उल्लेखनीय रचना है। सं० १७१७ में इसकी रचना हुई है। अब से ४८ वर्ष पूर्व इस रचना का परिचय श्री चन्द्रिकाप्रसाद त्रिपाठी ने सरस्वती पत्रिका के अक्टूबर सन् १९१६ के अंक में प्रकाशित 'दादू-पंथी सम्प्रदाय का हिन्दी-साहित्य' नामक लेख में दिया था। उनका दिया हुआ विवरण इस प्रकार है—

"स्वामी दादूदयाल के सम्प्रदाय में एक सन्त राघवदासजी हो गये हैं। उन्होंने भक्तमाल नाम का एक ग्रन्थ रचा है। उसमें शिवजी, अजामिल, हनुमान्, विभीषण आदि से लेकर जितने भक्त हुए हैं, सब का वृतान्त पद्य में दिया है। इस ग्रन्थ में १७५ भक्तों के चरित्र हैं और निम्नलिखित चार सम्प्रदाय और द्वादश पंथ शामिल हैं—

(१) स्वतन्त्र भक्त ३१।

(२) चार सम्प्रदायी भक्त—(क) रामानुज सम्प्रदाय के १० भक्त। (ख) विष्णुस्वामी सम्प्रदाय के ६ भक्त। (ग) मध्वाचार्य सम्प्रदाय के १५ भक्त। (घ) निम्बादित्य सम्प्रदाय के ६ भक्त।

(३) द्वादस पंथी—(क) षट्दर्शन, सन्यासी, योगी, जङ्गम, जैन, बौद्ध, अन्यान्य। (ख) समुदायी भक्त ४०। (ग) चतुःपन्थी गुरु नानक साहब के पन्थ के, कबीर साहब के पन्थ के, दादूदयाल के पंथ के, निरञ्जन के पंथ के। (घ) माधौकाणी। (ङ) चारण।

इस ब्योरे से विदित हो जावेगा कि भारतवर्ष की सम्पूर्ण सम्प्रदायों से दादूपन्थियों का मेल है।"

४. चारण ब्रह्मदासजी की भक्तमाल—

राजस्थानी भाषा में रचित ६ भक्तमालों का समूह राजस्थान प्राच्य-विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित हो चुका है। ब्रह्मदासजी दादूपंथी साधु थे, उनका समय सं० १८१६ के लगभग का है।†

† लघु भक्तमाल के नाम से इसकी १ हस्तलिखित प्रति उदयपुर सरस्वती भण्डार में है, उससे मिलान करने पर कुछ नये पद्य मिलने की सम्भावना है।

रामस्नेही सम्प्रदाय

(१) रामदासजी रचित भक्तमाल १७६ पद्यों की है। जिनमें से १२४ चौपाइयों में अनेक संत एवं भक्तों के नाम दिये गये हैं। यह रचना 'श्री रामस्नेही धर्मप्रकाश' नामक ग्रंथ में सन् १९३१ में प्रकाशित हुई थी। अब पुनः "श्री रामदासजी की वाणी" में भी प्रकाशित हो चुकी है।

२. रामदासजो के शिष्य दयालदासजी ने एक विस्तृत भक्तमाल सं० १८६१ में बनाई है जिसमें सभी प्रचलित पंथों के महात्माओं का निरूपण किया गया है। इस ग्रन्थ का आवश्यक विवरण मैंने अपने अन्य लेख में दिया है।

३. रामस्नेही सम्प्रदाय की रैण शाखा (दरियावजी की) के सुखशारणजी ने भक्तमाल की रचना सं० १९०० में की, जिसका परिमाण १७३५ श्लोकों का है। यह अभी-अभी स्वामी युक्तिरामजी, जोधपुर से प्रकाशित 'श्री सन्तवाणी' ग्रन्थ के पृष्ठ १३९ से ३०६ में प्रकाशित हो चुकी है।

निरञ्जनी सम्प्रदाय

महात्मा प्यारेरामजी ने सं० १८८३ में भक्तमाल की रचना की। इसका विवरण देते हुए स्वामी मंगलदासजी ने अपनी सम्पादित "श्री महाराज हरिदासजी की वाणी" में लिखा है–कि "इस भक्तमाल की रचना मोरिड़ में हुई। प्यारेरामजी ने अपने गुरु की आज्ञा से इसकी रचना की। अवतारों का निरूपण करने के बाद खेमजी, चत्रदासजी, पोकरदासजो, दयालदासजी, सेवादासजी, अमरपुरुषजी व दर्शनदासजी तक का निरूपण किया है। पश्चात अन्य भक्तों का विवेचन किया है। २०४ मनहर कवित्त इस भक्तमाल के हैं, अन्त में ४ दोहे हैं।" इसकी प्रतिलिपि हमारे संग्रह में भी है।

राधावल्लभ सम्प्रदाय

(१) गोस्वामी हितहरिवंश के शिष्य ध्रुवदासजी ने "भक्तनामावलि" नामक ग्रंथ की रचना की; जिसमें १२३ व्यक्तियों की नामावली दी हुई है। मूल ग्रंथ ११४ पद्यों का है। इसे श्री राधाकृष्णदास ने बहुत अच्छे रूप में टिप्पणी सहित सम्पादित करके सन् १९२८ में प्रकाशित किया, जो नागरी प्रचारिणी सभा, काशी से अब भी प्राप्त है। ध्रुवदासजी की अनेक रचनाओं में से "सभा-मंडली" में

१६८१ 'वृन्दावनशत' में १६८६ और 'रहसिमंजरी' में १६६८ रचना काल दिया है। इससे उक्त "भक्त-नामावलि" की रचना नाभादास की भक्तमाल के थोड़े वर्षों के बाद ही हुई प्रतीत होती है।

(२) रसिक अनन्यमाल—भगवत मुदित रचित इस ग्रंथ का प्रकाशन वृन्दावन से हो चुका है। इसका सम्पादन श्री ललताप्रसाद पुरोहित ने किया है। इसमें २४ व्यक्तियों की परिचयी पाई जाती है। इसका रचना काल सं० १७०६ से १७२० के मध्य का बतलाया गया है।

इसकी पूर्ति रूप में उत्तमदासजी ने अनन्य-माल की रचना की।

वल्लभसम्प्रदाय की ८४, २५२ वैष्णवन की वार्ता भी इसी तरह की गद्य रचनाएँ हैं।

गौड़ीय-सम्प्रदाय

देवकीनन्दन कृत वैष्णव-वन्दना—वैष्णव-वंदना में अनेक वैष्णव-भक्तों की वंदना की गई है। इन व्यक्तियों की जीवनो पर तो विशेष प्रकाश इस रचना से नहीं पड़ता, नाम बहुत से मिल जाते हैं। यही इसका ऐतिहासिक मूल्य है। यह रचना अत्यन्त लोकप्रिय है।

माधवदास कृत वैष्णव-वंदना—इस रचना का प्रचार उस वैष्णव-वंदना की अपेक्षा, जो देवकीनन्दन की रचना है, कम है। बंगीय साहित्य-परिषद् ने शिवचन्द शील द्वारा सम्पादित इस रचना को १३१७ बंगाब्द (१६१० ई०) में प्रकाशित किया है। इसमें श्री चैतन्य, नित्यानंद, अद्वैत, हरिदास, श्रीनिवास, रामचन्द्र कविराज, मुरारिगुप्त, वासुदेव इत्यादि का उल्लेख है।

रामोपासक-सम्प्रदाय

रसिकप्रकाश-भक्तमाल—इसकी रचना छपरा निवासी शंकरदास के पुत्र एवं अयोध्या के श्री रामचरणजी के शिष्य जीवाराम (जुगलप्रिया) ने संवत् १८६६ में की। इसमें रामोपासक रसिक-भक्तों का इतिवृत्त संग्रह किया गया है। उनके शिष्य जानकीरसिकशरणजी ने सं० १६१६ में रसिक-प्रबोधिनी नामक टीका लिखी। २३५ छप्पय और ५ दोहों के मूल ग्रन्थ पर ६१६ कवित्तों में यह टीका पूर्ण हुई है।

उक्त रसिक-प्रकाश भक्तमाल, लक्ष्मण किला अयोध्या से प्रकाशित हो चुकी है।

हितहरिवंश–सम्प्रदाय

श्री उदयशंकर शास्त्री ने श्री कृष्ण पुस्तकालय विहारीजी के मन्दिर के पास, वृन्दावन से प्रकाशित "केलिमाल" नामक ग्रन्थ की सूचना दी है, जो हितहरिवंश सम्प्रदाय के भक्तों के सम्बन्ध में है तथा आगरा से प्रकाशित (भारतीय-साहित्य वर्ष ७ अंक १ में) भक्त-सुमरणी-प्रकाश, महर्षि शिवव्रतलाल रचित सन्तमाल, (संत नामक पत्रिका के ३ जिल्दों में प्रकाशित) और खांडेराव रचित भक्त-विरुदावली (खंडित रूप में हिन्दी विद्यापीठ आगरा के संग्रह में) आदि रचनाओं की जानकारी भी दी है, पर ये ग्रन्थ मेरे अवलोकन में नहीं आये।

जैन-धर्म में भक्तमाल जैसी रचनाओं की परम्परा—

जैन-धर्म म सम्यक् ज्ञान, दर्शन, चारित्र को मोक्ष का मार्ग बतलाया है। सम्यक् दर्शन को सर्वाधिक महत्त्व देने पर भी सम्यक् चारित्र अर्थात् आचार को ही प्रधानता दी गई दिखाई देती है। अतः सम्यक् चारित्र की आराधना करने वाले तीर्थंकरों व मुनियों के प्रति विशेष आदर व्यक्त किया गया है। उनके नाम-स्मरण, गुण-स्तुति और चैत्य-निरूपण सम्बन्धी जैन-साहित्य बहुत विशाल है। नाभादास की भक्तमाल की तरह तीर्थंकरों व मुनियों के नाम स्मरणपूर्वक उनको वन्दना करने वाली रचनायें 'साधु-वन्दना' के नाम से प्राप्त होती हैं। १६ वीं शताब्दी से लेकर २० वीं शताब्दी तक साधु-वन्दना या मुनि-नाममाला जैसी रचनाओं की परम्परा बराबर चली आ रही है। १६ वीं शताब्दी के कवि विनयसमुद्र और पार्श्वचन्द्र की साधु-वन्दना प्राप्त है। १७ वीं शताब्दी के प्रारम्भ के कवि ब्रह्म, विजयदेवसूरि, पुण्यसागर, कुंवरजी, नयविजय, केशवजी, श्रीदेव, समयसुन्दर आदि कवियों की साधु-वन्दना नामक रचनायें प्राप्त हैं। इनमें से समयसुन्दर की रचना सबसे बड़ी है। ५९१ पद्यों की इस साधु-वन्दना की रचना सं० १६९७ अहमदाबाद में हुई है। १८ वीं शताब्दी के कवि यशोविजय और देवचन्द्र तथा १९ वीं शताब्दी के कवि जयमल रचित साधु-वन्दना छप चुकी हैं।

माला या मालिका संज्ञक रचनाओं में खरतर-गच्छीय कवि चारित्रसिंह रचित मुनिमालिका स० १६३६ की रचना है, जो हमारे प्रकाशित 'अभय-रत्नसार' में छप चुकी है। २० वीं शताब्दी के मुनि ज्ञानसुन्दर रचित मुनि-नाममाला भी प्रकाशित हो चुकी है, उसमें करीब ७५० मुनियों के नाम हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सन्त एवं भक्तजनों के नामों के संग्रह रूप या उनके चरित को संक्षिप्त या विस्तार से प्रकट करने वाली रचनाओं की परम्परा बहुत लम्बी है। जैन, जैनेतर सभी धर्म-सम्प्रदायों में ऐसी रचनायें बनाई गई हैं। उनमें से बहुत-सी रचनाओं का तो अच्छा प्रचार रहा है। छोटी-छोटी रचनाओं को तो लोग नित्य-पाठ के रूप में पढ़ते रहते हैं। महान् पुरुषों के जीवन से प्रेरणा मिलती रहती है। अतः ऐसी रचनाओं का विशेष महत्त्व है। प्रस्तुत राघवदास की भक्तमाल भी इसी परम्परा की एक विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण रचना है। उसी के सम्पादन प्रसंग से ऐसी ही अन्य रचनाओं की परम्परा की कुछ जानकारी यहाँ विशेष प्रयत्नपूर्वक देदी गई है।

अब प्रस्तुत संस्करण में प्रकाशित "भक्तमाल" के रचयिता राघवदास व उनकी रचनाओं का स्वामी मंगलदासजी से प्राप्त विवरण दिया जा रहा है।

राघोदासजी

दादूजी महाराज के प्रमुख बावन शिष्यों में बड़े सुन्दरदासजी व प्रह्लाददासजी का समुचित निरूपण है; जैसा कि भक्तमाल टीकाकार चत्रदासजी ने व स्वयं राघोदासजी ने ५२ शिष्यों के निरूपण प्रसंग में "सुन्दर प्रह्लाददास घाटडे सु छींड मधि" (दे०पृ० २७०) ऐसा उल्लेख किया है। किन्तु जहाँ दादूपन्थ का विवरण है, वहाँ प्रह्लाददासजी का विवरण पोता-शिष्यों में है। स्वयं प्रह्लाददासजी ने अपनी वाणी की रचना में सुन्दरदासजी महाराज को गुरु माना है। इस विवरण से (१) दादूजी, (२) सुन्दरदासजी (बड़े), (३) प्रह्लाददासजी, (४) हरीदासजी (हापौजी), (५) राघोदासजी—यह क्रम है।

राघोदासजी का जन्म सत्रहवीं सदी के उत्तरार्द्ध का होना चाहिये। वे सत्रहवीं सदी के अन्तिम चरण में हरीदासजी के शिष्य हुये हैं। उनकी रचना का काल अट्ठारहवीं सदी है। राघोदासजी ने दादूजी की परम्परा में शिष्यों तथा पोता-शिष्यों का भक्तमाल में वर्णन किया है। इससे सिद्ध होता है कि उनके जीवन-काल में जो प्रशिष्य मौजूद थे, उन्हीं तक का निरूपण भक्तमाल में आया है।

वे किस सम्वत में किस स्थान में उत्पन्न हुये? यह ज्ञात नहीं होता। प्रह्लाददासजी महाराज घाटडेव में विराजते थे, वहीं उनकी चरणपादुका व छत्री आज भी मौजूद है। यह स्थान पहिले अलवर स्टेट में था, अब वह शायद अलवर

जिले में सम्मिलित हो। राजगढ़ से रहले तथा रहले से घाटडे जाया जाता है। अब भी घाटडे में प्रह्लाददासजी महाराज की परम्परा का मान्य स्थान है, जिस परम्परा में इस समय महन्त आशारामजी विद्यमान हैं।

प्रह्लाददासजी के कई शिष्य हुये थे, उन्हीं में प्रमुख थे हरिदासजी महाराज। इन्हीं के अनेकों शिष्यों में अन्यतम शिष्य राघोदासजी हुये हैं। ये पीपावंशी चांगल गोत में उत्पन्न हुये थे। इनके पिता का नाम हरिराज तथा माता का नाम रतनाई था। शायद इनकी बहन का नाम केसीबाई था। इन्हीं की प्रेरणा से इन्होंने शिकार तथा मद्य-मांस का परित्याग किया था, जैसा कि इनने स्वयं उल्लेख किया है :—

नमो तात हरिराज नमो रतनाई माई।
जीव वध मद मांस छुडायो केसीबाई।
सत संगति गति ग्यांन ध्यांन धुनि धर्म बतायो।
हरीदास परमहंस परष पूरो गुरु पायो॥
राघो रज मो पायकै रामरत उमग्यो हियो।
दादूजी के पंथ को तव ही तनक वर्णन कियो॥३५॥

चौपाई **पीपावंशी चांगल गोत। हरि हिंरदै कीनौ उद्योत॥**
भक्तिमाल कृत कलिमल हरणी। आदि अन्त मध्य अनुक्रम वरणी॥
साध संगति सति स्वर्ग निसेणी। जन राघव अगतिन गति दैणी॥

उक्त संदर्भ से उपरोक्त विवरण की पुष्टि होती है। राघोदासजी घाटडे से फिर "उदई" ग्राम चले गये थे। वहीं उनका समाधि-स्थान है। राघोदास जी के पश्चात् उनकी परम्परा में महात्मा कुञ्जदासजी सिद्ध पुरुष हुये। करोली नरेश उनमें अत्यन्त श्रद्धा रखते थे। करोली में महाराज कुञ्जदासजी का स्थान आज भी 'कुञ्ज' के नाम से प्रसिद्ध है। कुञ्जदासजी के पश्चात् राघोदासजी की परम्परा का स्थान करोली में ही आ गया। 'उदई' की जमीन आदि सब अब इसी स्थान के अधीन है। वर्तमान में, राघोदासजी की परम्परा का यही स्थान है। महाराज करोली ने एक ग्राम भी कुंजदासजी महाराज को समर्पित किया था, जो राजस्थान के एकीकरण होने से पहिले तक 'कुंज' के महन्तजी के अधिकार में था।

महाराज राघोदासजी अच्छे सुशिक्षित व कवि-गुणों से विभूषित थे—यह उनकी रचना से स्पष्ट है। उन्होंने महाराज प्रह्लाददासजी की प्रेरणा से प्रेरित हो "भक्तमाल" की रचना की थी, जैसा कि टीकाकार चत्रदासजी व्यक्त करते हैं:—

मनहर अग्र गुरु नाभाजू कुं आज्ञा दिन्ही कृपा करि,
प्रथम ही साषी छपै कीन्ही भक्तमाल है।
तैसे ध्रु प्रहलादजु विचार कही राघो जु सौं,
करौ सन्त-आवली सु बात यौ रसाल है।
लई मान करी जान धरे आन भक्त सब,
निर्गुण सगुण षट-दरशन विशाल है।
साषी छप्पै मनहर इन्दव अरेल चौपे,
निसानी सवईया छंद जान यौं हंसाल है॥

राघोदासजी ने भक्तमाल की समाप्ति पर कालज्ञापक दोहा भी लिखा है—

दोहा सम्वत् सत्रहै सै सत्रहोतरा, शुक्ल पक्ष शनिवार।
तिथि तृतिया अषाढ़ की, राघो कियो उचार॥

सत्रह सै सत्रोहतरे से १७७७ तो स्पष्ट प्रतीत होता है। पुरोहित हरिनारायणजी ने 'सुन्दर ग्रन्थावली' की भूमिका में सत्रह सो सत्रोहतरे को १७७० माना है। मेरी समझ से १७१७ ही अधिक उपयुक्त है, क्योंकि भक्तमाल में प्रशिष्यों तक का ही उल्लेख है। १७७० सम्वत् यदि भक्तमाल की रचना का हो, तो तब तक तो प्रशिष्यों के भी प्रशिष्य हो गये थे। भक्तमाल का रचनाकाल अट्ठारहवीं सदी का प्रथम चरण ही संगतिपरक है।

राघोदासजी ने भक्तमाल से भिन्न वाणी तथा लघु ग्रन्थों की भी रचना की है। उनकी वाणी में साषी, अरिल तथा पद भाग हैं। पद अंगों में १६३७ साषियें हैं। अरिल के १७ अंग हैं, तीन सौ सत्तर अरिल हैं। राग २९ में १७९ पद हैं। लघु ग्रन्थावली में, १ हरिश्चन्द्र सत, २ ध्रुव चरित्र, ३ गुरु-शिष्य सम्वाद, ४ गुरुदत्त रामरज, ५ पन्द्रहा तिथि विचार, ६ सप्तवार, ७ भक्ति जोग, ८ चिन्तामणि ज्ञान निषेध है। १३ अंग कवित्तों के हैं, जिनमें करीब सवा-सौ कवित्त हैं।

भक्तमाल से भिन्न रचनाओं के कुछ उद्धरण नीचे दिये जाते हैं, जिनसे राघोदासजी के रचनाकार के रूप का और भी विशद परिचय प्राप्त होगा:—

वाणी अंग साषी भाग

साध महिमा अंग

गगन गिरासी विमल चित, अजर जरावण हार।
जन राघो वे सन्त जन, छन्द मुक्ति संसार॥४॥

पारस रूपी पादुका, चम्बक रूपी बैन।
राघो सुनि मृतक जिये, भागे मिथ्या दैन ॥५॥
मृतक लोचें (?) मुनि भजै, देव करें आराध।
जन राघो जगपति खुसी, भक्ति उजागर साध ॥६॥

अंग विरक्तताई

जे जन आसाजित भये, ता जन कौ जुग दास।
राघो जे आसा सुरत्त, ते करहिं जगत की आस ॥६॥
आसा तृष्णा जिन तजी, जे त्रिभुवन पुजि पीर।
राघो शोभित अति खरे, हरि सुमरण कंठ हीर ॥८॥
इन्द्रीजीत विज्ञान में, हृदै रह्यौ हरि पूरि।
जन राघो रुचि राम सौं, माया निकट न दूरि ॥१२॥

शब्द को अंग

वह पुदगल वह प्रांण मन, वह नख नासा नैन।
हाथ पांव पलटै नहीं, राघो पलटै वैन ॥३॥
शब्दै हुं निपजै साध, शब्द सु सेवग सीझिंहि।
राघौ शब्द सु वस्तु, शब्द सु साहिब रीझिंहि ॥१०॥
राघो बोलत परखिये, बोल मनुष को मोल।
इक मुख तें मोती झर्डहि, इक मुख सेती टोल ॥१७॥

उपदेश को अंग

धर्म बडो धर ऊपरै, जे करि जांणै कोइ।
राघो जग में जस रहै, हरि दर कष्ट न होइ ॥ ३॥
आसा भंग अतीत की, गृह आये जे होइ।
राघो सुकृत ले गयै, अकृत जाइ समोइ ॥१५॥
सत सुकृत दोऊ बडे, सत तैं बडो न कोइ।
राघो सत तप रूप है, सत तैं सब कुछ होइ ॥१८॥
भौ जल सिन्धु अगाध है, बूडत अदत अकाज।
राघौ धन धर्मात्मा, बान्धी धर्म की पाज ॥२०॥

राघोदासजी को वांणी

कलजुगो को अंग

अरिल
कलजुग कठिन कठोर न कसकै पाप सौं।
सुत शैतान्यां करै अवश मां बाप सौं॥
चेला गुरु सु गुप्त दुरावैं दांम रे।
परि हाँ! राघौ छांडी रीति मिलें क्यों राम रे॥ १॥
कलि अपने बल जीति राज अपनो थप्यो।
तिन सौं वैर प्रसिद्ध राम जिन जिन जप्यौ॥
हरिजन हरि की ओट सबल कै आस रे।
परि हाँ! राघो कलि कै रोर न आवै पास रे॥ ४॥
कलि केवल हरि नाम रटत रोजी मिलै।
विघ्न दोष दुख दुमति होत विग्रह टलै॥
और जुगनि मधि जोग जाप जप तप सरे।
परि हाँ! राघो कलि मधि राम जपत नर निसतरै॥ ६॥
पाखंड प्रपंच भूठ कपट कलि मैं घनो।
अदेख्यो अहंकार वहौत कहां लग गिनौं॥
परनिन्दा परद्रोह छिद्र पर नित तकै।
परि हाँ! राघो राम विसारि अधम आनहि वकै॥१०॥

चितावणी को अंग

कोडीधज वाजार वैठते वांणियें।
दुनियादार सराफ जगत मैं जाँणिये॥
हीरा मोती लाल मुहर थेली भरी।
परि हाँ! राघो नाँवै काम काल वरियाँ तुरी॥ ३॥
कर कछु नेकी नीति बदी बेराह तजि।
परवरदिगार खुदाइ प्रेम परिपूर भजि॥
करि लै खूवी खैर दुनी है पेखनाँ।
परि हाँ! राघौ दोजख भिश्त यहाँ ही देखना॥१२॥
राम विना सब धन्ध अन्ध कछु चेत रे।
तन मन धन सर्वस्व अर्प हरि हेत रे॥

आंन धर्म दिन चारि इरंड कौ मौरनो।
परि हाँ ! राघो किती बुनियाद वांन कौ दौरनो ॥१६॥
यह चहल पहल दिन चारि दुनी की चिलक है।
कनक कामनी रूप कांम की किलक है॥
जन राघो रुचि राग कुरंग उर सर सह्यौ।
परि हाँ ! एसै जग की अग्नि अज्ञानी नर दह्यौ॥२६॥

न्यायमार्गी अङ्ग

हिन्दू के हद वेद रहै मर्याद मैं।
खंडै न खोटो खाय वस्त नहिं वाद मैं॥
तज असार गहि सार रांम रस पीजिये।
परि हाँ ! राघो जुक्ति विचारि जोग जिग कीजिये॥४॥
मुसलमान मुस्ताक सरै कै हक चलै।
हाथ न छुवै हराम रहै उजले पलै॥
हक हलाल टुक खुर्दनी जिकर फिकर विसियार।
परि हाँ ! राघो खडा रहीम दर बन्दा है हुशियार॥५॥

ज्ञान उपदेश को अङ्ग

जैसी संगति करै तिसे फल आखिर पावै।
कहत सयाने साध साषि पुनि आगम गावै॥
जांण पडही मति जगत मैं जाग भागि जिन ब्है सतौ।
परि हाँ ! राघो रहो रुचि रांम सूं रैण दिवस धरि द्रढ़ मतौ॥५॥
ग्यानी गुण की रास निर्गुण सौं व्है रहे।
गहै शील सन्तोष कांम क्रोधहि दहे॥
खिभै न रीभै चाह चित्र को पेखणौ।
परि हाँ ! राघो हर्ष न शोक तमासौ देखणौ॥११॥

धर्म कसौटी को अङ्ग

षलक खूब दिन दोइ सुनो सब लोइ रे।
तन धन अपना नांहि विछोहा होइ रे॥
सत करि सुणवे जोग यहै इतिहास रे।
परि हाँ ! राघो वित उनमान बांटियो गास रे॥२॥

नर तन पाइ उपाइ यहै गुरु बूझिये।
तजि भूतागति भर्म धर्म कछु कीजिये॥
सुजस रहै संसार अगम आदर घणौ।
परि हाँ! राघौ करै निहाल इष्ट भज आपणौ॥५॥

विमुख जान जिन देहु अतिथि गृह वार थे।
टूक गास घटि खाउ स्वकीय अहार थे॥
सत मैं सु सत वांटि सत्य हरि राखि है।
परि हाँ! जन राघो धर्मराइ धर्म की साषि है॥१२॥

पद – राग-रामगिरी

त्राहि त्राहि त्राहि नाथ हाथ गहो दास कौ।
भीर परै धीर धरो टेरूं विरद तास कौ॥टेक॥
काम क्रोध लोभ मोह गर्जत बजाये लौह,
भूलि गयो ग्यांन ध्यांन मारै डर तास कौ॥१॥
त्रिगुण त्रिदोष भर्म प्रेरिकै करावे कर्म,
काल यौं पसारे गाल करनहार नाश कौ॥२॥
राघौ यौं पुकारे राम याही डर आठों जाम,
पारै सो न मारै हौं तौ पारचौ तेरे गास कौ॥३॥

राग—टोडी

सकल शिरोमणि नांव जरी।
ज्यौं घसि लावै त्यौ सुख पावै, घट ही मांहे रहत परी॥टेक॥
ज्यां सेती मृतक मुख बोल, अमृत गुणां भरी॥
भाखत चिन्त रहे नहिं कबहूँ, आतम होत हरी॥१॥
पांचो तत्त तीनों गुण तांतू, महौकम गांठ परी॥
खोले सोई सपूत शिरोमणि, पावत वस्त षरी॥२॥
बैठि इकान्त प्राण जध राखै, निस-दिन साचि धरी॥
राघौ कहै लहैं सोई गुरगमि, सुक्षम सुलभ खरी॥३॥

राग—आसावरी

हरि परदेश हूँ काहे देऊँ पाती, कोई न मिलै एसा सजन संगाती॥टेक॥
हा! हा! करि करि हौं हरि हारो, कोई न कहै मोहे वात तुम्हारी॥१॥
आरति अजक बहुत उर मेरे, अहोनिस निस चात्रक ज्यूं टेरे॥२॥

मो उर करंक काठ ज्यूँ वीझै, का जाणौं हरि का विधि रीझै ॥३॥
जन राघो विरहनी विललावे, थाकी रसना रांम कब आवै ॥४॥

राग-नट नारायण

अब तौ आई बनी जिय मेरे !
चित चकचाल काल के डर तैं, कर्म दसौं दिस फेरै ॥टेक॥
त्रिगुणधार पार परमेश्वर, चौथे गुण थै नेरे ॥
दीनानाथ हाथ दै अबकै, करुणा करि करि टेरै ॥१॥
भयो भैकंप स जौनी सुनि कै, दइया न्याव नवैरै ॥
दाँवणगीर दर्द नहिं समझे, लगे ही रहतु है कैरे ॥२॥
परिहरि पाप परमारथ कर लै, जो कछु हाथि है तेरे ॥
विन जगदीश जक्त मधि जोख्यौ, जैहै जम के डेरे ॥३॥
तीनों लोक सकल जल थल मधि, बंधे जीव मैं मेरे ॥
राघोदास राम अघमोचन, रट ज्यौं तोहि निवैरे ॥४॥

राग-सारंग

ऐसो राम गरीबनिवाज है !
भक्तवत्सल सरणाई समरथ, सारण जन कै काज है ॥टेक॥
आदि अन्त मधि अखंड अहोनिशि, अनन्त लोक जा कौ राज है।
सुर नर असुर नाग पशु पंछी, देत सबनि जल नाज है ॥१॥
रिधि सिधि भक्ति मुक्ति कौ दाता, पूर्णब्रह्म जहाज है।
निर्बल को बल निर्धन को धन, वहत विरद की लाज़ है ॥२॥
कर्त्ता पुरुष अनातम आतम, सन्तन मध्य समाज है।
राघौ तन मन करि नौछावर, मिलन महातम आज है ॥३॥

राग मलार

मौज महाप्रभु तेरी हो !
खानांजाद इन्द्र से अधिपति, अष्ट सिधि नव निधि चेरी हो ॥टेक॥
तीन लोक ब्रह्मांड पचीसौं, एक शब्द सर्व साजे।
सुर नर नाग पुरुष मुनिपतनि, रचि रचि रूप निवाजे ॥१॥
सूरति अनन्त सुभाव सुरति अति, शब्द भेद बहु वांणी।
मूर्ख चतुर निर्धन धनवन्त किये, करता पुरुष विनांणी ॥२॥

चतुरासि लषि सिरजि चराचर, रिजक सबनि कौ मेलै।
व्यापक ब्रह्म सकल जल थल मधि, जीव सीव संग खेलै ॥३॥
विधि शंकर सनकादिक नारद, भक्त पारषद संगी।
त्रिगुण रहित त्रयकाल कला अति, तारणतिरण त्रिभंगी ॥४॥
चार वेद चहुँ जुग जस गावत, पावत पार न कोई।
राघौदास सुमरि निसवासर, यौं विन मुक्ति न होई ॥५॥

राग-मारू

वचन वसे हिरदै गुरु कै।
परा परी वायक उन्नायक, कहे हुते धुर कै ॥टेक॥
षट्दल चतुर अष्ट दश द्वादश, षोडस उभै मुहुर कै।
ग्यांन ध्यांन उनमान आपणैं, हरि हरि कहत निधरकै ॥१॥
अमृत भई अचानक अन्तर, अघ मेटे उर के।
सोई अब साषि राषि मन मांही, दास भये वा घर के ॥२॥
राम रमापति सुमर रैंण दिन, भ्रम भंजन भव तर के।
राघौ हाथ गहे उन हित करि, भाग उदै भये नर के ॥३॥

राग-सोरठि

हरि अब अवधि पूगी आव !
काम निकल नहीं तुम विन, राखि बूडत नाव ॥टेक॥
महा विपति विदेश सांई, रहत चिन्ता ताव रे।
मो अनाथ अतीतनी पर, करो राम पसाव ॥१॥
तरस मेटौ आइ भेटौ, विरहनी ऋतु दाव।
पीव पावन जीव कीजे, परौं तेरे पाव ॥२॥
पपीहरा ज्यौं प्राण टेरे, अखंड एकै लाव।
दास राघौ करै विनती, सुनि विश्वंभर राव ॥३॥

हरीश्चन्द्र सत

मनहर
विश्वामित्र चले जब हरिश्चन्द्र वेचन को,
अजक अयोध्यापुरी नावं द्रष्टि देखनौ।
राह मधि राहो कीन्हौं काल व्है कसौटी दई,
अमित अगाध दुख नावै लिखि लेखनौ ॥

बैर कियो विश्वामित्र विष्णुजी की आज्ञा पाय,
त्राहि त्राहि त्राहि नाथ तीनौं लोक पेखनो ।
राघौ कहै राम काम एसी विधि कीजिये तु,
कासी कै नखासै विकै विप्र विण धेकनो ॥३०॥
राजा मोल लीयो काल दमन ही नामा डौम,
कहर कसौटी नाम लेत लाज मरिये ।
जाचक के द्वार जल भरवायो हरिचन्द,
धरम-धुरीण वैसे आलोकन करिये ॥
छितभुज छेत्रन को राख्यो रखवारो वनि,
माया मौंण माथे धरि सन्ध्या प्रात भरिये ।
सेर चून पावे समसान भूमि भोजन व्है,
राघौ अवगति गति सेति ऐसे डरिये ॥३५॥
तक्षक भये हैं ततकाल विश्वामित्र मुनि,
राघौ चढि रूख रोहितास वन डस्यो है ।
जाकै जी मैं कसर कटाक्ष नांही कामना की,
को जानें कर्त्तार गति काहे कौं धो कस्यौ है ॥
बालक विलाप करै तो वा त्रयलोक नाथ,
धर्म की जहाज बूडी ऐसौ ज्ञानी ग्रस्यौ है ।
बोल्यौ रोहितास जिन रोवो मुनि मेरी सोंह,
पाहुणै सों देख पेख काको घर वस्यौ है ॥४३॥
कंचन किरच सुमेरु को, सापर सरवा नीर ॥
सूरज वाती ससि दसी, कल्पवृक्ष चव चीर ॥
इकलव गिरा गणेश को, वाणी र वारतोक ॥
पित्रण कुं जल अंजियाँ, देवन फूल पतीक ॥
यों रघवाने रंचक कथ्यो, गुण हरिचंद हेट अनेक ॥
सब कवि पंडित सुरता सुघर, सुन कीजो छमा छनेक ॥६४॥

ध्रुव चरित्र

इन्दव ध्रुव की जननी ध्रुव को समझावत रोवे कहा रटि राम धणी कों ।
केतौक राज कहा नृप आसन का पर तूं कर मेलब नीकों ॥

यह साल मिटै ततकाल करौ तप मृतक व्है सुत धाम धनी कौ ।
राघो कहे कुल की ममता तजि ग्यांन के खडग सूं मार मनी कौ ॥६॥

मनहर	लग गयो राम रंग रघवा रिजक मधि,
कंवर कलेश तजि ग्यांनी गच्छयो वन कों ।
मंत्रिन सुनायो जाय नृपति सौं ततक्षण,
ध्रुव वन चल्यौ कहा हुकम है हम कों ॥
राजा पूछी रांणी उन वात जानीं हँसी खेल,
दो दो सेर अन्न दे संतोषो वाके मन कों ।
एतै पर ध्रूनें कही द्वार ही पें दून भई,
धन धन धन जगदीश दियो जन को ॥११॥

इन्दव	ध्रूनें कही नृप सौं कर छाडिये मैं मरिहौं अपघात को आयो ।
सेरहू नाज में फेर करी तुम देन लगे अब राज सवायो ॥
ता वेर क्यौं न विचार कियो तुम गोद में से गदका दे उठायो ।
राघौ गच्छयौ ध्रुव राम के काम को आप रह्यौ रुप बाप झुठायो ॥१७॥

मनहर	लियो पथ पंचमास फल मूल पानी पौन,
छठै मास संयम संतोष मन मारचौ है ।
जप नेम प्राणायाम आसन आहार द्रढ़,
प्रत्याहार धारणा समाधि ध्यान धारचौ हैं ॥
माया छलवे को छलबल बहौतेरे किये,
पच रही रैंण-दिन रोमहू न टारचौ है ।
राघौ तब भेटे रांम मन वच कर्म करि,
ध्रू को दीजै राज आज वा वे यौं विचारचौ है ॥२३॥
रामजी नै राज दियो रामजी बनायो साज,
धन तप ध्रू कौ आज भवन पधारे हैं ।
अष्ट सिद्धि नव निधि आय जुरी सारी विधि,
समर्थ धणी नैं एक सेर-सों वधारे है ॥
गरीवनिवाज नैं गरीब जान दाद दई,
राम रथ बैठ हलके सें भये भारे हैं ।

तात मात भ्रात कुल कुटुम्ब छतीसौं पौंन,
राघौं गनि धूनें सब ही कै काज सारे हैं ॥३५॥

ग्रन्थ करुणा-वीनती

इन्दव ब्रह्मा शिव शेष गणेश नमो सनकादिक नारद पाँय परौं।
प्रणाम कहौं परमेश्वर सौं जिन छाडहू नाथ अनाथ डरौं॥
हरि मैं गुलमा सुनि हौं वलमां तुम को दे पीठ यों गात गरौं।
कर्त्तार पुकार लगौं अब कै जन राघौं कहै शरणं उबरौं ॥१॥
हा! हा! धनी दुख देत गनी तुम ही तुम एक अधार हौ मेरे।
जानत हौ परवेदन की परमेश्वरजी प्रभु न्याव है तेरे॥
जोर करे जिन को समझावहु साहबजी चढ़ि सांक कै केरै।
राघौ अनाथ अतीत की हे हरि भीर परे भगवन्त निवेरै ॥४॥
कौन उपाय करौं हरिजी वरजो न रहें मनसा विगरानी।
भ्रमित अभक्ष अहार अहोनिशि नीच क्रिया करि पीवत पांणी॥
धर्म कै पंथ में पांव धरे नहिं पाप की गैल फिरै फहराणी।
राघौ कहे विपरीत विकारणि चाल कुचाल मिथ्या मुख वांणी ॥१४॥

मनहर बन्दगी तुम्हारी बीच अन्तर करत नीच,
जानत हो जानराय कहूं कहा टेरि कै।
मोह करै द्रोह गति काम की कटाक्ष अति,
क्रोध वडौ जोध जुग लोभ मारै हेरि कै॥
मैं तो रावरो गुलाम वीनती सुनो हो राम,
पारत है मेरी मांम दशो-दिशि घेर कै।
रघवा दुरयौ है भाजि शरणैं तुम्हारै राजि,
दीनबन्धु दीन जान राखल्यौ निवेरि कै ॥१८॥

इन्दव भीर परे भगवन्त भली विधि देहु यहै तुम को न विसारै।
जाव शरीर सवै धन सर्वस जो जिये थैं जगदीश न टारै॥
खार अनी वहनी विषहू विष पत्र म परे कहूँ धर्म न हारै।
रघवा सिदकै कियो साहबजी वरिया शत सहस्त्रहू प्राण तुम्हारे ॥२१॥

मनहर कामरी कै भौरे हाथ मेल्यौ दीनानाथ जी मैं,
मैं ते माया मोह द्रोह रींघ घट घेरो है।

पूजन ही आवत हू अब पछतावत हूँ,
मै तो मानी हार हरि मारग मै पैरो है ॥
भगतवछल भगवन्त नहिं लेहु अन्त,
ऊवरौं न और ठौर एक बल तेरौ है।
रघवा विचारो रंक मन में अत्यन्त शंक,
राम भरि लेहु अंक काल आयो नेरौ है ॥३६॥

ग्रन्थ चितावणी

इन्दव　समये सुमरयो नहिं राम धणी सु घणी जम की तन त्रास सहेगो ।
आठ र वीस में शीश ज्यूं सूम को दै दशहू दिशि आग दहैगो ॥
जोजन द्वादश घाट घरै को सौ ता मधि मूरख मूरि मरैगो ।
राघौ कहै निगुरेनि गुसांइ को आवत ही जम कंठ गहैगो ॥१॥
मैं मन देख्यो महा निरपत्रप एक रती हू त्रिया नहिं ताकै ।
प्रेत ज्यों प्राण को नाच नचावत कामना सूं कबहू नहिं थाकै ॥
इन्द्रिन द्वार अनीति करै अति पापि परनारि परद्रव्य को ताकै ।
राघो कहै अपस्वारथ सौं रुचि प्रीति नहीं परमारथ नाकै ॥७॥

कवित्त अङ्ग संगति को

मनहर　दास की पूरण आस संगति करै निवास,
पाप ताप होत नाश गहै गुणसार जी।
पाय है परम सुख रांम नाम जाकै मुख,
वीसरै न एक चुख प्राणन आधार जी ॥
सोई जन जाकै तन नांव सौ रहै लगन,
घर वन राखै मन सोई स्वामी कार जी ।
राघो गुरु-मंत्र अति राखै रैंण-दिन रति,
सुमरि सुमरि सिध साध भये पार जी ॥३॥

गुरुसिख सम्वाद ग्रन्थ — शिष्य वचन

चौपई　नमो नमो मम गुरु सत स्वांमी । देव निरंजन अन्तर्यामी ॥
आनन्दरूप महा सुखसागर । सदा मगन हिरदै हरि नागर ॥१॥
तुम भजनीक परम ततवेत्ता । स्वामी कहि समझावो एता ॥
वर्त्तमान अति विकट गुसांई । कैसे करि रहिये या मांई ॥७॥

गुरु-वचन

धर्म विना धरती सकुचानी। धर्म बिना घट बरसै पांणी॥
धर्म विना कलि मैं घन थोरा। राजा लोभी दुष्ट डंडोरा॥२१॥
परजा चोर चुगल विसतारी। साचे हू को मुशकिल भारी॥
मंत्री दुष्ट करावण मूढ़ा। परजा कै ल्यै दोऊ कूढ़ा॥२२॥
काचे जती कलेश न त्यागै। करै मोह माया सूं लागै॥
कलि में कल सौं वरतत रहिये। सनै सनै सत-संगति गहिये॥२४॥
साकत को अन्न पान न लीजै। हत्याकार ठै पाँव न दीजै॥
नुगरा नर को अन्न रु पांणी। लियाँ होय क्षय बुधि अरु वांणी॥
अब कछु बात कलू मैं नीकी। सो तूं सुन सिख जीवन जीकी॥
नाँव लेत नरक न जाई। और जुगन सूं या अधिकाई॥२७॥
एसो नाँव कलू में राख्यौ। शुक मुनि परिक्षत सौं यूं भाख्यौ॥
जिहिं वन सिंह सहज मैं गाजै। जंबुक सुनत जीव ले भाजै॥३०॥

राघौ आघो सुण सरचौ, सुन सतगुरु कै वैन॥
ह्लदै कमल मधि कर्णिका, तहां हेरि हरि सैन॥३२॥

ग्रन्थ-उत्पत्ति-स्थिति चिंतामणि—दोहा चौपाई में—समाप्ति स्थल

दोहा श्रीहरि श्रीगुरु सों कही, सो श्री गुरु कहि मुझ।
रघवा रंचक गम भई, श्रीगुरु पै पायो गुझ॥३६४॥
ब्रह्मा व्यास वशिष्ठ दिग, वालमीक शुक सूत।
ब्रह्मसुता शंभुसुवन, गुणग गवरि को पूत॥३६५॥
रवि रविसुत को मान गुण, उपगारी शिव शेष।
इन मिलि मोहे आज्ञा दई, रटि राघव राम नरेश॥३६६॥
कहि उत्पति स्थिति कथा, सकल बतायो भेव।
जन राघौ कै हिरदै वसै, श्री हरीदास गुरुदेव॥३६७॥
याहि वांचि सीखै सुनै, गुण ते उपजे ज्ञान।
राघौ यौं रामहि रटै, धरै निरन्तर ध्यान॥३६८॥
कवि कोविद पंडित मिसर, सुनि जनि डाटहु मोहि।
मम वांणी बालक वचन, जनि कोई मानो द्रोहि॥३६९॥

॥ इति ॥

राघवदास की भक्तमाल—

यद्यपि नाभादास की भक्तमाल के अनुकरण में ही राघवदास ने अपनी भक्तमाल बनाई, पर, एक तो यह उससे काफ़ी बड़ी है और दूसरा इसमें ऐसे अनेक सन्त एवं भक्तजनों का उल्लेख है, जिनका नाभादास की भक्तमाल में उल्लेख नहीं है। कवि राघवदास दादूपन्थी सम्प्रदाय के थे, इसलिए उक्त सम्प्रदाय के सन्तजनों का विवरण तो इसमें विशेष रूप से दिया ही गया है और इसमें मुसलमान, चारण आदि ऐसे अनेक भक्तों का विवरण भी है, जिनके सम्बन्ध में और किसी भक्तमालकार ने कुछ भी नहीं लिखा है। इसलिये इस भक्तमाल की अपनी विशेषता है और यह ग्रन्थ बहुत ही महत्वपूर्ण है।

डॉ० मोतीलाल मेनारिया ने अपने 'राजस्थान का पिंगल-साहित्य' नामक शोध-प्रबन्ध में इस ग्रन्थ का महत्व बतलाते हुये लिखा है कि "यह ग्रन्थ नाभादास की भक्तमाल की शैली पर लिखा गया है, पर उसकी अपेक्षा इसका दृष्टिकोण कुछ अधिक व्यापक और उदार है। नाभादास ने अपने भक्तमाल में केवल वैष्णव भक्तों को स्थान दिया है। परन्तु, इन्होंने दादूपन्थी सन्तों के अतिरिक्त रामानुज, विष्णुस्वामी, कबीर, नानक आदि अन्य मतावलम्बियों का भी विवरण दिया है और यह इसकी एक प्रधान विशेषता है। यह ग्रन्थ बहुत प्रौढ और उपयोगी रचना है।"

वृन्दावन से प्रकाशित श्री भक्तमाल ग्रन्थ के पृष्ठ ९५८ में लिखा है कि इस भक्तमाल में चतुस्सम्प्रदायी वैष्णव भक्तों के साथ सन्यासी, जोगी, जैनी, बौद्ध, यवन, फकीर, नानकपन्थी, कबीर, दादू, निरंजनी आदि सम्प्रदायों के भक्तों का भी उल्लेख है।

स्वामी मंगलदासजी ने राघवदास की भक्तमाल की विशेषता के सम्बन्ध में लिखा है कि "इसमें सगुण भक्तों के वर्णन के साथ-साथ निर्गुण भक्तों का भी निरूपण किया गया है।" उक्त ग्रन्थ में इसका रचनाकाल सम्वत् १७७७ बतलाया गया है, पर वास्तव में "सत्रोतरा" शब्द से १७ की संख्या लेना ही अधिक संगत है।

राघवदास व उनकी रचनाएँ—

राघवदासजी का विशेष परिचय प्रयत्न करने पर भी प्राप्त नहीं हो सका। इस ग्रन्थ की प्रशस्ति के अनुसार वे दादूजी के शिष्य बड़े सुन्दरदासजी, उनके शिष्य

प्रह्लाददासजी के शिष्य हरिदासजी के शिष्य थे। राघवदास की रचनाओं में उनकी बाणी, १, (अंग १७), साखी भाग, २, (सा० १६३७), अरिल ३७०, ३, (पद १७६ राग २६), ४, लघु ग्रन्थ २० (छन्द ५०४)५, ग्रन्थ उत्पत्ति, स्थिति, चितावणी, ज्ञान, निषेध, (छन्द संख्या ४००-७२) की सूचना स्वामी मंगलदासजी ने दी है। भक्तमाल काफी प्रसिद्ध ग्रन्थ है ही। करौली में उनकी परम्परा का स्थान है।

मंगलाचरण के ७ वें पद्य में राघवदासजी का भी वर्णन है। प्रस्तुत ग्रन्थ के पृष्ठ २४० में राघवदास के गुरु, बाबा गुरु, काका गुरु, गुरु भ्राता आदि का विवरण भी उन्होंने दिया है। उन पंक्तियों की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया जाता है।

टीकाकार चतुरदास—

प्रस्तुत भक्तमाल के टीकाकार चतुरदास हैं। संवत् १८५७ के भादवा वदि १४ मंगलवार को उन्होंने यह टीका बनाई। प्रशस्ति में उन्होंने नारायणदास की भक्तमाल को देखकर राघवदास ने भक्तमाल बनाई और प्रियादास की टीका को देखकर चतुरदास ने इन्दव छन्द में इस टीका की रचना की, लिखा है। अपनी परम्परा बतलाते हुये वे अपने को संतोषदास के शिष्य बतलाते हैं। प्रारम्भ में भी दादू के बाद सुन्दर, नारायणदास, रामदास, दयाराम, सुखराम और संतोष नामोल्लेख किया है।

चतुरदासजी की अन्य किसी रचना की जानकारी नहीं मिली। स्वामी मंगलदासजी ने दादूद्वारा, रामगढ़ के महन्त शिवानन्दजी से विशेष जानकारी प्राप्त करने के लिये लिखा था, उन्हें पत्र भी दिया गया और "वरदा" के सम्पादक श्री मनोहर शर्मा को भी चतुरदासजी सम्बन्धी विशेष जानकारी उनसे प्राप्त कर भेजने के लिये लिखा गया, पर सफलता नहीं मिली।

इस तरह यथा-साध्य लम्बे समय तक प्रयत्न करने पर भी जो सामग्री प्राप्त नहीं हो सकी, उसके लिये विवशता है। खोज चालू है, अतः फिर कभी प्राप्त होगी, तो उसे लेख द्वारा प्रकाशित की जायगी। चतुरदासजी की टीका में मूल ग्रन्थ की अपेक्षा विशेष और नई जानकारी भी है, इसलिये इस टीका की महत्ता स्वयं सिद्ध है।

ग्रन्थ के अन्त में मूल भक्तमाल और टीका में आये हुये नामों की सूची देने का विचार था, जिससे इस ग्रन्थ में कितने सन्त एवं भक्तजनों का उल्लेख हुआ

है, उसकी जानकारी मिल जाती। पर उन नामों की अधिकांश सूचना आगे विस्तृत अनुक्रमणिका में दे ही दी गई है, इसलिये अन्त में नामानुक्रमणिका देने की उतनी आवश्यकता नहीं रह गई।

चतुरदास ने मंगलाचरण में राघवदासजी का वर्णन करते हुवे ठीक ही लिखा है कि इसमें सन्तों का यथार्थ स्वरूप बहुत थोड़े में कह दिया गया है :—

सन्त सरूप जथारथ गाइउ, कीन्ह कवित्त मनूं यह हीरा।
साध अपार कहे गुण ग्रन्थन, थोरहु आंकन में सुख सीरा।
सन्त सभा सुनि है मन लाइ र, हंस पिवे पय छाडि र नीरा।
राघवदास रसाल विसाल सु, सन्त सबे चलि आवत करा॥

प्रस्तुत ग्रन्थ का सम्पादन और प्राप्त हस्तलिखित प्रतियाँ—

करीब १५-२० वर्ष पहले की बात है, मेरे विद्वान् मित्र श्री नरोत्तमदासजी स्वामी के पास स्वामी मंगलदासजी के यहाँ से लाई हुई राघवदास के भक्तमाल की टीका सहित प्रेस कापी मुझे देखने को मिली। मुझे वह ग्रन्थ बहुत ही उपयोगी और महत्त्व का लगा इसलिये उसकी प्रतिलिपि मैंने उसी समय करवा ली। तदनन्तर स्वामी मंगलदासजी को प्रेरणा दी कि वे इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ को शीघ्र ही प्रकाश में लावें। पर उन्होंने कहा कि इसके प्रकाशन का प्रयत्न किया गया, पर अभी तक कहीं से कोई भी व्यवस्था नहीं हो पाई। इसके कुछ समय बाद मुनि जिनविजयजी से मैंने इस ग्रन्थ के प्रकाशन की चर्चा की और उन्होंने राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान की ग्रन्थमाला द्वारा इसे प्रकाशित करना स्वीकार कर लिया। मैंने उन्हें अपनी करवाई हुई प्रतिलिपि को भेज दिया और प्रेस की व्यवस्था भी कर दी गई। फर्मा कम्पोज भी हो गया, इसी बीच मुनिजी ने पुरोहित हरिनारायणजी के संग्रह में इसकी दो महत्वपूर्ण हस्तलिखित प्रतियाँ देखी, तो उनका आदेश हुआ कि उन प्रतियों के आधार से पाठ-भेद सहित उसका पुन: सम्पादन किया जाय, क्योंकि स्वामी मंगलदासजी वाली प्रेस-कॉपी में हस्तलिखित प्रतियों में प्राप्त पाठ से कुछ भिन्नता थी।

प्राचीनतम प्रति—

मुनिजी के आदेशानुसार गोपालनारायणजी बहुरा द्वारा पुरोहित हरि-नारायणजी के संग्रह की उपरोक्त दोनों प्रतियों को प्राप्त करके उनमें से जो प्रति

सबसे प्राचीन थी, उसकी नकल करवा ली गई। यह प्रति चतुरदासजी की टीका की रचना (संवत् १८५७) के केवल ३॥ बरस बाद की ही (संवत् १८६१ के वैशाख वदि ३ डीडवाणा में) लिखी हुई है। चतुरदासजी के शिष्य नन्दरामजी के शिष्य गोकलदास की लिखी हुई होने से इस प्रति का विशेष महत्व है। अतः इसका पाठमूल में रखकर (२) संवत् १८९७ की लिखी हुई दूसरी (B) प्रति से पाठ भेद देने का विचार किया गया, पर मिलान करने पर वह प्रति भी संवत् १८६१ वाली प्रति की नकल-सी मालूम हुई, अतः कोई खास पाठभेद प्राप्त नहीं हो सका। इन दोनों प्रतियों की लेखन-प्रशस्ति इस ग्रन्थ के पृष्ठ २४८ में छपी हुई है।

(३) इसी बीच बीकानेर राज्य के एक प्राचीन नगर रिणी (तारानगर) मेरा जाना हुआ, तो वहाँ के तेरहपंथी सभा के ग्रन्थालय में कुछ हस्तलिखित प्रतियाँ यों ही पड़ी हुई थीं, उनको मैं सभा के संचालकों से नोट करके ले आया। उसमें प्रस्तुत भक्तमाल की एक प्रति संवत् १८८६ की लिखी हुई प्राप्त हुई। इस (C) प्रति से मिलान करके जो पाठ-भेद प्राप्त हुये, उन्हें टिप्पणी में दे दिया गया है। ६० पत्रों की इस प्रति की लेखन-प्रशस्ति भी प्रस्तुत संस्करण के पृष्ठ २४८ की टिप्पणी में दे दी गई है। प्रस्तुत ग्रन्थ के सम्पादन में प्रधानतया इन तीनों प्रतियों का ही उपयोग किया गया है। मूल पाठ संवत् १८६१ की प्रति का प्रायः ज्यों का त्यों छापा गया है।

(४) प्रस्तुत ग्रन्थ छप जाने के बाद स्वामी मंगलदासजी की प्रेसकॉपी से भी मिलान करना जरूरी समझा, अतः उनके वहाँ से उक्त प्रेसकॉपी फिर से मंगवाई गई। मिलान करने पर विदित हुआ कि उसमें काफी पद्य अधिक हैं। अतः जहाँ-जहाँ जो पद्य अधिक हैं, उन्हें नकल करवाके परिशिष्ट में दे दिया गया है।

(५) जोधपुर जाने पर श्री गोपालनारायणजी बहुरा से विदित हुआ कि राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान में इसकी एक प्रति और खरीदी गई है, तो उसे मंगवाकर देख लिया गया। पहले की तीनों प्रतियों में ग्रन्थ की श्लोक संख्या ४१०१ लिखी हुई थी, इस प्रति में वह संख्या ४५०० तक लिखी हुई है अर्थात् यह प्रति भी परिवर्द्धित संस्करण की ही है। ९२ पत्रों की यह प्रति सं० १९०० की लिखी हुई है।

(६) छठी प्रति भारतीय विद्या मंदिर शोध संस्थान, बीकानेर में देखने को मिली। यह प्रति पूर्व प्राप्त तीन प्रतियों जैसी ही है। पर हाँसिये में अनेक जगह

टिप्पण लिखे हुये हैं और अन्त में टीकाकार की प्रशस्ति के पद्य इसमें नहीं लिखे गये हैं। कुल पद्यों की संख्या ११८५ दी हुई है। लिखने का समय दिया नहीं गया है, पर १९वीं शताब्दी की है।

पद्यों की कमी-बेशी व संख्या में गड़बड़ी—

स्वामी मगलदासजी वाली प्रेस-कापी में पद्यों की संख्या १२८६ दी गई है। इससे मालूम होता है कि करीब १०० पद्य पीछे से बढ़ाये गये हैं। इन पद्यों को स्वामी राघवदासजी या टीकाकार ने बढ़ाया है या और किसी ने—यह अभी निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। पर यह निश्चित है कि संवत् १८६१ और संवत् १९०० के बीच में यह परिवर्द्धन हुआ है। प्रस्तुत ग्रन्थ के पृष्ठ २४८ में तीन प्रतियों की लेखन-प्रशस्ति में ग्रन्थ की श्लोक संख्या यद्यपि ४१०१ समान रूप से लिखी हुई है पर प्रति नं० १–२ से प्रति नं० तीन में दी हुई छन्दों की संख्या भिन्न प्रकार की है। चतुरदास की टीका के इन्दव छन्दों की पद्यसंख्या तो तीनों प्रतियों में ६२१ दी हुई है, पर राघवदास के मूल पद्यों की संख्या में अन्तर है और लेखन-प्रशस्ति में छन्दों के नाम के साथ जो संख्या अलग-अलग दी हुई है, वह कुल पद्यों की संख्या से मेल नहीं खाती। जैसे—

A और B प्रति : छप्पय ३२८, मनहर १५२, हंसाल ४, साखी ३८, चौपाई २, इन्दव ७५।

C प्रति : दोहा १, छप्पय ३३३, मनहर १६१, हंसाल ४, साखी ३८, चौपाई २, इन्दव ७५।

अर्थात् C प्रति में छन्दों की संख्या में ५ छप्पय और ११ मनहर छन्दों की संख्या ३ बतलाई गई है, पर कुल पद्यों की संख्या ११८५ बतलाई है, जो A और B में १२०४ बतलाई गई है। अर्थात् १९ पद्यों की संख्या में कमी बतलाने पर भी वास्तव में अलग-अलग छन्दों के संख्या-विवरण में छप्पय ५ और मनहर ११ कुल १६ ही कम होते हैं। आश्चर्य की बात है कि अलग-अलग छन्दों की संख्या का मिलान कुल छन्दों की संख्या से भी ठीक नहीं बैठता। जैसे प्रति नम्बर A और B में कुल पद्यों की संख्या १२०४ बतलाई है, उसमें से टीका के ६२१ पद्यों के बाद देने पर मूल ग्रन्थ के पद्यों की संख्या ५८३ रह जाती है। पर छन्दों के विवरण के अनुसार वह संख्या ६०९ बैठती है। अर्थात् २६ पद्यों का फ़र्क पड़ जाता है। इसी तरह प्रति नम्बर C में कुल पद्यों की संख्या ११८५ दी गई है,

उसमें ६२१ टीका की पद्य संख्या बाद देने पर मूल के ५६४ पद्य रहते हैं, जबकि अलग-अलग छन्दों की संख्या लिखी गई है। उनको मिलाने से ५९४ की संख्या बैठती है, अर्थात् ३० पद्यों का फ़र्क रह जाता है। प्रतिलिपि करने वालों ने, पता नहीं, ऐसी गड़बड़ी क्यों कर दी है।

अभी तक राघवदास के भक्तमाल के केवल मूलपाठ की एक भी प्रति प्राप्त नहीं हुई और न टीकाकार चतुरदास के समय के पहले की लिखी हुई प्रति ही मिल सकी, इसलिए यह निर्णय करना कठिन है कि राघवदास ने मूल में कितने पद्य बनाये थे और उसमें कब कितने पद्य बढ़ाये गये ? प्रस्तुत संस्करण में मूल और टीकाकार के पद्यों की जो संख्या छपी है, उसमें भी कुछ गड़बड़ी रह गई है। क्योंकि जिन प्रतियों की नकल की गई थी, उन्हीं में पद्यों की संख्या देने में गड़बड़ कर दी गई है। प्रति नम्बर A और B के अनुसार मूल पद्य संख्या ५५५ और टीका के पद्यों की संख्या ६३६ छपी है। C प्रति में मूल पद्यों की संख्या ५४४ दी हुई है और टीका के पद्यों की संख्या ६४१। यह दोनों संख्यायें मिलाकर लेखन-प्रशस्ति में दी हुई कुल पद्यों की संख्या में भी अन्तर रह जाता है। केवल C प्रति को ही लें, तो ५४४ और ६४१ दोनों को मिलाकर ११८५ की संख्या तो ठीक बैठ जाती है, पर इसी प्रति की प्रशस्ति में मूल पद्यों की संख्या ५५३ और टीका के पद्यों की संख्या ६२१ लिखी है, उससे मिलान नहीं बैठता। मालूम होता है कि टीका की पद्य संख्या तीनों प्रतियों में ६२१ बतलाने पर भी उससे अधिक है, क्योंकि A और B प्रति में पद्य संख्या ६३६ और C प्रति में ६४१ दी हुई है। अतः मूल की तरह टीका में भी कुछ पद्य पीछे से बढ़ाये गये हैं, यह तो निश्चित-सा है। परिवर्द्धित संस्करण में तो काफी पद्य बढ़े हैं।

उपरोक्त प्रतियों के अतिरिक्त दो अन्य प्रतियों की जानकारी भी मुझे है, पर उनको मैं प्राप्त नहीं कर सका। उनमें से एक प्रति का विवरण ना० प्र० सभा के सन् १९३८ से ४० तक के १७ वें त्रैवार्षिक विवरण के पृष्ठ ३०२ में छपा है। उस प्रति की पत्र संख्या १३९ और ग्रन्थ-परिमाण ६५१६ श्लोकों का बतलाया गया है, जो ऊपर दी गई प्रतियों के परिमाण से करीब डेढ़ा बढ़ जाता है। इसकी भी लेखन-प्रशस्ति में गड़बड़ है, उसमें श्लोक संख्या ५००० की बतलाई है। छन्द संख्या भी बढ़ गई है। यथा—

छप्पय ३५३, मनहर १८७, हंसाल ४, साखी ८५, चौपाई २, इन्दव १००२ (?) और टीका की इन्दव और मनहर छन्दों की संख्या ६६६ लिखी है।

यह प्रति सं० १९३३ में साध भगतराम ने रोभड़ी गाँव में साध मोजीराम के लिये लिखी है। अभी यह प्रति भरतपुर राज्य के श्री कामवन के श्री गोकुल चन्द्रमा मंदिर के पुस्तकालय में गो० देवकीनन्दन आचार्य के पास है।

विवरण संशोधन —

खोज विवरण में टीका का रचना काल सं० १८१८ लिख दिया गया है, पता नहीं, इसका आधार क्या है। नीचे जो टीका के रचनाकाल संबंधी पद्य उद्धृत हैं, उससे तो १८५७ ही सिद्ध होता है। दूसरी महत्वपूर्ण गलती राघवदास का गोत्र 'चांडाल' लिख देना है। वास्तव में 'चांगल' शब्द को **'चांडाल'** पढ़ लिया गया है, और इसी से इतनी शोचनीय गलती हो गई है, उद्धृत पाठ भी अशुद्ध और त्रुटित है। प्रति बृहद् संस्करण की है हो। सम्भव है, परिवर्द्धित संस्करण के जो पद्य मैंने परिशिष्ट में दिये हैं, उनमें आगे चलकर फिर परिवर्द्धन हुआ होगा।

'राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान' से प्रकाशित 'विद्याभूषण-ग्रन्थ-संग्रह-सूची' के पृष्ठ ९० में प्रति नं० ११९ संवत् १९८३ की गोपीचन्द शर्मा लिखित है। इसकी पृष्ठ संख्या २०४ बतलाई गई है, बीच के ४ पृष्ठ नहीं हैं। वास्तव में, यह किसी हस्तलिखित प्रति की आधुनिक प्रतिलिपि ही है। सम्भव है, नम्बर A और B की ही यह नकल पुरोहित हरिनारायणजी ने करवाई हो। खोज करने पर और भी कुछ प्रतियाँ मिल सकती हैं।

आभार-प्रदर्शन—

सर्वप्रथम मैं स्वामी मंगलदासजी का विशेष आभार मानता हूँ, जिनकी प्रेरणा से ही इस ग्रन्थ के सम्पादन का काम मैंने हाथ में लिया और समय-समय पर विविध प्रकार की सूचनायें व सहायता भी वे देते रहे। तत्पश्चात् मुनि जिनविजयजी का मैं आभारी हूँ, जिन्होंने इस ग्रन्थ के प्रकाशन की स्वीकृति दी और पुरोहितजी के संग्रह की प्रतियाँ भिजवाईं।

ग्रन्थ की प्रेस-कॉपी तैयार हो जाने पर मेरे सामने यह दुविधा उपस्थित हुई कि हस्तलिखित प्रतियों में मूल और टीका के पद्यों का सर्वत्र स्पष्टीकरण नहीं था, अतः इनकी छँटाई कैसे की जाय? संयोग से प्रो० सुरजनदासजी स्वामी बीकानेर डूंगर कॉलेज में प्राध्यापक के रूप में पधार गये। उनको मैंने प्रेस कॉपी

में मूल और टीका के पद्यों को अलग से चिह्नित कर देने का कहा और आपने उसे अपना ही काम समझ कर कर दिया- –इसके लिये मैं आपका आभारी हूँ।

ग्रन्थ का मुद्रण जोधपुर में हो रहा था, वहाँ से प्रूफ बीकानेर आने-जाने में अधिक विलम्ब होता, इसलिये प्रूफ संशोधन का कार्य मैंने महोपाध्याय मुनि विनयसागरजी को सौंपा और उन्होंने बड़ी आत्मीयता के साथ सारे ग्रन्थ का प्रूफ संशोधन कर दिया। उनका और मेरा वर्षों से धर्म-स्नेह का संबंध रहा है, फिर भी उनका आभार प्रकट करना मेरा कर्त्तव्य है। प्रूफ संशोधन में उन्हें श्री गोपालनारायणजी बहुरा का मार्ग-प्रदर्शन भी मिलता रहा है।

ग्रन्थ छप जाने के बाद इसकी अनुक्रमणिका बनाना प्रारंभ किया, तो एक और दिक्कत सामने आई कि ग्रन्थ में यद्यपि बहुत-सी जगह तो पद्यों के प्रारम्भ में भक्तों के नाम दिये हुये हैं, पर ऐसे भी बहुत से पद्य हैं, जिनमें शीर्षक का अभाव है। इसलिये उन पद्यों को पढ़ कर शीर्षक लगाते हुये विस्तृत अनुक्रमणिका बना देने का काम सिंहस्थल के रामस्नेही सम्प्रदाय के महन्त स्वामी भगवत्दासजी महाराज को दिया गया और उन्होंने बड़े परिश्रम से मेरी सूचनानुसार दो बार जाँच कर के अनुक्रमणिका तैयार कर दी, जिसे विद्वद्वर नरोत्तमदासजी स्वामी ने भी देख लेने की कृपा की है। इस सहयोग के लिये मैं महन्तजी व स्वामीजी का आभारी हूँ। श्री गोपालनारायणजी बहुरा ने भक्तमाल की जो प्रति बाद में राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान में खरीदी गई, उसकी सूचना दी और प्रति को बीकानेर के शाखा कार्यालय में भिजवा दी तथा प्रूफ संशोधन में भी सहायता की, इसलिये उनका भी आभार मानना मैं अपना कर्त्तव्य मानता हूँ।

मेरी इच्छा थी कि ग्रन्थ में जिन जिन भक्तों एवं सन्तों का उल्लेख है, उनके सम्बन्ध में अन्य सामग्री के आधार से विशेष प्रकाश डाला जाय, पर यह कार्य बहुत समय एवं श्रम-सापेक्ष है। और चूंकि मूल ग्रन्थ गत वर्ष हो छप चुका था, इसलिये अधिक रोके रखना उचित नहीं समझा गया। सम्बन्धित सामग्री को जुटाने में भी कई महीने लगे। फिर भी पूरी सामग्री नहीं मिल सकी। अतः अपनी उस इच्छा का संवरण करना पड़ा। पाठकों को यह जानकारी दे देना उचित समझता हूँ कि प्रस्तुत ग्रन्थ को हिन्दी विवेचन या अनुवाद के साथ प्रकाशित करने का प्रयत्न श्री सुखदयालजी एडवोकेट कर रहे हैं। उन्होंने उसके कुछ पृष्ठों की प्रेस-कॉपी स्वामी मंगलदासजी को भेजी थी और मैंने उसे स्वामीजी के पास देखी थी। पता नहीं, वे उस कार्य को पूर्ण कर पाये या नहीं।

मेरी यह भी इच्छा थी कि जिस प्रकार नाभादास की भक्तमाल का व्याख्यान करने वाले कई भक्तमाली सन्त हैं, इसी तरह राघवदास की इस भक्तमाल के व्याख्याता सन्त भी हों, तो उनके पास से इस ग्रन्थ में वर्णित भक्तों की विशेष जानकारी प्राप्त की जाय। स्वामी मंगलदासजी को पूछने पर उन्होंने यह सूचना दी कि "राघवदासजी की भक्तमाल के जानकार दादूपन्थी सम्प्रदाय में २-३ हैं, उनमें तपस्वी भूरारामजी प्रमुख हैं। भक्तमाल पर महात्मा रामदासजी दुवल धनिये ने अपने शिष्य बुधाराम को भक्तमाल की कथाओं का विवरण लिखा दिया था, वह शायद उसी के पास वाराणसी में है।" पर मैं इन दोनों सन्तों से लाभ नहीं उठा पाया। अतः जैसा भी बन पड़ा है, इस ग्रन्थ को पाठकों के हाथों में उपस्थित करते हुये सन्तोष मान रहा हूँ।

—अगरचन्द नाहटा

अनुक्रमणिका

---
[1] नाभादास कृत भक्तमाल में मूल पद्य संख्या ७-८ देखें ।

[1]यहाँ ६ मनहर छंदों का टिप्पणी में फरक है अन्यथा १०४ होते हैं।

[1] वास्तव में २६६-२६७ हैं।

[1] यह छंद पहिले पद्यांक ४७ पृष्ठ २५ पर आ चुका है

राघवदासजी द्वारा

ग्रन्थ-समर्पण

मगन महोदधि है भरचौ, जन पूजत डरपै।
वह गंभीर गहरौ भरचौ, यह तुछ जल अरपै।
रती यक किरची कंचन की, ले मेरहि परसै।
देखत निजर न ठाहरै, कंचनमय दरसै।
जैसे सुरतर कौं धजा, रचि पचि अरपै नैंक नर।
त्यूं रघवा इत पूजिक है, उत हरिजन त्रिय-ताप-हर॥

राघवदास कृत भक्तमाल

चतुरदास कृत टीका सहित

टीका-कर्त्ता को मंगलाचरण

साख (दोहा) गुर गनेस जन सारदा, हरि कवि सबहिन पूजि ।
भक्तमाल टीका करूं[1], मेटहु दिल की दूजि ।।

इंदव छंद
पैल निरंजन देव प्रणांमहि, दूसर दादुदयाल मनांऊं ।
सुन्दर कौं सिर ऊपरि धारि रु, नेह निरांइणदास लगांऊं ।
रांम दया करिहैं सुख संपति, मैं सु संतोष जु सिष्य कहांऊं ।
राघवदास दयागुर आइस, इंदव छंद सटीक बनांऊं ।।१

टीका : सरूप-वर्णन

कावि बनावत आनंददाइक, जो सुनिहैं सु खुसी मन मांहीं ।
माधुरता अति अक्षर जोड़न, आइ सुनैं सु घने हरखांहीं ।
जोड़ सराहत जे अपने[2] कवि, ताहिं सबै कहि सो कछू नांहीं ।
ह्वै उर भाव र ग्यांन भगत्तन, राघव मो[3] तन टीक करांहीं ।।२

भक्ति-सरूप वर्णन

भावत भगति तियां अब संतनि, तास सरूप सुनौं नर लोई ।
नांव सुनीर नवन्य नहावन, वेस विवेक बन्यौ बप वोई ।
भूषन भाव चुरा चित चेतन, सौंध संतोष सु अंग समोई ।
अंजन आनंद पांन[4] सचौपन, सेज सदा सतसंगति सोई ।।३

भक्ति पंच रस-वर्णन

पांच भगत्य कहे रस संतन, सो बिसतार भलीं बिधि गाये ।
१बाछलि २दास्य ३सखापन ४सांत रु और ५सिंगार सरूप दिखाये ।
टिप्पण[5] को उर स्वाद लहौ जब, बैठि बिचार करौ मन भाये ।
रोम उठै न बहै द्रिग तैं जल, अैंसिनु प्रेम समुद्र बुड़ाये ।।४

---

१. करौं । २. अपनी । ३. सो । ४. आनन्दयान । ५. टप्पण ।

फूल भये रस पंचम रगन, थाकद्रे[1] यह दाम बनाई।
राघव मालनि लै करि सांम्हनि, सुन्दर देखि हरि मन भाई।
डारि लई गरि प्रीति घणी करि, काढ़त नांहि न[2] ग्रैंन सुहाई।
भार भयो बहु भक्तन की छबि, जानत हैं इन पांइन ग्राई ।।५

सतसंग-प्रभाव

पौधि भगत्य बिधंन सबाकर, भोत बिचार सु बारि लगाई।
साध समागिम पाइ वहै जल, प्रौढ भयौ ग्रति डार वधाई।
थांवल संत रिदौ बिसतीरन, जीव जिये दुख ताप नसाई।
छेरनि को डर जाहि हुतौ बहु, ज्यौरि बढ्यौ मतगैंद झुलाई ।।६

राघवदासजी को वर्णन

संत सरूप जथारथ गाइउ, कीन्ह कवित्त मनूं यह हीरा।
साध ग्रपार कहे गुन ग्रंथन, थोरहु ग्रांकन में सुख सीरा।
संत सभा सुनिहै मन लाइ र, हंस पिवै पय छाड़ि र नीरा।
राघवदास रसाल बिसाल सु, संत सबै चलि ग्रावत कीरा ।।७

श्री भक्तमाल-सरूप-वर्णन

दीरघदास पढै निसवासुर, पाप हरै जग जाप करावै।
जानि हरी सनमांन करै जन, प्रीत धरै जग रीति मिटावै।
कौंन ग्रराधि सकै उन भक्तन, ठीक न ठाक मनों भय ग्रावै।
माल गरै तिलकादिक भाल सु, माल भगत्त बिनां रुलि जावै ।।८
संत हरी गुर सौं जन सौं मुख, टेक गही वह भक्त सही है।
रूप भगत्य सुनौं चित लाइ र, नांव लये द्रिग धार बही है।
भक्तन प्रीति बिचार तवै हरि, झूठि उठांवन कृष्ण कही है।
लै गुर की गुरताइ दिखावत, श्री पयहारि निहारि मही है ।।९

---

१. थाकन्दे गूथा। २. ताहि न।

मूल : मंगलाचरण-वर्णन

दोहा छंद

नमो परम गुर सुद्ध कर, तिमर अग्यांन मिटाइ।
आदि अजन्मां पुरुष कौं, किंहिं बिधि नर दरसाइ ॥१
नरपद सुरपद इंद्रपद, पुनि हि मोक्षपद मूर।
सदगुर सो द्रिब द्रिष्टि द्यौ, अन्तर भासै नूर ॥२
(अब) कहत परमगुरु प्रष्ण[1] ह्वै, दयौ परमधन दाखि।
भक्त भक्ति भगवंत गुर, राघव श्रै उर राखि ॥३
प्रथम प्रणम्य गुर-पादुका, सब संतन सिर नाइ।
इष्ट अटल परमातमां, परमेसुर कृत गाइ ॥४
बिष्णु बिरंचि सिव सेस जपि, जती सती सिद्धिसैण।
बाणी गणपति कविन कौं, च्यवैं चतुर बिग-बैंण ॥५
अब अरज भक्त भगवंत सौं, गरज करौ गम होइ।
हरि गुर हरि के आदि भृति, जन राघव सुमरै सोइ ॥६
ब्यापिक ब्रह्मण्ड पच्चीस मधि, सुरग मृति पाताल।
भक्तन हित प्रभु प्रगट ह्वै, राघव राम दयाल ॥७
सत त्रेता द्वापर कलू, ये अनादि जुग च्यारि।
राघव जे रत रांम सूं, संत महंत उर धारि ॥८
भक्त भक्ति भगवंत गुर, श्रै मम मस्तक मौर।
राघव इनसौं बिमुख ह्वै, तिनकूं कतहु न ठौर ॥९
भक्त भक्ति भगवंत गुर, ये उर मधि उपवासि।
राघव रीझै रांमजी, जांहि बिघन-क्रम नासि ॥१०
भक्त बड़े भगवंत सम, हरि हरिजन नहीं भेद।
अरस परस जन जगत गुर, राघव बरणत बेद ॥११
हरि गुर आज्ञा पाइकैं, उद्यम कीनों ऐह।
जन राघौ रांमहि रुचै, संतन कौ जस प्रेह ॥१२
भक्तमाल भगवंत कौं, प्यारी लगे प्रतक्ष।
राघव सो रटि राति दिन, गुरन बताई लक्ष ॥१३

---

१. प्रसन्न।

समद समाइ न पेट में, को सिर धरै सुमेर।
अैसो बकता कौन है, अनुक्रम बरणै लेर ॥१४

गुर दादू गुर परमगुर, सिष पोता परजंत।
आगै पीछै बरनतैं, मति कोई दूषौ संत ॥१५

हूं कछू समझत हूं नहीं, महल मिसली की बात।
जगतपिता सम जपत हूँ, हरि हरिजन गुरु तात ॥१६

छपै छंद

गुर उर मधि उपगार करत, कछू तथा न राषी।
अब[1] लक्षन अब कृपा[2] सकल, भिन भिन करि भाषी।
रती एक रज (मो) आपि, काच तै कंचन कीनौं।
जत सत ज्ञांन बिबेक, धर्म धीरज दत दीन्हौं।
श्री गुर धुर तारण-तिरण, हरण बिघन त्रिय ताप सुव।
(अब) राघव के रक्षपाल तुम, बिकट बेर मधि बाप जुव ॥१

नीसाणी छपै

दिनकर कौ जो दीवो, जिती ले जोति दिखावै।
सिसि कौं सीरक सींक भरे, सनमुख सिर नावै।
बाणी गणपति कौं ज, गुणी ह्वै[3] अक्षर चढावै।
भजन भक्ति जग जोग कृत सिव सेस मनावै।
श्रोत्र बृति सनकादिक, मुनि नारद ज्यूं गावै।
राघव रीति बड़ेन की, का पै बनि आवै ॥२

मगन महोदधि है भर्‌यौ, जन पूजत डरपै।
वह[4] गंभीर गहरौ भर्‌यौ, यह तुछ जल अरपै।
रती यक किरची कंचन की, ले मेरहि परसै।
देखत निजर न ठाहरै, कंचनमय दरसै।
जैसे सुरतर कौं धजा, रचि पचि अरपै नैंक नर।
त्यं रघवा इत पूजिक है, उत हरिजन त्रिय ताप हर ॥३

गुर गौबिंद प्रणांम करि, तबहि गम तौकौं होइ है।
च्यार्‌यौं जुग के संत, मगन माला[5] ज्यौं पोइ है।
नग रूपी निज संत, पोइ प्रगट करि बांणी।
गगन मगन गलतांन, हेरि हिरदा मधि आंणी।

---

१. श्रब। २. कृया। ३. ह्वैं। ४. वहै। ५. माया।

मंगल रूपी मांड महि, हरि हरिजन तारन तिरन।
भृत्य करत विरदावली, जन राघव भणि भव दुख हरन ॥४

नमो नमो कवि ईस, भये जेते सत त्रेता।
द्वापर कलिजुग आदि, तिरन तारन ततबेता।
नमो सुर्ति समृति, नमौ सास्त्र पुरांनन।
नमो सकल बकताब, नमो जे सुनत सुकांनन।
मैं गम बिन ग्रंथ आरंभियो, कविजन करिहैं हासि।
अब सिलहारे कौं को गिनै, जन राघव ताकै[1] रासि ॥५

ॐ चतुर निगम षट सास्त्रह,गीता अरु बिसिष्ट बोधय।
बालमीक कृत व्यास कृत, जपैं जो करहि निरोधय।
प्रथम आदि नवनाथ, भणहु चतुरासी सिधय।
सहस अठ्यासी रिष, सुमरि पुनरपि कवि बिधिय।
सिध साधिक सुरनर असुर, अब मुनि सकल महंत।
अब अब अरज अवधारिज्यौ, जन राघवदास कहंत ॥६

मनहर छंद

अंगीकार आप अविनासी जाकौं करत है,
सोई अति जांन परवीन परसिधि है।
सोई अति चेतन चतुर चहुं चक मधि,
बांणीं को बिनांणी बिस्तार जैसै दधि है।
जोई अति कोमल कुलोन है कृतज्ञ बिज्ञ,
रिद्धि सिद्धि भगति मुगती जाकै मध्य है।
राघौ कहै रांमजी के भाव सौं भगत भणि,
बात तेरी जैहै बणी बांणी तेरी बृधि है ॥७

मया दया करिहैं देवादिदेव दीनबंधु,
तब कछु ह्वै है बुधि बांणी की बिमलता।
जैसी शसि कातिग में श्रवता अमि असंखि,
निखरि कै होत नीको नीर की नृमलता।
रजनी कौ तिमर तनक मधि दूरि होत,
दीसै बित बस्त भाव दीपक ह्वै जलता।

---
१. जिनकैं।

राघौ कहै जाकी बांणी सुणि गुणि होत सुधि,
नीति के बिचारे बिन धर्म नांहीं पलता ॥८

कुंडलीया छंद मया दया करि मांन दे, अंत्रजांमी आप।
सोई कबि कोबिद सिरै, जपै अजपाजाप।
जपे अजपाजाप, पाप-त्रिय-ताप न व्यापै।
आसा जीत अतीत, भजन सूं कबहुं न धापैं।
त्रिपति ज्ञांन विज्ञांन सूं, अव नख-सख धुनि होई।
जन राघौ रटि सोई रांम जन, यों भक्तमाल उर पोई ॥९
अब राघव नमो निरंजन, मेटहु अंग अंधेर कौं।
नमो विष्णु-विधि सिवहि, सेस सनकादिक नारद।
नमो पारषद भक्त, नमो गणपति गुण शारद।
स्वांभू मनु कासिव, दक्ष दधीचहि बन्दन।
क्रदम अथरवा धर्म, करन सो क्रम निकंदन।
नमो सुराधिपति सूर ससि, नमो सुबरण कुबेर कौं।
अब राघव नमो निरंजन, मेटहु अंग अंधेर कौं ॥१०

मनहर छंद नमो नमो नमो निराकार करतार जपि,
विष्णु विरंचि सिव सेस सीस नाई हूँ।
द्वादस भक्त नमो दस षट पारषद,
नमो नव नाथ जु चौरासी सिध गाइ हूँ।
देव सर्व रिष सर्व निरखी नक्षत्र अब,
जती षट सती सप्त बीस हूँ मनाई हूँ।
तत्व कोंन वीस त्रयलोक मध्य जे प्रसिधि,
रघवा रटत प्रतक्ष कब पाई हूँ ॥११
नमो बिस्वभरन बिसंभर बिधाता दाता,
विष्णु जु बैंकुण्ठनाथ मेरौ बल तेरौ है।
लक्ष्मी चरणसेव बाहण गरुड़देव,
आयुध चकर कर तीनों लोक डेरौ है।
द्वादस भक्त संग दस षट पारषद,
भगतबछल बृद भीर परे नेरौ है।

राघौ कहै सबद सपरस रूप गंध,
दूरि कीजे दीनबंधु ये तौ दोष मेरौ है ॥१२

नमो बिधि बिबधि प्रकार के रचनहार,
आदि ततवेता तुम तात त्रिहूँ लोक के।
जप गुर तप गुर जोग जज्ञ व्रत गुर,
आगम निगम पति जांण सब थोक के।
नर पुजि सुर पुजि नागहूँ असुर पुजि,
परम पवित्र परिहारि सर्व सोक के।
ऊपजे कवल मधि नाभि करतार की सूं,
राघो कहै मांनियो महोला मम थोक के ॥१३

अरक अहार सिणगार भसमी को भर,
ग्रैसो हर निडर निसंक भोला चक्कवै।
पूरक पवन प्राण-वायु को निरोध करै,
जपति अजपा हरि रहे थिर थक्कवै।
गौरी अरधंग संग कीयो है अनंग भंग,
कालहू सूं जीत्यो जंग पूरा जोगी पक्कवै।
राघौ कहे जगै न[1] जगतपति सेती ध्यांन,
अडिग अडोल अति लागी पूरी जक्कवै ॥१४

आदि अनभूत तू अलेख हैं अद्वीत गुन,
नमो निराकार करतार भनै सेस है।
हारे न हजार मुख रांम कहै राति दिन,
धारें धर सीस जगदीशजी के पेस है।
दुगण हजार हरि नांव निति नवतम,
रटत अखंड व्रत भगत नरेस है।
राघो कहै फनिपति ग्रैसौ अन्य न अति,
केवल भजन बिन आंनन प्रवेश है ॥१५

छपै छंद चतुरबीस अवतार जो, जन राघो कै उर बसौ ॥टे०
कछ मछ बाराह, नमो नरस्यंघ बांवन बलि।
रघुवर फरसाधरन, सुजस पिवत्र[2] कृष्ण कलि।

१. छुट नहीं। २. पित्र।

व्यास कलंकी बुद्ध मनुंतर, पृथु हरि हंसा।
हयग्रीव जज्ञ रिषभ धनुन्तर, ध्रुव बरदंसा।
दत्त कपिल सनकादि मुनि, नर नारांइन सुमरि सो।
चतुरबीस अवतार जो, जन राघो कै उर बसौ॥१६

टीका

इंदव छंद
कूरम ह्वै गिर मन्दर धारि, मथ्यौ सब देव दयन्त समुद्रा।
मींन भये सतिबर्त सु अंजलि, लै परलै दिषराइहु क्षुद्रा।
सूकर काढ़ि[1] मही जल मांहि रु, मारि ह्रिनाक्षस थापि र दुद्रा।
सिंघ सरूप प्रलाद उधारन, द्वैत हिरणांकुस फारन उद्रा॥१०
बावन रूप छले बलिराजन, इन्द्रहि राज दियो इकतारा।
मात पिता दुखदाइक जो, प्रसरांम खित्री न रख्यौ जग सारा।
रांम भये दसरत्थ तणै वर, रांवन कुंभकरन्न बिडारा।
कृष्ण जरासुव कंस हने मुरि, साल्वहि मारि भगत्त उधारा॥११
बुद्ध छुड़ाइ जज्ञादिक जीवन, जैंन दया ध्रम कौं बिसतारा।
रूप कलंकि जबै धरिहैं हरि, भूप करैं अपराध अपारा।
ब्यास पुरांनन वेद सुधारन भारत आदि बिदांत उचारा।
दोहि धरा अब बांटि दई रिधि, गांव पुरादिक प्रिथु सुधारा॥१२
ग्राह गह्यौ गज कूं जल भींतरि, रांम कह्यौ हरि बेग उधारचौ।
हंस सरूप धरचौ अज कारनि, प्रष्ण करी सुत हेत बिचारचौ।
रूप मनुंतर धारि चवद्दह, इंद्र सुरेसहु कारिज सारचौ।
जज्ञ भये मनु राखन मंजुल, आदि र अंति जगैं विस्तारचौ॥१३
ब्रह्महि ज्ञांन दिखांइ सवै जग, देव रिषम्भ सरीर जरायो।
बेद हरे मधुकैटक दांनव, सों हयग्रीव हन्यौ श्रुति ल्यायो।
बालक आरन भक्ति करी अति, ध्रू बर दे हरि राज करायो।
रोग र भोग भरचौ दुख सूँ जग, होइ धनुंतर बैद स आयो॥१४
आतमग्यांन उदित्त कियो जिन, सो बद्रिनाथ या खंड[2] के स्वांमी।
ज्ञान कहचौ गुर को जदुराजहि, आनंद में दत अंतरजांमी।

---
१. काटि। २. या पाखंड।

मात मुक्कति करी उपदेसि र, सांखि सुनाइ कपिल्ल सो नांमी।
च्यारि सरूप धरे सनकादिक, ऐक दिसा इकही लछि प्रांमी ॥१५
जो अवतार सबै सुखदाइक, जीव उधारन कौं क्रम कीला।
तास सरूप लगै मन आपन, जासहि पाइ परै मति ढीला।
ध्यान करे सब प्रापति है निति, रंकन ज्यौं वित ल्यांवन हीला।
च्यारि रु बीस करौ बकसीस, सुदेवन ईस कही यह लीला ॥१६

मूल-छपै

अवतारन के अंघ्रि द्वै, इते चहन नित प्रति बसै ॥ टे०
ध्वजा संख षटकौंण, जंबु फल चक्र पदम जव।
बज्र अम्बर अंकुश, धेन पद धनुष सुबासव।
सुधा-कुम्भ सुस्त्यक, मंछ बिंदु तृय कौंण।
अरध-चन्द्र अठ-कौंण, पुरष उरध-रेखा ह्रोणं।
राघव साध सधारण, चरनन मैं अतिसै लसै।
अवतारन के अंघ्रि द्वै, इते[1] चिहंनि निति प्रति बसै ॥१७

टीका

इंद्व छंद साध सहाइन कारन पाइंन, रांम चिहंन्न सदाहि बसाये।
मंन मतंग स हाथि न आवत, अंकुस यौं उर ध्यांन कराये।
सीत सतावत है जड़ता नर, अम्बर ध्यांन धरे मिटि जाये।
फोरन पाप पहारन बज्रहि, भक्ति समुद्र कवल्ल बुडाये ॥१८
जौ जग मैं जन देत बहौ गुन, जो चित सौं निति प्रीति लगावै।
होत सभीत कुचाल कलू करि, ध्यांन धुजा निरभै पद पावै।
गो-पद ह्वै भव-सागर नागर, नैंन लगे हरि त्रास मिटावै।
माइक जाल कुचाल अकालन, संख सहाइ करै मन लावै ॥१९
कांम निसाचर मारन चक्रहि, स्वस्तियक मंगलचार निमत्ता।
च्यारि फलैं करि है निति प्रापति, जंबु फलैं धरि है सुभ चित्ता।
कुम्भ सुधा हरिभक्ति भरचौ रस, पांन करै पुट नैंननि निन्ता[2]।
भक्ति बढ़ांवन ताप घटांवन, चन्द्र धरचौ अछ जांनि सु बित्ता ॥२०

---
१. हवै। २. निमित्ता।

सांप बिषै बपु मांहि रहे बसि, साध डसै न उपाइ करे हैं।
अष्टउ कौंण त्रिकौंण पुनैं षट, जीव जिवावन जंत्र खरे हैं।
मींन रु बिन्दु बसीक्रन यौ पद, रांम धरे जन प्रांन हरे हैं।
सागर पार उतारन कौं जन, ऊरध-रेख सु-सेत धरे हैं ॥२१
इन्द्र-धनुष धरचौ पद मैं हरि, रांवन आदिक मांन निवारचौ।
मांनुष रूप बसेष सुनौ पद, सुन्दर स्यांम जु हेत बिचारचौ।
जो मन शुद्ध करै सुभ क्रमन, या जन ज्यौं रखि हौं सु उचारचौ।
जो बुधिवंत सदा सुख सम्पति, मैं गुन गाइ यहै पन पारचौ ॥२२

मूल-छपै

कवला कपिल बिरंच, सेस सिव अब सुखकारी।
भणि भीषम प्रहलाद, सुमरि सनकादिक च्यारी।
व्यास जनक नारद मुनी, धरम परम निरनैं कीयो।
अजामेल कौं मारतैं, जमदूतन कौं दंड दीयो।
द्वादश भक्तन की कथा, श्री सुकमुनि प्रीक्षत सूं कही।
जन राघो सुनि रुचि बढी, नृप की बुधि निश्चल भई ॥१८

मनहर छंद

मीन बरा कमठ नृस्यंघ बलि बांवन जू,
छल करि आय देवकाज कौं सवारे हैं।
रांम रघुबीर कृष्ण बुध कलंकी धीर ब्यास,
पृथु हरि हंस खीर नीर निखारे हैं।
मनुंत्र जग्य रिषभ धनुंत्र हयग्रीव,
बद्रीपति दत्त जद गुर-ज्ञांनतैं उवारे हैं।
ध्रुव बरदांन सनकादि: कपिल ज्ञांन,
जन राघो भगवांन भक्तकाज रखवारे हैं ॥१९
केते नर नारद नैं नांव सूं नृमल कीये,
दक्ष-सुत लीन भये बीन सुर सुनि कै।
नरपति उलटि पलटि देखौ नारि भयो,
तहां रिष आप भयो भूरि भागि[1] उनि कै।
असुर की नारि सुर साहि बंदि तैं छुड़ाइ,
तहां प्रहलादजी प्रगट भये मुनि कै।

---

१. भांगि।

राघौ धनि ध्रू से देखो अटल अकास तपे,
नारद निराट नग नांव देत चुनि कैं ॥२०

आदि अंति मध्य बड़े द्वाद भक्त रत तहां,
सत्य स्वांभू-मनु अखंड अजपा जपै।
जाके सुत उभये उद्यौत ससि सूर सम्,
नाती ध्रूव अटल अकास अजहूँ तपै।
दिव्य तन, दिव्य मन, दिव्य दृष्टि, दिव्य पन,
अन्य भगत भ[ग]वंतजी ही कौं थपै।
राघो पायो अजर अमर पद छाड़ी हद,
अरस परस अबिनासी संग सो दिपै ॥२१

सनका संनदन सनातन संत कुमार,
करत तुम्हार त्रियलोक मधि ज्ञांन कौं।
बालक विराजमान सोभै सनकादिक अैसै,
प्रात मुख सेस कथा सुनत नित्यांन कौं।
मन बच क्रम मधि बासुर बसेख करि,
धारत बिचार सार स्यंभूजी के ध्यांन कौं।
राघो सुनि साझ काल बिष्णुजी के बैन बाल,
रहै छक छहूं रुति श्रुति बृति पांन कौं ॥२२

नमो रिष क्रदम देहूति जननी कूं ढोक,
तारिक तृलोक जिन जायो है कपिल मुनि।
कांम जि क्रोध जित लोभ जि मोह जित,
तपोधन जोग बित माता उपदेसी उनि।
सील कौ कलपवृक्ष हरत विषै की तप,
ब्रह्म की मूरति आप अंतरि अखंड धुनि।
राघो उनमत प्रमंतत मिलि येक भये,
तावत उत्म कृत कीन्हे यौं मुनिंद्र पुनि ॥२३

भगतन हित भागवत बित कृत कीन्हौं,
व्यासजी बसेख खीर नीर निरवारयौ है।

ब्यास प्रति सुक मुनि आदि अंति पढि गुनी,
　　प्रथम सुनाइ नृप प्रीक्षत उधारचौ है।
सूत कौं सकंद बार दयो बर ताही बार,
　　श्रोता सौनकादि सो सदैव पन पारचौ है।
राघो कहै सार है संघार करै पापन कौ,
　　आपन कौं उत्यम सुने तें फल च्यारचौं[1] है ॥२४

गगन मगन महा गंगेव गंगासौं भयो,
　　देखि सुत सांतन प्रवीन परवारचौ है।
धींवर की कन्या मांगि जिरणत प्रणायो जिन,
　　प्रथम प्रमार्थी पिता कै काज आयौ है।
ब्याह तज्यौ, बल तज्यौ, राज तज्यौ, रोस तज्यौ,
　　धनि धनि जननी गंगेव जिनि जायौ है।
राघो कहै सील कौ सुमेर है गंगेव गुर,
　　काछ-बाछ निःकलंक मोक्ष पद पायौ है ॥२५

धनि धरमराइ कह्यौ आय मत मूरख सौं,
　　मारैंगें कपूत मम दूत संधि तोरिकैं।
मन बच क्रम कछु धर्म करि धीरज सूं,
　　रांम रांम रांम गुन गाइ सुर्ति डोरिकै।
कांम क्रोध लोभ मोह मारिकैं[2] निसंक होह,
　　साहिब सौं सांनकूल राखि चित चौरिकै।
राघो कहै रवि-सुत मेटियो कर्म-जुत,
　　रांमजी मिलावो वरदाता बंदि छोरिकैं ॥२६

तनके दिवांन तिहूं लोक के वाकानवीस,
　　चित्रगुपतर नमो कागदी करतार के।
बीनती करत हूं बिलग जिनि मांनौ मेरौ,
　　छेक यो अध्रमक्रम आंक अहंकार के।
लिखियो अरज असतूति अति बार बार,
　　बाइक बनाई कहौ प्रभुजी सूं प्यार के।

---

१. उचारचौं हैं।　२. मोरि कैं।

राघो कहै अंतिकाल कीजियो मदति हाल,
बांचियो अंकूर अति उत्म लिलार के ॥२७

नमो लक्ष लक्षमी पलोटे प्रभुजी के पग,
राति दिन येक टग भक्तन की आदि है।
रहै डर सहत कहत नमो नमो देव,
अलख अभेव तब देत ताकौं दादि है।
जत बिन; सत बिन, दया बिन, दत्त बिन,
जीवन जनम जगदीस बिन बादि है।
राघो कहै रांमजी के निकटि रहत निति,
आदि माया ऊँकार सहज समाधि है ॥२८

सिव जू की टीका

इंदव छंद द्वादस भक्त कथा सु पुरांनन, है सुखदैंन बिबिद्धिन गायें।
संकर बात घने नहि जांनत, सो सुनि कैं उर भाव समाये।
सीत बियोगि फिरै बन रांम, सती सिव कौं इम बैंन सुनांयें।
ईसुर येह करौं इन पारिख, पालत अंग वसेहि बनाये ।।२२
सीय सरूप बना इन फेरउ, रांम निहारि नहीं मनि आई।
आइ कही सिव सूं जिम की तिम, आंच लगी खिजिकैं समझाई।
रूप धर्‍यौ मम स्वांमिन कौ सठि, त्याग कर्‍यौ तन सोच न माई।
भाव भरे सिव ग्रंथ धरे जन, बात सु प्यारनि रीझि क गाई ।।२३
जात चले मग देखि उभै धर, सीस नवावत भक्ति पियारी।
पूछत गोरि प्रंनांम कियो किस, दीसत कोउ न येह उचारी।
बीति हजार गये ब्रखह्नु दस, भक्त भयो इक होत तयारी[1]।
भाव भयौ परभाव सुन्यौ जन, पारबती लगि यो रग भारी ।।२४

अजामेल की टीका

मात पिता सुत नाम धर्‍यौं, अजामेल स साच भयो तजि नारी।
पांन करै मद दूरि भई सुधि, गारि दयो तन वाहि निहारी।
हासिन मैं पठये जन दुष्टन, आइ रहे सुभ पौरि सवारी।
संत रिझाइ लये करि सेवन, नांम नरांइन बालक पारी ।।२५

---

१. बयारी=रखि पण मैं मंढी मैं अस्त्री राखी। पीछै ब्राह्मण भयो। वन मैं गयो। फूला मैं वेस्यां मेली।

आइ गयो जब काल महाबल, मोह जंजाल परचौ जम आये।
नांम नरांइन पुत्र लयो उरि, आरतिवंत स बैंन सुनाये।
देव सुन्यौ सुर दौरि परे, जमदूतन कूं हरि धर्म्म बताये।
हारि गये तब ताड़ि दये, भ्रम नैं भट आपन हूं समझाये ॥२६

मूल-छपै

राघो रांम मिलांवहि, अंतिकालि परमारथी ॥
नन्द सुनन्द सुप्रबल बल, कुमुद कुमुदाइक भारी।
चंड प्रचंड जै बिजै, बिराजै भलैं सु द्वारी।
बिष्वकसेन सुसेन, सील सुसील सुनीता।
भद्र सुभद्र गुणज्ञ, गाइये प्रम[1] पुनीता।
येते षोड़स पारषद, भक्त भजन के सारथी।
राघव रांम मिलांवही, अंतकालि परमारथी ॥२६

टीका

इंदव छन्द

सोरह पारषदै मुखि जांनहु, सेवक भाव सु ये रिधि जोरी।
श्रीपति कूं करि है निति प्रीनन, ध्यांन धरै जन पारत[2] कोरी।
आप दिवाइ बनाइ कही हरि, आइस पांन अमी जिम घोरी।
दोष सुभाव गह्यौ उर अन्तर, रीति भली सुधरी बुध बोरी ॥२७

मूल-छपै

बिष्णु बल्लभ की चरण रज, निस दिन प्रारथना करूं ॥
लक्ष्मी बिहंग सुनन्द, आदि षोडष रुचि हरि पग।
सुग्रीव हनुमांन जांबवत, बिभीषन स्यौरी खग।
सुदांमा बिद्र आक्रूर[3], ध्रूव अंबरीष सु ऊधौ।
चित्रकेत चंद्रहास ग्रह, गज कीयो सूधौ।
द्रुपद-सुता कौं खार वैं, राघव सब कौ उर धरूं।
बिष्णु बल्लभ की चरण रज, निस दिन प्रारथनां करूं ॥३०

टीका-हनुमांन जू को

इंदव छंद

सागर सार उधार किये नग, माल बिभीषन भेट करी है।
सो वह ले करि ईस निसाचर, आइ सियाबर पाइ[4] धरी है।

---

१. प्रेम। २. पालत। ३. अक्रूर। ४. आग।

चाहि सभा मनि देखि हनूं गरि, डारि दई चित चौंकि परी है।
रांम बिना मनि फोरि दिखावत, काटि तुचा यह नांम हरी है ॥२८

बिभीषन जू को टीका

इंदव छंद · भक्ति बिभीषन कौंन कहै जन, जाइ कहीस सुनौं चित लाईं।
चालत ज्याभि अटक्कि परी, विचि मानुष येक दयोल वहाई।
जाइ लग्यौ तटि राक्षस गोदन, ले करि दौरि गये जित राई।
देखि र कूदि परचौ सु ठरचौ जल, आजहिं रांम मिले मनु भाई ॥२६
ता छिन रीझि दई बहु दैंतन, आसन पैं पधराइ निहारै।
आनन अंबुज चाहि प्रफुल्लत, आप खड़ौ[1] कर दंड सहारै।
होत प्रसन्न न मांहि डरै अति, धाम रहौ मम राइ उचारै।
पार करौ सुख सार यही बड़, दे रतनांदिक सिंध उतारै ॥३०
नांम लिख्यौ सिर रांम सिरोमनि, पार करै सति-भाव उचारै[2]।
ठौर वही नर रूप भयो फिर, ज्याज हु आइ गई सु किनारै।
जानि लयो वह पूछत है सब, बात कही यन लेहु बिचारै।
कूदि परचौ जल देखि कुबुद्धिन, जाइ चल्यौ हरि नाम उधारै ॥३१

सवरी जू की टीका

आरनि मैं सवरी भजि है हरि, संतन सेव करचौ निति चावै।
जांनि तिया तन नूंन किया कुल, या हित तैं किन हूं न लखावै।
रैंनि रहै तुछ माग वुहारत, आश्रम मैं लकरी धरि जावै।
गोपि रहै रिष जांनत नांहि न, प्रात उठै सब आश्चर्ज पावै ॥३२
मातंग ईंधन बोझ निहारत, चोर यहां जन कौंन सु आयो।
चोरत है निति दीसत नांहि न, येक दिनां पकरौ मन भायौ।
चौकस रैनि करी सब सिष्षन, आवत ही पकरी सिर नायौ।
देखत ही द्रिग नीर चल्यौ रिष, बैंनन सूँ कछू जात कहायो ॥३३
नैंन मिले न गिनै तन छोत न, सोच न सोत परी न निकारै।
भक्ति प्रभाव भलै रिष जांनत, कोटिक ब्राह्मन या परिवारै।
राखि लई रिष आश्रम मैं उन, क्रोध भरे सब पांति निवारै।
आवत रांम करौ तुम द्रसन-मै प्रलोकउ जात सवारै ॥३४

---

१. पड़ौ। २. उवारै।

दीरघ सोग बियोग भयौ गुर, रांम मिलाप सरीरहि राखै।
घाट बुहारत न्हांवन को निति[1], बेर लगी रिष आवत पाखै।
लागि गयौ तन क्रौध करचौ बहु, न्हांन गयो सिवरी पग नाखै।
रक्त भयो जल मांहि लटै लट, गौतम सोच भयौ सब भाखै ॥३५

ल्यावत बेर वसेर लगी हरि, चाखि धरै फल रांमहि मीठे।
मारग नैंन बिछाइ रहै रघुराई चले कब आइसि ईंठे।
देखत भाग घणे दिन वीतत, दूरि गये दुख आवत दीठे।
नूंन सरीरहि जांनि छिपि किहि, बूझत आपन स्यौंरि कईं ठे ॥३६

बूझत बूझत आइ रहे जित, रांम सनेह भरे तित स्यौंरीं।
आश्रम मैं तब जांनि लये हरि, अंग नवावत लावत त्यौरी।
आप उठाइ मिले भरि अंकन, नैंन ढरै जल प्रेम पग्यौ री।
बेरन खाइ सराहत भोजन, और कहूं न सवादि लग्यौ री ॥३७

सोच करै रिष आश्रम मैं सब, नीर बिगार सह्यौ नहि जावैं।
आवत राम सुने बन मारग, जाइ बसै उन भेद सुनावैं।
आज बिराज रहे सिवरी-गृह, मांन मरचौ सुनिकैं दुख पावैं।
जांइ परे पग तोइ करौ सुछ, पाव गहौ भिलनी सुध भावैं ॥३८

जटायु को टीका

रांवन सीतहि जात हरें खग, राज सुन्यौ सुर दौरत आयौ।
राड़ि करी तन वारि हरी परी, प्रांन रखें प्रभु देखन भायो।
आइ र गोद लयो द्रिग नीरन, सींचत बात कही रजरायो।
मांन करचौ दसरत्थ समां जल-दांन दयो पुनि धांम पठायो ॥२९

और कौ गोद धरैं अखियां जु भरैं, हरि छांह करैं मुख धोइ निहारैं।
पूंछत पक्ष न लक्ष न हैं छत, वा इक चुंगल चौंच सुधारैं।
मोचत आंसुन सोचत रांम, सह्यौ दुख मो-हित गीध बिचारैं।
आपन हाथन श्रीरघुनांथ, जटायु की धूरि जटांन सु झारैं ॥४०

मूल

राघो जू कौ　**अैसें जगदीस जन कारनैं जरायौ मुनि,**
मनहर　　　　**ईश्रज बढायौ उनि आय अंबरीष कौ।**

---

१. निसि।

कोप्यौ मुनि काल-रूप बरत न छाड़ै भूप,
कष्ट सह्यौ तन निज धार्‌यौ ध्रम ईष कौ।
जन परि कोपत[भु]जुलाह ल चिराक्यौ चक्र,
आंनि कै पर्‌यौ है बक्र आगि उद भीष कौ।
राघो दुरबासा दुख पायो अति क्रोध करि,
फेर्‌यो तिहूं लोक हरि मांन मार्‌यौ तीष कौ ॥३९

टीका

इंदव छंद
कौंन करै अमरीष बरोबरि, भक्त इसौ उर और न आसा।
सतन पैं कछू सीख सुनी नहि, खैंचि चलात जटा दुरबासा।
काल-सरूप उपाइ लई, पठई जन पैं वह धीर हुलासा।
चक्र रिषाइ र राख करि रिष, भीर परी डरिकैं अब न्हासा ।।४१
जावत लोकन लोकन मैं मम, जारत चक्र सहाइ करौ जू।
संकर वै अज इंद्र कहै यम, बांनि बुरी उर बेद धरौ जू।
जाइ पर्‌यौ परमेसुर पाई, कहै अकुलाइ सु ताप हरौ जू।
भक्त अधीन मनूं गुन तीनन, भक्त-बछल्ल बिड़द्द खरौ जू ।।४२
संतन कौ अपराध करौ तुम, जात सह्यौ किम भौ अति प्यारे।
बांम धनादिक त्याग करै सुत, मोहि भजै दिन राति बिचारे।
साच कहौं उन साधु बिनां रिष, औरन सौं दुख जाइ न टारे।
बेगहि जा अमरीष कनै मम, भक्त दयाल करै जु सुखारे ।।४३
होइ निरास चल्यो नृप पास, उदास भयौ पग जाइ गहे हैं।
भूप लजात करै सनमांनहु, चक्र[१] दिसा ढरि बैंन कहे हैं।
भक्त न चाहत और पदारथ, ब्राह्मन राखहुं कष्ट सहे हैं।
ब्याकुल देखि सहाइक संतन, आइ गई मनि तेज रहे हैं ।।४४
भूप-सुता अमरीष सुने जन, चाव भयो उनहीं बर कीजै।
मात पिता न कही दिल लासिक, पत्ति कीया उर को लिखी दीजै।
कागद ब्राह्मन दै पठ्यो कर, लैं नृप बांचिति याहि न धीजै।
जाइ कहै उन जोइ घनी वत, बोल सुहाइंन भक्ति भनीजै ।।४५

१. चत्र।

भूप-सुताहि कहै दुज नाटत, पौंन समांन गयो अर आयो।
फेरि पठावत जांनत पैलहि, भक्त बड़ौ बिषिया न लुभायो।
जाइ कहौ मन भक्ति रिझावत, मांनि लयो पति और न भायो।
मोहि न आदरि है मन बाचक, प्रांन तजौं कहि कैं समझायो ।।४६

ब्राह्मन जाइ कहो सुनि ब्याकुल, खग्ग दयो नृप फेर फिरावो।
ब्याहु भयो न उछाह समावत, देखि छिबी अमरीक सुभावो।
नौतम मंदिर जाइ उतारहु, चाहि जिको वह हीन वड़ावो।
पूरब भक्ति हुती हमरं तुछ, था करि भाव बध्यौ र मिलावौ ।।४७

सेस निसापति मंदिर मैं लुकि, मांजत पातर दैंत वुहारी।
लेपन धोवन दीपक जोवन, प्रेम सनेह लग्यौ अति भारी।
भूपति देखि निमेख न लागत, कौंन चुरावत सेव हमारी।
तीन दिनां मधि जांनि कही उन, जो मनि मूरति ल्यौ सिर धारी ।।४८

मांनि लई मनु मंत्र दयो यह, भोर भये सिर सेवन ल्याई।
बस्तर औ पहराइ अभूषन, देखि रहै द्रिग बीर बहाई।
राग र भोग करै अतिभांवन, भक्ति बधी पुर मैं सब छाई।
भूपति कांनि परी चलि आवत, देखन कौं बुधि हूं अकुलाई ।।४९

पाव धरैं हरवैं हरवैं कब, देखत मैं उन भाग भरी कौं।
चालि गये अलि ठीक नहां कछू, गाइ रही द्रिग लाइ झरी कौं।
बीन बजावत लाल रिझावत, त्यूं अति-भावत धन्य घरी कौं।
दूरी रह्यौ नहिं जात गयो ढ़िग, देखि उठी गुर-राज हरी कौं ।।५०

बीन बजाइ र गाइ वही बिधि, कांन परैं सुनि ह्वै मन राजी।
भीजि रही सु कही नहि आवत, चित्त चुभ्यौ मधुरै सुर बाजी।
फेरि अलापि र तांन उचारत, ध्यान मई मति लै हरि साजी।
भूपति प्रेम मगन्न रह्यौ निसि, भौर भई सब और कहाजी ।।५१

बात सुनी तिय और न ब्याकुल, कौन समां उन भूपति मोह्यो।
आपन हूं निति सेव करैं पति, मत्ति हरै बिरथा तन खोयो।
भूप सुनी मन मांहि खुसी अति, चौंप लगी पुर धांमनि जोयो।
चाव बढ़ै दिन-ही-दिन नौतम, भाव तिया गुन यौं सुख होयो ।।५२

ध्रूवजी का मूल

ध्रूव की जननी धुव सूंज कहै, सुत रांम बिनां नर-नारि न वोपैं।
रोज तजौ हरि नाम भजौ, खल की बृति त्यागि कहा अब कोपैं।
धुव के मन मैं बन की उपनी अब, ज्ञांनी सोई जो अज्ञांन कौ लोपैं।
राघो मिले रिष नारद से गुर, बोल बक्यो हरि आंवैंगे तोपै ॥३२

सुदामाजी का मूल

मनहरं छंद :

पतनी प्रमोधत है पति कौं बिपति मधि,
कंत जिन लेहु अन्त कह्यौ मेरौ कीजिये।
आपां हैं नृबल निरधार निरधन अति,
झौंपरा पैं नांहीं फूसभ मनमैं भीजिये।
कहत सुदांमां सुनि बावरी उघारै अंग,
मो पैं कछू नांहीं भेट कैसैंक मिलीजये।
राघो रौरि चावल कवल-नैंन काजैं कन,
लूघरे की बांधी गांठि जाहु दिज दीजिये ॥३३
चले हैं सुदांमां दिज द्रुबल दुवारिका कौं,
जाके छुये बेर कोऊ खात नैं खलक मैं।
आगैं भेटे कृष्णजी कृपाल करुणा-निधांन,
लैकै भरि मूठी आप आरोगे हलक मैं।
सदन सुदांमां कै जु अष्ट-सिधि नव-निधि,
इंद्र हु कुबेर सम कीयो है पलक मैं।
राघो गयो उलटिउ सास लेत बारूं-बार,
देखि दुख भूलो मणि-माया की झलक मैं ॥३४

सुदामाजी की टीका

इंदव छंद

आपन धांम कनंक-मई लखि, मांनत कृष्ण पुरी चलि आई।
नीकरि लैंन गईं तिरिया तिहि, मांहि चलौ तब मित्र बनाई।
ध्यांन वहै हरि माधुरता तन, दे हरखै नव प्रीत वधाई।
चाह नहीं उर भोगन की वहै, चाल चलै तन कौं निरबाई ॥५३

बिदुरजी की टीका

न्हावत अंग पखारि बिदुर्तिय, कृष्ण जु आइर बोल सुनायो।
प्रेम भयो मद पीवत लाज न, दौरि वही बिधि द्वार चितायो।

नांखि दयो पट पीत लयो करि, आइ गयी सुधि बेस वनायो।
बैठि खंवावत केरन छीलक, आइ खिज्यौ पति यौं दुख पायो ।।५४
आप लग्यौ फलसार खवावन, चैंन भयौ तिय कौं समझाई।
कृष्ण कहै यह स्वाद लगै मम, प्रेम मिल्यौ वह हौं सरसाई।
नारि कही जरि जाहु यहैं कर, छ्यौंत खवाइ महा पछिताई।
हेत बखांनि करयौ उन दंपति, जांनत सो हरि भक्ति कराई ।।५५

चंदरहास को टीका

भूपति कै सुत चंदरहास जु, खोसि लियो पुर औरस ल्याई।
धृष्टि वुधी धरि आप रहै सुत, बालन मैं निति केलि कराई।
बिप्रन कौ सम दाइ भयौ जित, जाइ कुमारन धूंम मचाई।
बोलि उठे दिज ह्वै कवरं बर, वालन यौं सुनि लाज न माई ।।५६
सोच परयौ अति येह बिचारत, होइ इसौ पति मोर सुता कौ।
प्रांन बिनां करिये उर मैं यह, नीच वुलाइ लये सउ ताकौ।
आरनि चालि गये छबि देखि र, जो निजरौ हम सोचिहु ताकौ।
मारत हैं अब कौंन सहाइक, बाहन मैं कर नैंन जु ताकौ ।।५७
मांनि लई यक गोल कपोलन, काटिरु[1] सेव करी अति नीकी।
होइ गयो हरि रूप ततत्पर, जोरि लये कर वाहि कही की।
आइ दया मुर्छाइ परे धर, भक्ति भई क्रम दाट न पीकी।
काटि लई छटई अगुरी उन, जाइ दई दुखदाइक जी की ।।५८
देस रहै लघु भूप सबै सुख, पुत्र बिनां दुख पावत भारी।
आरनि आइर देखत बालक, छांह करै खग सी रखवारी।
दौरि उठाइ लयो सु गयो पुर, मांनत मोद घणी श्रियवारी।
होत घणे दिन जांनि लयो मन, राज दयो इन भक्ति पियारी ।।५९
देसपती कछू भूप न पावत, फौज दई र दिवांन पठायो।
आंनि मिल्यौ वह जांनि लयो उन, मारन कौं इक फैंम उपायो।
कागद हाथि दयो सुत दीजिये, बात करौ वह मोहि खनायो।
पासि गयो पुर बाग बिराज र, सेव करी फिर सैंन करायो ।।६०

---
१. काठिरु।

साथि सहेलिन आवत वागहि, होइ जुदी छवि देखित रीझी।
कागद पाघ लयो झुकि बांचत, देन लिख्यौ बिष तातहि खीजी।
नाम हुतौ बिषया द्रिग काजल, लैं बिषया करि कैं रस-भीजी।
आंनि मिलो फिर आलिन मैं मद, लालन ध्यांन गई गृह धीजी ॥६१
चंदरहास गयो पठ्यो जित, देखि मदन गलै स लगायो।
कागद हाथि दयो उन बांचत, बिप्र बुलाइ र व्याह करायो।
रीति करी नृप जीति लिये धन, देत गयो निठि चाव न मायो।
आइ पिता सुनि मींच भई किन, बींदहि देखि घणों दुख पायो ॥६२
बैठि इकांत कही सुत बात, करी अति भ्रांत सु पत्र दिखायौ।
बांचत आपहि कौं धिरकारत, रांड सुता परि मारन भायौ।
नींच बुलाइ कही मढ़ जा करि, आवत ता नर मारि सुहायौ।
चंदरहास करौ तुम पूजन, है कुल-मात सदा चलि आयौ ॥६३
पूजन जात कहै नृप पुत्रन, मैं उन राजहि दे बन जांऊं।
ल्याव बुलाइ मदंन भलौ दिन, जाइ महूरति फेरि न पांऊं।
बेगि गयो चलि जाइ लयौ मग, देत पठाइ म सेव कगांऊं।
पैठत बद्ध करचौ इन भूपति, राज दयो अब मैं न रहाऊं ॥६४
आइ कहीस मदंन मुवो मढ़, कांपि उठ्यौ र झरी द्रिग लागी।
देखि परयौ सिर पाथर फोरत, मृतु भई समझयौ न अभागी।
चंदरहास चले मढ़ पासहु, मातहि अंग चढ़ावत रागी।
मात कहै तव मैं अरि मारत, ह्वै सग्जीव उठे बड़ भागी ॥६५
राज करै इम भक्त किये सब, पासि रहै तिन क्यूं र बखांनौं।
नांम उचारत धांमन धांमन, कांम न और सु सेव न मांनौं।
मोह न लोभ न कांम न क्रोध न, है मद नांहि न नैंन नसांनौं।
आदिर अंति कथा उर भावत, प्रात प्रढ़ै[1] फल जै मन जांनौं ॥६६

समुदाई टीका

नांम कुखार अपत्ति सुमैत्रिय, राघवदास बखांन करयौ है।
कृष्ण कही मम भक्त बिदूर जु, दे उपदेसहि भाव भरयौ है।
प्रेम-धुजा चित्रकेत पुरांनन, दूसर देह पलट्टि बरयौ है।
ध्रू अकरूर बड़े पृय उधव, पत्रन पत्रन नांम धरयौ है ॥६७

१. पढ़ै=पुत्री।

कुंती को टीका

प्रीति न देखत हूं पिरथा बिन, भूत र देव बिपत्ति न मागै।
चाहत है मुख लाल हि देखन, होहु दयाल कि द्यौ बन बागै।
ब्याकुल देखि भरी प्रभु आंखिन, फेरि लये धन प्रांन सु जागै।
अंतर ध्यान भये सुनि कांनन, ता छिन हीं मछ ज्यूं तन त्यागै ।।६८

द्रोपति की टीका

द्रोपति बात कहै दख कौंनस, खैंचत अंबर ढेर[1] भयो है।
द्वारिक बासि कह्यौ सु हुतौ ढिग, स्वैपुर जाइ र आइ रह्यौ है।
आप दिवांवन भेजि द्रुबासहि, जात युधिष्टर सीस नयौ है।
धोइ चंरी तिय आइ कही नृप, सोच भयो कत कृष्ण गयो है ।।६९
भाव वती सुनि बाकि भयो मन, कृष्ण पधारि कर्यौं मन कांमं।
भूख लगी कछू देहु कहै हरि, सोच हिये अन है नहि धांमं।
पूरण ह्वै जग मांहि रह्यौ पगि, नांहि छिपाइ कहै इम स्यांमं।
साकहि पात लयौ जल सूं सब, धापि तिलोक दुर्बासहु नांमं ।।७०

मूल छप्पै

नांरांइन तैं बिद्धि भयौ, बिध तैं स्वांभू-मनु।
स्वांभू-मन कै प्रेय बरत, तास कै अगनीधर गन।
अगनीधर कै नाभि, जिनैं रिझयौ करतारा।
तास पछोपै प्रगट, रिषभदेव सु अवतारा।
रिषभदेव कै सत सुवन, जन राघो दीरघ भरत पखि।
दसक्षत भुज भये नव जोगेसुर, अवर इक्यासी राज-रिष ।।३५
तन मन धन अपि हरि मिले, जन राघो येते राज-रिष।
उतांनपात पृथबरत, अंग मुचकंद प्रचेता।
जोगेसुर मिथलेस पृथु, प्रक्षित उधरेता।
हरिजस्वा हरि-बिस्व रघु, गुरण जनक सुधन्वा।
भागीरथ हरिचंद सगर, सति ब्रत सुमन्वा।
प्राचीन ब्रही इष्वाक रघु, रुकमांगद कुरगाधि सुचि।
भरथ सुरथ सुमती रिभु, अैल अमूरति रैग रुचि ।।३६

---

१. टेर।

सतधन्वा बबस्व नघुष, उतंग भूरद बल।
जदु जजाति सरभंग पूर, दीयो जोबन बल[1]।
गै दिलीप अंबरीष मोर-धुज सिवर पंड ध्रुव।
चंद्रहास अरुरंत, मांनधाता चकवै भुव।
संजै सम्मीक निम भारद्वाज, बालमीक चित्रकेत दक्ष।
तन मन धन अर्पि हरि मिले, जन राघो येते राज-रिष ॥३७

आदि सक्ति ॐ नमो नमो, लक्ष उमां ब्रह्मांणी।
नमो तिपुर कन्यां सु, नमो पतिबरता रांणी।
सति रूपा देहूति, सुनीति सुमित्रा अहल्या।
कौसल्या तारा चूड़ाला, कहिये पहल्या।
सीतां कुंतां जयंती बृंदा, सत्यभांमां द्रोपती।
अदति जसौधा देवकी, अब धर्म सरिवोपती।
मंदवरि त्रिजट मंदालसा, सची अनसुया अजनीं।
जन राघो रांमहि मिली, पतिबरता पतिरंजनीं ॥३८

मनहर छंद

ॐ कारे आदिनांथ उदैनांथ उत्पति,
ऊंमांपति सिंभू सत्य तन मन जित है।
संतनांथ बिरंचि संतोषनांथ बिष्णजी,
जगंनांथ गणपति गिरा को दाता नित है।
अचल अचंभनाथ मगन मिछंद्रनांथ,
गोरख अनंत-ज्ञांन मूरति सु बित है।
राघो रक्षपाल नऊं नाथ रटि राति दिन,
जिनको अजीत अबिनासी मधि चित है ॥३९

प्रेयब्रत प्रगट पसारौ तज्यौ प्रथम ही,
बृकत बैरागी भयो मोक्ष पद कारणै।
ताकौ बिधि बिबिधि सुनायौ मत-मात्तंग ज्यूं,
लेहु सुत राज परकाज तोहि सारणै।
मन बिन जीते न मिटत्त मनसा के भोग,
ह्वै है अगै रोग सोई क्यूं न अब टारणै।

---

१. दल।

येकादस अर्बद कीयो है राति दिन राज,
रांम न बिसारचौ छिन राघो ताकौवारणैं ॥४०
नमो भर्थ चक्रबृती जिन कीये नवखंड,
अष्ट-खंड आतन कै ऐक खंड आप कौ।
सोऊ पुनि पुत्रन कौं दे गयो नरेस देस,
गलका कै तटि जाइ कीन्हौं ब्रत बाप कौ।
निमत क्रम पाइ मंजन करत मुनि,
मृगी ग्रभ टारचौ डरि स्यंघ की अताप कौ।
राघो कहै जदपि जंजाल तजि लीन्हौं जोग,
मृग छूंनां छूंवत ही भंग भयो जाप कौ ॥४१
गौंडवाणौं देस तहां देबिका दिपत ऐक,
छठै मास मांगै बलि माणस के सीस को।
रिषसुते खेतखलै खिज भुज ताके चर,
पकरि लै आये उन पेसि कीयो ईस की।
भूप रीझ्यौ देखि रूप तुष्ट ह्वै कराई युष्ट[1],
अष्टमी कौं अर्पे मुनि जालपा नै रीस की।
राघो देवि देखि रिष नृपति कौ कीनौं नास,
असे मुनि मारौं[2] तौं हू चोरि जगदीस की ॥४२
देवी देखि साहिस स हंस बेर की स्तूति,
तुम्ह रिष इहां इन मूरखन आने हौ।
तुम्ह भर्थ चक्रबरती हुते चहूं चक मधि,
पुनि मृगराज भये तहां हम जांने हौ।
अब दिज देह पाइ जड़-भर्थं जोगेसुर,
जीवन मुक्ति मुनि मोक्ष पद माने हौ।
राघौ रिष ऐक रस मात भई ताकै बसि,
धनि रिष तेरौ मौंन रिझे न रिसाने हौ ॥४३
मृग मधि श्रुति रही मृग गयो मृगन मैं,
मृग मृग करत ही मृति भई मुनि की।

---

१. पुष्ठ। २. मोरौं।

तातैं मुनि मृगी-पेट आइ कैं जनम लीयो,
दस ब्रष मृग रह्यौ मांहै बृति धुनि की।
तीसरै जनम निज नेष्टीक बिप्र भयो,
देह तैं निसंक नहीं संक पाप पुनि की।
राघो रघु नृपति सूं बोले मुनि मौनि तजि,
जांन्यौं जड़ भर्थ अर्थ मोक्ष भई उनि की ॥४४

जनकजी को टीका : [मूल]

मनहर छंद
करम-हरण कबि बरतमान भूत भव्य,
आये नव जोगेसुर जीवन जनक कै।
नाहरी के दूध सम नृबृती धरम धार,
छीजै न लगार राखि पातर कनक कै।
राज तजि, मोहं तजि,सुद्ध होह हरि नांमं भजि,
कंचन ह्वै छुयें लोह पारस तनक कै।
राघो रह्यौ थकित थिराऊ धुनि ध्यांन लगि,
कीट गही मीट मारचौ भृंगी की भुंनक कै ॥४५
माया मांधि मुकति बहतरि जनक भये,
चित्र के से दीप रहे धारचौ धर्म समता।
सुख-दुख रहत गहत सतसंग सार,
तजे हैं बिकार न काहू सूं मोह ममता।
ऐसैं नग जनम जतन सेती जीति गयो,
बंदगी मैं बिघन न पारी कहौं कमता।
श्रवन मनन मन बच क्रम धर्म करि,
राघो ऐसैं राज मैं रिझायौ रांम रमता ॥४६

छपै
भृगु मरीच बासिष्ट, पुलस्त पुलह क्रतु अंगिरा।
अगस्त चिवन सौंनक, सहंस अठ्यासी सगरा।
गौतम ग्रग सौभरी रिचिक-सृगी समिक गुर।
बुगदालिम जमदगनि, जवलि परबत पारासुर।
बिस्वामित्र माडीफ कन्व, बांमदेव सुख ब्यास पखि।
दुरबासा अत्रे अस्ति, देवल राघो ब्रह्मरिष ॥४७

धरमपाल रक्षपाल, नमो द्रिगपाल बखांणौं।
नमो सूर सापुरस, नमो कबि चतुर सुजांणौं।
नमो सती सरबज्ञ, नमो धाता धर्म-धारी।
नमो इंद्रजल भोमि, नमो आत्म उपगारी।
नमो जनत जननी सक्ति, भक्ति भक्त भगवंत जै।
नमो जती जोगेसुरां, राघो दासन-दास है ॥४८

नमो सुबरण कुबेर, नमो धर्मराइ मन्वंतर।
चित्रगुप्त गणपति, नमो बागी महामंतर।
नमो सप्तरिष अनंत रिष, नमो त्रिभवन तत-बेता।
बालखल्य रिष अष्ट, वसु नृप नवखंड जेता।
बिप्र बेद गंगा गऊ, सुमरि सकल सुक्रत सिलो।
राघो जीवन-मुक्ति मत, सब दरसन सूं मिलि चलौ ॥४९

मनहर छंद

नमो इंद्र नरचंद सकल सुरपति सत्य जल,
करि सींचौ थल बिपति निवारणा।
जीव की जीवनि चतुरासी लक्ष लगी तोहि,
पीव पीव टेरै जीव लेत निति वारणां।
सची के नाइक मैंना उरबसी रंभा के कंत,
लीजियें न अंत नव-खंड निस तारणां।
राघो गज अैरापति कामधेन कलपबृक्ष,
अष्ट-सिधि नव-निधि रहै जाकै द्वारणां ॥५०

नमो दिव्य देवता कुबेर कुलि आज्ञाकारी,
अब गति नांथ अबिनासी कौ भंडारी है।
मायाधारी मूरति अनंत कोटि रबि-छबि,
साहिब की साहिबी सकति अति धारी है।
रिधि सिधि अरब खरब जग जांनैं श्रव,
हरि जी हजूरि राखि सौंपी ताहि सारी है।
राघो येती सहित रहत रत रांम जी सौं,
धनि सो धनाढ़ि नृप सोभै अति भारी है ॥५१

नमो बरण देवता बनाइ कहूं कहां लग,
तेरैं पग पूजत पताल नाग नागणी।

नवसै निवासी नदी तेरी जीभ जग मध्य,

सप्त साइर उर गावै बाग बागरणी।

तेरौ बल ब्रह्मण्ड पचीस लग पूरै जल,

अकल अजीत प्रलै काल पौढ़ौ है धरणी।

काली गहली बीनती कछूक बनि आई मो पैं,

राघो कही सुलप तुम्हारी सोभा है धरणी ॥५२

कसिब सुवन तेरे ऊगत[1] ये तो प्रताप,

रजनी के पाप गुर जाप सुनि सटके।

जल सुचि दांन असनांन षट-क्रम धर्म्म,

खोलत कपाट भांग भूप अब घटके।

मुदित सकल बन गऊ उठि लगी तिन,

रांम जन रांम कांम पाठ पूजा अटके।

भगति करत भगवंतजी की भासकर,

राघो रटि सुमरिये भाव ये सुभटके ॥५३

छप्पै

बड़ी कला करतार, कीयो ससि सूं अब थोकं।

रजनी मंडन रतन, सुधा सरवैत[2] अब लोकं।

सीतल मिष्ट मयंक, चराचर मैं संर्चार है।

रस गोरस अन सकल, चंद सरजीवत करि है।

राघो रुचि रांम हि रटै, ससि ब्रह्मण्ड-प्यंड मधि मुदित।

पूरणवासी प्रष्ण अति, बित घटियां बाको उदित ॥५४

मनहर छंद

अपरस उतम उतंग जाकै सोभै अति,

बृंचि की सुता बखांणौं बाणी ब्रह्मचारणी।

सरस्वती सरल जु सलाघा कीये प्रष्ण ह्वै,

जब ही आराधै कोऊ ह्वै है काज कारणी।

कोमल कुमारजा है न्यारी निकलंक कन्या,

अतुल सकति सु सुफल तत-धारणी।

राघो कहै रति सूं रहैत तन तेजपुंज,

प्रसन-बदन हरि हित पैंज पारणी ॥५५

---

१. ऊगन येता। २. सुधा सरवत।

प्रथम आदेस है गनेस गवरी के सुत,
जाचै जाहि बंदीजन बिद्या कौ निधांन है।
चतुर निगम नव द्वादस पुरांन पढ़ै,
जांनैं दस च्यारि छह जेतौ गुनगांन है।
लक्षन बतीस जगदीस के सहस्र-नांम,
पाठ करै आठौं जांम ईश्वज आसांन है।
राघो कहै बीनऊं बिनाइक बिद्या के गुर,
मांनें नर-नारि-सुर जांनन कौ जांन है ॥५६

छपै
लक्ष लक्षमनां कुमार, रांम के कांमहि लाइक।
हेटि हेटि हनुमंत, प्रणम्य रघुपति के पाइक।
गरुड़ अतुल-बल बरणि, बिष्ण बिधनां कौ बाहन।
कत्र स्यांम सिव सुवन, मदन-जित मन अवगाहन।
ब्यास पुत्र सुखदेव जपि, गोरख ज्ञांन गिरापती।
राति दिवस रत रांम सौं, राघो येते षट जती ॥५७

मनहर छंद
गरुड़ गोपालजी कौ आग्याकारी आठौं जांम,
सारे हैं अनंत कांम असौ स्वांमी कारजी।
पल मैं सकल ब्रह्मण्ड खंड आवै फिरि,
बैठत बैकुंठ-नाथ चलत अपारजी।
तीन्यूं गुन जीति गही नीति जु नृर्वात पद,
छाड़े विषै भोग रोग साध्यौ जोग सारजी।
खगपति अति भजनीक है रहत दृढ़,
राघो कहै राति दिन रटत रंकारजी ॥५८

इंदव छंद
जाजली मांन महास्यंभू कौ सुत, देखौ मतौ कत्र स्यांम जती कौ।
नारी जिती जननी करि देखत, रूप सबै प्यंड पारबती कौ।
सील गह्यौ मनसा मन जीति कैं, भोग न भावत जोग है नीकौ।
राघो लगी धुनि ध्यांन टरै नहीं, जाप जपै हरि प्रांनपति कौ ॥५९
कसि देख्यौ महा कस क्यौं न कहूं, सुख कैं मुख नैंकन भेद दुनी कौ।
श्रुग की पतिनी सजि कैं उतनी, चलि आई जहां बन-बास मुनी कौ।

कीये लावन-रूप रिझावन कौं, सुख कै मुख बाइक है जननी कौं।
आगि कौं लागि कहा करै मांछर, राघौ कहै सत सूर अनी कौ ॥६०

मनहर छंद
द्वादस अबद राख्यौ सबद पिता कौ पण,
लखि सम लक्षमन दास रांमचन्द्र कौ।
फल जेते फूल पात राखे है हजूरि तात,
आप न भक्षण कीन्हौं आप सेती अंद्र कौ।
रांवन पलटि भेख सीया हरि लै गयौ,
सु बिपुन मैं निपुन निवारचौ दुख-बंध कौ।
राघौ कहै पदम अठारै कपि रहे जपि,
तहां लक्षमन सिर छेदचौ दसकंध कौ ॥६१

इंदव छंद
रांम के कांम सरे सब ही, जब ही हनुमंत लीयो हसि बीरो।
लंक प्रजारि सीया कौ संदेस, ले आइ दई रघुनाथ हि धीरौ।
रांम चढ़े जिहि जांम हनूं संगि, जाइ परे दल सागर तीरौ।
राघौ कहै जंग जीति रमापति, लंक विभीषण कौं दई थीरौ ॥६२
हा हा हनूं कीयो कांम घनौं, रजनी बिचि सैल समूह ले आयौ।
मग दैत कीये छल छंद जिते, सुत ते सब जीति कैं आतुर धायो।
मुरछें लक्ष बोर से धीर धरा धनि, सेवग प्रात ही भ्रात जिवायो।
राघो कहै रघुनाथ कै साथ, सदा हनुमंत कीयो मन भायो ॥६३
इंद ज्यौं जिंद की जीवनि गोरख, ग्यांन घटा बरख्यौं घट धारी।
नृप निन्याणवै कोड़ि कीये सिध, आतम और अनंतन तारी।
बिचरै तिहूं लोक नहीं कहूं रोक हो, माया कहा बपुरी पचिहारी।
स्वाद न सप्रस यौं रह्यौ अप्रस, राघो कहै मनसा मनजारी ॥६४

मनहर छंद
चले हैं अजोध्या छाड़ि रामजी पिता कै काज,
भरथ न कीन्हौं राज राखी सिर पावरी।
धृग यह राज तज्यौ नाज रघुनाथ काज,
काहे कौं विछोहे भ्रात मात मेरी बावरी।
आसन अवनि खनि नीवै सैंन कीनौं जिन,
रोवत बिवोग मनि रहै तन तावरी।

राघो कहै भरत अरथ गृह भूलि गयौ,
मेरो कछू नांही बस रजा रांम-रावरी ॥६५

छपै
राघो रिझ ये रांमजी, भलौ गह्यौं मत मुक्ति कौ ॥
बांणासुर प्रहलाद कहूं, बलि मय पुनि त्वाष्टर ।
असुर भाव कौं त्यागि, भज्यौ सों निस-दिन नरहर ।
रांम उपासिक तीन, और रांवण सम ईहै ।
लंका लेकै रांम, बिभीषन कौं जु दई है ।
कीयो मंदौवरी त्रियजटी, मांन महात्म भक्ति कौ ।
राघो रिझ ये रांम जी, भलो गह्यो मत मुक्ति कौ ॥६६
अथग विमल जल स्यंध, पावक हूं टिकैं न धरणी ।
तब संगी तजि गये सकल, सुत सबही धरणी ।
बरष सहंस युध कीयो, लीयो तब खैचि मांहि जल ।
गज कायर ह्वै रह्यौ, गयौ मन कौ सब छल बल ।
बल बीत्यौ डूबण लग्यौ, जीति लीयौ जब निपट अरि ।
राघो रटत रंकार कै, ततक्षन बिमुचायो सु हरि ॥६७

अरिल छपै
दया धर्म चित राखि, संत कौं पोषिये ।
दुरबल दुखी अनाथ, तास कौं तोषिये ।
करि लीजै इहि बेर, भजन भगवंत कौं ।
पीछैं कछु न होइ, बुरौ दिन अंत कौ ।
जा दिन देह बल घटै, भजन बल राखि है ।
जन राघो गज गीध, अजामिल साखि है ॥६८
गनिका गहबर पाप कीये, अबिहत अति औंड़े ।
पर-पुरषन सूं भोग, रिझाये पापी भौंड़े ।
हाड़ चांम अर अंत, मुत्र भिष्टा जिन मांही ।
गीड रींट रत मास, बदन तैं लाल चुचांहीं ।
अंत-काल सुकृत हृदय, रटि रांम सनातन मैं भई ।
राघो प्रगट प्रलोक कौं, चढ़ि बिमांन गनिका गई ॥६९
उधो बिद्र अक्रूर भये, मोक्षारथ मैत्रे ।
गंधारी धृतराष्टर, सजैं सारथि ह्वै त्रे ।

सु रतिदेव बहुलास, आस मन की सब पूरी।
मित्र सुदामां जानि कीयौ, सब ही दुख दूरी।
सोक समद तैं काढ़ि कैं, कीये महाजन मुक्ति रे।
राघो सूके काठ सब, होत अबै सतसंग हरे ॥७०
नमो सूत बक्तास नमो, रिष सहंस अठ्यासी।
सुणी भागौत पुरांण भक्ति, उर मांहि उपासी।
चटिड़ा द्वादस कोड़ि, रांम सुमर्त कुलि उधरे।
जन प्रह्लाद प्रसाद, पाय संगति सौं सुधरे।
साध सती अरु सूरिवां, हीरा खड़ गरू बाज।
राघो अंस दधीच कौ, कीयो तिहूं-पुर राज ॥७१
जन राघो रांम अ रीझ है, परि रीझत है सर्बस दीयें॥
उछ बृति जु सिवर सुदरसन, हरिचंद सत गहि।
स्यार सेठ बलत्री[1] ईषरण, जित रंतदेव लहि।
करन बल्य मोहमरद, मोरध्वज सेद बेद बन।
परबत कुंडल धृत बार, मुखी च्यारि मुक्ति भन।
ब्याधि कपोत कपोती कपिला, जल-तटांग उपगार जल।
तुलाधार इक सुता साह की, भोज बिक्रमांजीत बीरबल।
ये बड़ सती सताई सौं, जपि उधरे उत्म कृत कीये।
जन राघो रांम अ रीझ है, परि रीझत है सर्बस दीये ॥७२

मोहमरद की टीका [मूल]

अरिल छपै
रिष नारद बैकुंठ, गये हरि पास है।
प्रष्न करी नहीं मोह, इसौ कोइ दास है।
मोहमरद भणि भूप, रूप रांणी सिरै।
ताके सुत की घरणि, बरणि बकता तिरै।
नारद सौं निरवेद, बिष्णजी विधि कही।
राघो भेद न भ्रांति, भगत भगवंत सही ॥७३

इंदव छंद
ध्यांन धरचौं जन कौ जगदीसु र, ताही समैं रिष नारद आयौ।
तारि छुटी तबहि लगे बूझन, काहि भजौ हरि को मन भायौ।

---

१. बलह।

नाथ कही जन हाथी बिकानौं, सो मोहमरद बसेष सुनायो।
राघो कीयो रिष नारद नै छल, स्यंघ पैं साध कौ पुत्र मरायौ ॥७४

हंसाल छंद

नृप-कुमार मार दरबार नारद गये,
दास राघो कही सोग-बांणी।
रावलड़ा भवन सूं गवन करि छोकरी,
कलस ले कूवा कू चली पांणी।
देखि रिष दौरि करि जोरि पांइन परी,
रिष तहां कुवर की मृति ठांणी।
देव-दासी कहै कौंन काकौ सगो,
नापिका नांव संजोग जांणीं ॥७५

चले रिष अगम नौं आंणि रांणी मिली,
पुत्र के मृत की कही गाथा।
अहं जांनौं नहीं कहां सुत अवतरचौ,
कहां अब देह तजि गयो नाथा।
कौंन की बसत कहौ सोग काकौं करूं,
लेख की वात अलेख हाथा।
दास राघो कही स्वांन दिज की कथा,
रहे रिष ठगे से धूंणि माथा ॥७६

नृप के कुंवर की नारि नारद मिली,
कही रिष अजि पति मूवो तेरौ।
कुलबधू कही करतार की बसत है,
कौंन की नारि पति कौंन केरौ।
अब सलता प्रसंग द्वार द्वै मिलि चले,
दई गति बीछुरे कहा बस मेरौ।
दास राघौ कहै देवजी लेहु कछू,
प्रदुखी दुखत है प्राण तेरौ ॥७७

इंदव छंद

रिष नारद आप कही नृप सौं, सुत तेरौ सिकार मैं स्यंघ नैं मारचौ।
भूप कही भगवंत रजा रिण, सनबंधी आंणी बस्यौं र सिधारचौ।
देव सुनौं दृष्टांत कहौं सुत, बैसि कुंभार हीयो धुनि हारचौ।
राघो कहै इतनीं सुनि कैं रिष, आयो प्रकास कुटंब सूं तारचौ ॥७८

मोरधुज की टीका [मूल]

मनहर मोरधुज तांमरधुज हंसधुज सिखरधुज,
नीलधुज ध्रमधुज रतिधुज गनि है।
ताकी रांणीं मगन मंदालसा मुकति भई,
वैसे सुत च्यारि कोई जननी न जनि है।
हरिचंद सत त्रियलोक मैं सराहियत,
संग रुहितास मदनावती जु धनि है।
सिवर कपोत बलि[1] रंतदेव उछ[2] बृति,
राघो जाके भूरि भाग जोयां[3] जस भनि है ॥७९

छपै इम मन बच क्रम रत राम सौं, जन राघौ कथत कबीस ॥टे०
दीरघ सुध सुबाहु गरक, आसन जित गादी।
जाकै सत्रु न कोई, सत्रु मरदन सतवादी।
अति बिगि बिमत्र बिक्रांत, जुगति जोगी उर्धरेता।
अलरक अग है अजीत, सूर सर्बज्ञ ततबेता।
मात सुमगन मंदालसा, तात है तत्वनवीस।
इम मन बच क्रम रत रांम सूं, जन राघो कथत कबीस ॥८०
हरि हृदै जिनकै रहै, तिन पद पराग चाहूं सदा ॥टे०
प्रेय-व्रत जोगेसुर पृथु, श्रुतिदेव अंग पुनि।
परचेता मुचकंद सूत, सौनक प्रीक्षत सुनि।
[4]सत्यरूपा [5]त्रियसुता[6], मंदालस ध्रुव की माता।
जगपतनी बृज-बधू, कृष्ण बसि कीये बिख्याता।
नरनारी हरि भक्त जो, मैं नांहीं बिसरत कदा।
हरि हृदै जिनकै रहै, तिन पद पराग चाहूं सदा ॥८१

टीका

इदव छंद जा जन की पद रेंन अभूषन, अंग करौं हरि हैं उर जाकै।
स्वाद निपुन्न महाकबि आदि, कहै श्रुति देव बड़ौ धर्म ताकै।
संत लयें घरि जात भये हरि, फेरत चादरि प्रेम सु वाकै।
साधन कौं परनांम न आदर, आप कही हम सूं बड़ पाकै ॥७१

---

१. कपोत छलि। २. उच्छा। ३. जाया। ४. देवहू। ५. त्रय। ६. आकूती।

मूल

छपै चरन-कवल मकरंद कौं, जनमांतर मांगत रहौं ॥८०

सति-बरत सगर मिथलेस, भरथ हरिचंद रघुगण।

प्राचीन ब्रह्मी इष्वाक भगीरथ, सिवर सुदरसण।

बालमीक दधीच बींझावलि, सुरथ सुधन्वा।

रुकमांगद रिभु अैल, अमूरति बैबस-मन्वा।

सिषर ताम्रधुज मोरधुज, अलरक की महिमां कहौं।

चरन-कवल मकरंद कौं, जनमांतर जाचत रहूं ॥८२

टीका

इंदव छंद धार न देह नहीं अपसोचहु, साधन की पद रेंन सुहावै।

सत्यब्रतादि कथा जग जांनत, द्वै बलमीक कथा मन भावै।

भीलन साथि भये रिष भीलहि, रांम-चरित्र अड़ब्ब बनावै।

गावत ताहि सबै सुर नागर, कांन सुनेंत हियो भरि आवै ॥७२

दूजा बालमीक की टीका [मूल]

मनहर छंद पांडुन की भक्ति जिहाज रूप कीनी जग,

बिप्रन द्वादस कोड़ि ज्यों[1]ये निति नेम सौं।

कनक के थार रु कटोरो झारी कनक की,

भोजन छपन-भोग बीस दीन्हौं हेम सौं।

राजा करै टहल-महल बर बाई बोर[2],

बड़े बड़े ब्रह्मरिष वेद पढै प्रेम सौं।

राघो कहै जन बिन ज्यां ये जज्ञ पूरौ नांहि,

साध बिन कैसै संख बाजै सुख-क्षेम सौं ॥८३

हंसाल छंद पंड-सुत पंच कर जोड़ि कही कृष्ण सूं,

देव संदेह मम करौ दूरौ।

बिप्र दस कोड़ि रिष-राइ राजा घणां,

जीमियां तऊ जज्ञ रह्यौ ऊरौ।

जब कृष्ण कृपाल ह्वै कही जिम की तिम,

भक्त भगवंत बिन ह्वै न पूरौ।

---

१. ज्यांये। २. चोर छड़े वोर।

रांम भजनीक राघो कहै सुपचतन,
बालमीक जीमतां बजहि तूरौ[1] ॥८४

मनहर छंद

गये है सकल बल डारि कुल राज तेज,
स्वांमीजी पधारौ मम काज आजि जांनि कैं।
हंस ज्यूं हस्त बिग बस्त रूपी आयो द्वारि,
भोजन-छपन भरि थार धरयौ आंनि कैं।
अब अंन तीवन र घृत दधि दूध भात,
अर्पि अबिनासीजी कौं ऐक कीये सांनि कै।
राघो कहै रांम धनि राखत है जन पन,
पांचौं ग्रास पंच बेर बाज्यौ संख तांनि कैं ॥८५
भूधर कहैत तोहि भांजि डारौ भाठिन सौं,
जन कै जीमत कन बाज्यौ क्यूं न पातकी।
देवजी दयाल ह्वै जे मेरौ कछू नांहीं दोष,
द्रौपदी कूं आई भिन अंति देखि जातिकी।
बाजतौ असंखि बेर भाव मैं परयौ है फेर,
नारि न निहारि देख्यौ साध सील सातकी।
राघो कहै संख नें सुधारि कही साहिब सूं,
मो कौं कित ठौर है जु आज्ञा मेरौं तातकी ॥८६

करन को टीका [मूल]

बासुर की आदि भयें रजनी कौ अंत जबै,
पढ़त जाचिग अब पहर करन कौ।
सवा भार कंचन क्रिया सूं देतौ निति प्रति,
जासूं होत प्रतिपाल दुबल बिप्रन कौ।
अरजन कौ रथ अवटायो जिन अहूठ पैंड,
जामैं बैठै कृष्ण देव नाइक नरन कौ।
राघो कहै रवि-सुत दाग्यौ हरि हाथन पैं,
साधिगौ अबस दे कैं मांमलौ मरन कौ ॥८७

---

1. छजहि सूरौ।

बलि बोझांवली की टीका [मूल]

इंदव छंद
भाग वड़े बलि कै ग्रहै बांवन, आवत ही कोयौ सबद उचारा।
राज गऊ धन धांम कन्यां असु, देव करौ इनकौं अंगीकारा।
भाव सौं भूंमि दे पैंड अहूंठिक, ता मधि ह्वै बिश्रांम हमारा।
राघो त्रिलोक त्रिपैंड कीये जिन, आप अमांप बड्यौ करतारा ॥८८

मनहर छंद
बांध्यौ राजा बलि कसि इंद्र सौं कीन्ही बिहसि,
रांमजी कहत हसि अर्ध-पैंड आप दे।
बोले बलि बींझावली धांन प्रभु कीन्ही भली,
मन की पजोई रली लीजै पैंड माप दे।
जै जै जगदीस कीन्हौं आपनौं बतायौ चीन्हौ,
मेरौ निज रूप भूप रहगो अनाप दे।
बलि कै दरबार प्रतिहार प्रभू प्रांननांथ,
राघो जोरे हाथ यौं जग्यासी ठाढौ जाप दे ॥८९

हरिचंद की टीका [मूल]

लोकपाल सारे कुलि देवता तेतीस कोड़ि,
ठाढ़े कर जोरि ह्वै कैं कही करतार सूं।
हरिचंद कौ देखि सत हल-चल हमारौ मत,
कीजीये इलाज प्रभु आज याही बार सूं।
तब हरि कृपा करी सर्ब की दिलासा धरी,
नारद बुलाइ लीये बूझै है बिचार सूं।
राघो कही रांमजी नें रिष पिषि पृथी परि,
हरिचंद कसौ बिस्वामित्र अहंकार सूं ॥९०
राघो रिष दीयो रोइ मोहि तौ कठिन दोइ,
यत तुम साहिब उत हूं दास रावरौ।
तब बोलै बिष्णजी बिसाल नैंन नाराइन,
रिष मेरौ कीयो देखि हूं तौ नांहि बावरौ।
भगतबछल मेरौ बिड़द गावै साध बेद,
संत मोहि प्यारे असैं मात पिता डावरौ।

राघो कहि रांम हरिचंद नहीं हारै धर्म,
भेड़न कौ भैं न मांनै स्यंघ कौ ज्यूं छावरौ ॥९१[†]

टीका [मूल]

मनहर छंद
चाले वेग रिष बिस्वामित्र बैठे वन आइ,
सूर भयो सूर-देव बाग खोदि डारचौ है।
माली जाइ कही हरिचंद चढ़ि आयौ तब,
सूर भग्यौ गैल लग्यौ कहै अब मारचौ है।
दीखबे सौं रह्यौ रिष देखि बैठि गयो सीस,
नाइ करि कह्यौ मम चलौ यौं उचारचौ है।
संकलप लेहु सर्व राज हम देहु तीन,
लाख फिरि येहु दये सत नहीं हारचौ है ॥९२
खोसि लीयो घोरा आप नृप कौं पयादौ कीयौ,
कांटा धूप लगै लोग सुनि और ल्याइये।
सर्ब ही हमारे ये तौ ल्यावो तीन लाख हारो,
भूप रुहितास रांनी कासीपुरी आइये।
सीस घास लीयें ठाढ़े बेस्यां कही नारि देहु,
नकटी बखानी कीस नांक काटि जाइये।
अगनि सुश्रमां रिष रांनी रुहितास लीये,
दीये ड्यौढ़ लाख हीयौ फटै बिछुराइये ॥९३
मांगत रुपईया डेढ़ लाख रिष राजा पासि,
बचन कौं तजौ अजौं नहीं बेगि दीजिये।
अब दैंऊं झफड़ा सु डौम आयो ताही छिन,
अहट सभारौ हां जू तौ तौ गिनि लीजिये।
रांनी रुहितास करै अगनि सुश्रमां सेव,
ईंधन वुहारी लेय जल ल्याइ भीजिये।
सुत ल्यावै फल-फूल पूजन करन रिष,
येक दिनां चढ्यौ द्रुम अह काटि खीजिये ॥९४
वालां कही माता सूं सरप डस्यौ रुहितास,
रोवत गई है संग सुत जहां परचौ है।

[†]टिप्पणी : सम्वत् १८८६ की प्रति में इसके बाद के ६ मनहर छंद नहीं हैं।

देखि छाती फटी लै उठाइ आई मरहट,
लकरी बरै[1] न मेह अवै नहीं जरचौ है।
धूंवां लखि आयो हरिचंद मांगै भूंमि-भाड़ो,
दयो फारि चीर आधौ तब लैकै टरचौ है।
गंगा मैं बहाइ आइ आश्रम मैं रात ढ़िग,
चील हार ल्याइ रांनी गरै मांझ धरचौ है ॥६५
कासी के राजा-चर देख्यौ हार गर-मांझ,
मार धर बार-बार ल्याये भूप पास ही।
जावो मरहट कही काटौ सिर सट फेरि,
चलै नहीं बट झट-पट करौ नास ही।
सुनौं इक गाथ असि देहु टैल वाकै हाथ,
छेदैं मम माथ दई नाथ लेर बास ही।
बिरम्हा बिसन सिव गह्यौ कर मांगि बर,
उर नहीं चाहि कलि करो मति त्रास ही ॥६६
देवतांन कीयो छल सूर भयो देव भल,
मैं हूं बिस्वामित्र रिष बैठो बन मांहि जो।
अगनि सुश्रमां अज झंपड़ा सो जमराज,
सक्ति भई बेस्यां पुनि कट्यौ नांक ताहि जो।
सुरपति श्रप जांनौं चील हूं रंभा कौं मानौं,
कासी-नृप देव बानौं सर्ब ही कौ आहि जो।
गंगा जू उलटी बहि रुहितास आयो सही,
राज दयो महीराजा रांनी मुक्ति जाहि जो ॥६७

छपै जै जयंती-सुत जगतगुर, राघो दंडवत निति नमो ॥टे०
कबि हरि हरि-रत अंतरीक्ष, नहीं प्रभु सूं अंतर।
चमस प्रवुध परबीण, करहि धुनि ध्यांन निरंतर।
कर भांजन पिपलाइन, द्रुमल रहै राति दिवस रत।
अग्निहोत्र अखंड नृषि, नवन कोइक मत।
नव जोगेसुर नांव भणि, मिटै सरम संकट समो।
जै जयंती-सुत जगतगुर, राघो दंडवत निति नमो ॥६८

---
१ बैर।

नमो पंड-सुत पंच, नमो परचंड पर-काजी।
अति क्षत्री अति साध, कृष्ण जिन सूं अति राजी।
नमो जुधिष्टर भूप रूप, धर्म सति के नाती।
नमो भींवभड़ पवन-सुत, पाप कर्मन की काती।
नमो धनंजय धनुष धर, सत्रुन सर सज्या-धरण।
नमो नकुल सहदेव कौं, जन राघो रोगन हरण ॥९९
रिष नारद नै निरभै कीये, प्राचीन बृह के पुत्र दस ॥टे०
कुवरन कौं कैलास, बताई निश्चल ठौरा।
महादेव मन जीत रहै, संग सीतल-गौरां।
बक्ता मगन महेस राज-रिष सनमुख श्रोता।
भक्ति-ग्यांन अतिहास, सार तत निरनै होता।
यौं चकेता प्रसिधि भये, जन राघो पीवत रांम-रस।
रिष नारद नै निरभै कीये, प्राचीन बृहै के पुत्र दस ॥१००
अद्दष्ट-चक्र इनके चले, रटि राघो षट चक्कवै ॥टे०
प्रथम बेणि धर्म जेठा, दुतीय बलिवंत[1] बलि बहरी।
धुंध मारबि सियार, जास रजधांनी गहरी।
मांनधाता अति बढ्यौं, प्रसिधि महा भयो पूरवा।
अजैपाल अब तपै, धारि उर भलैं गुरदवा[2]।
उदै अस्त लौं राज घरि, करते न्याव हरि हक्कवै।
अद्दष्ट-चक्र इनके चले, रटि राघो षट चक्कवै ॥१०१

इंदव छंद
काक-भुसंड र मारकंडे मुनि, जागिबलक कृपा क्रम जीते।
सेस संभु बुगदालिम लोमच, ध्यांन समाधिहि मैं जुग बीते।
खडांग दिलीप अजौं अजपाल, रिषभदेव अरिहंत उदोते।
राघो कहै चकवै षट ये[3] दस, रांम परांगमुख ते गये रीते ॥१०२

समुदाई टीका

इंद्र अगन्नि गये सत देखन, स्यौर दयो तन काटि र मासं[4]।
सुर्थं सुधन्वा सुदोष कियो दिज, संख लिखत्त भयो बपु नासं।

---

१ छलिवंत। २ गुरदेवा। ३ षोडस। ४ हस ध्रु पुत्र।

देह[1] दधीच दई सुरपत्तिहि, भर्त सु भागवतं प्रकासं।
बिप्र सुदर्सन है इतहासहि, देत तिया जन और न दासं।।७३

रूक्मांगद की टीका

बाग पहौपन छाइ रह्यौ सुभ, देवतिया वहै लैनहि आंहीं।
बैंगन कंटक पाव लग्यौ इक, बैठि रही सुनि कैं नृप जांहीं।
बात कहौ श्रुरगलोक पठाइत, ग्यारसि वास दयें सुख पांहीं।
ग्राम न जानत होत कहा ब्रत, काल्हि रही इकठी कवि नांही।।७४
डौंड फिरें इक लौंड़ि बनिक्क हु, मारि हुती अन खाइ न जागी।
भूपति कै ढ़िग ल्याइ दयो ब्रत, बैठि बिमांन सुरग्गहि भागी।
देखि प्रभाव हि भूप बिचारत, या दिन अंन भखै स अभागी।
यौं नर-नारि करै ब्रत जाबक, जाइ पुरी सुरगापुर लागी।।७५
ग्यारसि को ब्रत सत्य करयौं नृप, बात सुनौं इक तास सुता की।
लेन पिता पुर आइ सुयंबर, मांगत अैंन खुध्या अति पाकी।
देत नहीं हरि बासु र जांनत, आजि मरै गति ह्वै भल यांकी।
प्रांन तजे उन बेगि मिले प्रभु, भाषि कही पन रीति तिया की।।७६

मोरधुज की टीका

रोग भयो ग्रभ अर्जन कै, अति कृष्ण जु जांनि दयो रस भारी।
है मम भक्त सु तोहि दिखावत, बालक बृद्ध भये ब्रह्मचारी।
जाइ पहौंचत मोरधुजं गृह, बेगि कहौ नृप बात हमारी।
जाइ कही अब सेव करूं हरि, बैठ हुयौं सुनि आगि प्रजारी।।७७
ऊठि चले रिस खाइ गहे पद, जाइ कही नृप दौरत आये।
आप दया करि चाहि फलावत, आजि भलौ दिन ये फल पाये।
मोहि कहो स करौं अवही वह, बैंन रसाल पिऊं द्रिग धाये।
रोस गयो सुनि मोद भयो उर, पारिख लैंन सु बैन सुनाये।।७८
देन सुने म करौ जु करयौ हम, जो तुम भावत सो मम भाई।
स्यंघ मिल्यौ इन बालक खावत, मोहि भखौ कहियौ सुखदाई।
क्यूं करि छोड़उ भूपति को तन, आध मिलै मम बात जनाई।
बोलि उठि तिय मैं अरधंगनि, पुत्र कहै मम द्यौं सुधि आई।।७९

---

[1] सेह।

बात सुनौं नृप गात तिया सुन, चोरहि भोरहि नांहि न भाखे।
सीस करौत धरचौ सु चिरचौ मुख, नीर ढरचौ द्रिग भीर न चाखै।
छोड़ि चले गहि पाव कहै इम, रोवत है विन कांमहि नांखै।
नैंन लये भरि रूप धरचौ हरि, दूरि करचौ दुख है अभिलाखै।।८०
द्यौंस कहा अति मोहि रिझाइहु, रीझि दिये बिन मोउ रसालं।
लेहु चह्यौ वर साटि न चूकत, सूकत है मुख देखि बिहालं।
भूप कहै तुम दीन-दयाल, करै कछू नूंन लखौ सु बिसालं।
देहु यहै बर मांगि सिताब, करौ मति पारिष यौं कलिकालं।।८१

अलरक की टीका

†मैं अलरक्क सु बात बखानत, ग्यांन दयें नहि जाइ विषै है।
जन्महि आइ मंदालस कैं तन, सो ग्रभ वासहि नांहि पिषै है।
पीव कहे लघु छोड़ि गई बन काढ़ि[1] लयो नृप त्रास दिषै है।
छाप उपाड़ि र बांचि सिलोकन, दौरि गयो दत देव नखै है।।८२

रंतदेव की टीका

देवसु रंतकुले दुसकंतहु,‡ बृत्य अकासहि धारि लई है।
खात नहीं बिन दीन अभ्यागत, वास करै यह बात नई है।
ह्वै अठचालिस द्यौस मिली रिधि, ब्राह्मन शुद्र सुपाक दई है।
रांम बिचारी चहूं जनमैं हरि, देन लगे दुख देहु कही है।।८३

[मूल]

छपै **जन राघो निज नवधा भक्ति, करत मिटै जामण मरण।।६०**
श्रवण परीक्षत तरचौ सबद-धुनि सुख मुनि गावै।
चरण पलौट लक्ष आदि, अब गतिहि रिझावै।

---

†संगः सर्वात्मनां त्याज्यौ, यदि त्यक्तुं न शक्यते।
स एव सत्सु कर्त्तव्यः, संतः संसारभैषजं।।१
कामः सर्वात्मना हेयो, यदि हातुं ना शक्यते।
स कर्तव्यो मुमुक्षाय, सैव तस्याभिभैषजं।।२
‡सकूली मीता माग कन्या।

---

१. काटि।

भजन सुदिढ़ प्रहलाद, सु पलक[1] सुत बंदनकारी।
दासातन हनुमंत, सखा पारथ पण धारी।
पृथु अर्चा बलिप्पंड ब्रह्मंड, अबस दे गयौ हरिचरण।
जन राघो निज नवधा भक्ति, करत मिटै जामण मरण ॥१०३†

गोह भीलां कौ राजा स्रिंगबेर[2] (पुर) की टीका

गोह किरातन कौ पति रांमहि, आइ मिल्यौ बनबास सुन्यौ है।
राज करौ यह मौ सुख द्यौ प्रभु, साज तज्यौ पितु बैन सुन्यौ है।
दीरघ दुख्ख बिछोह बहै द्रग, लोहु चल्यौ फिर सीस धुन्यौ है।
आंख न खोलत रांम बिनां मुख, और न देखत प्रेम पुन्यौ है ॥८४
संबत चौदह बीति गये हरि, आय कहै चर रांमहि देखौ।
मांनत नांहि न रांम कहां अब, नाथ मिले कहि मोहि परेखौ।
अंग पिछांनि लये पहिचांनि, जिये मनु जांनि नहीं सुख लेखौ।
प्रीति क रीति कही नहिं जात, हिये अकुलात सु प्रेम बसेषौ ॥८५

प्रहलादजी कौ मूल

मनहर छंद

धनि प्रहलाद कीन्हौं बाद बिधनां कै काज,
जाहु तन आज मैं न छाड़ूं टेक रांम की।
अगनि तपायौ तन जिय मांहीं एक पन,
हरि बिन जाहु जरि देही कौंन काम की।
देख्यौ कसि जल-थल ऊबरयौ भजन बल,
रटत अखंड सरनाई सत्य स्यांम की।
असुर का कसर नृस्यंघ कौ सरूप धरयौ,
राघो कहै जीत्यौ जन बांह बर यांम की ॥९८

[टीका]

इंदव छंद

संकर आदि डरे न इसी रिसि, पासि न जावत श्री हु डरी है।
भेज दयो प्रहलाद प्रभु ढिग, जाइ पगौं परनाम करी है।

---

१ अक्रूर। २. श्रिंगबेरपु।

---

†यहां संख्या में ६ का फरक पड़ने का कारण अन्य प्रति में ९२ से ९७ तक के मनहर छंदों का न होना है।

गोद उठाइ दयो सिर पैं कर, देखि दया उर येह धरी है।
दूरि करौ दुख या जग कौ सब, मौ अब द्यौ तव माय[1] बुरी है ॥८६

अक्रूरजी की टीका

अक्रूर चले मथुरा पुर तैं, द्रिग नीर बहै हरि कौं कब देखौं।
सौंण मनावत देखन भावत, लोटत है लखि चिन्ह बसेखौं।
बंदन भक्ति प्रबीन महा सुख, देव कही यह जीवन भेखौं।
राम रु कृष्ण मिले सु फले मन, स्वारथ लाख जनंमहि लेखौं ॥८७

प्रीक्षत की टीका

प्रीक्षत पीवत श्रुति कथामृत, बाढत है निति कोटि पियासा।
जोगिन कै उर ध्यांन न आवत, सो हरि देखि मया[2] ग्रभवासा।
भूप कहै सुखदेव सुनौं यह, चित्त कथा नहीं तक्षक त्रासा।
पारिष ल्यौ मम बुद्धि रही पगि, जाहु जबै थमि होत उदासा ॥८८

सुकदेवजी की टीका

होत जनंम चले भजि आरन, ब्यास पिता हि सभाष न दीयौ।
कान परे सुस-लोक दसंमहि, बुद्धि हरी सुनि भागुत लीयौ।
जोगुन रूप करम्म करे हरि, भूप सभा कहिनैं भय हीयौ।
बूझत संत उन्हैं करि उत्तर, वांचित है सु जबैं झर कीयौ ॥८९

मूल

छपै **हरि बिमुखन दंड देत है, जन राघो पाइक[3] रांम के ॥**
नमो नव-गृह देव, आदि अनुचर हरिजी के।
पीड़त आज्ञा पाई, रांम अनुग्र तैं नीके।
नमो बृहस्पति बुद्ध, नमो सनि सोम सहाइक।
नमो भासकर सुकर, नमो मंगल बरदाइक।
नमो राह धड़-केत, सिर आज्ञाकारी स्यांम के।
हरि बिमुखन दंड देत है, जन राघो पाइक रांम के ॥९९

---

१ माया। २. उत्तरा। ३. पाई।

भगवत आज्ञा मैं रहै, ये नक्षत्र अष्टाबीस ॥
अस्वनी, भरनी, कृतका, रोहणी, मृगसर, आद्रा।
पुनरबसु, अरु पुक्ष, असलेखा, मघा, सु साद्रा।
पुरबा-उतरा-फालगुनी, पुनि, हस्त, सु चित्रा।
स्वात, बिसाषा, अनुराधा, जेष्टा अतिमित्रा।
मूल, पूरबाषाड र उतराषाड, अभींच हद।
श्रवन, धनिष्टा, सतबिषा, पूरबा-भाद्रपद।
उतरा-भाद्रपद, रेवती, सर्व राघो सुमरै ईस।
भगवत आज्ञा मैं रहैं, ये नक्षत्र अष्टाबीस ॥१००

जन राघो रचनां रांम की, ते ते प्रणउं पंक्ष गुर ॥टे०
गरुड़ासण गोविंद, अरक कैं अरण[1]-सारथी।
हंस दसा[2] सारस, हेत हमाइ प्रारथी।
चाहण उत्म चकोर, सूवा संगि हरि हरि करि है।
मोर कंठ-कोकिला, पीव पीव चात्रिक ठरि है।
काक-भुसंड रटि गीध, निधि जलतटांग उपगार उर।
जन राघव रचनां रांम की, ये ते प्रणऊं पंक्ष गुर ॥१०१

रांम कृपा राघो कहै, इतने पसुपती ग्रवा ॥टे०
कांमदुघा नंदनी, कांमनां पूरण करि हैं।
कपिला बड़ी कृपाल, सुरह[3] लांगुल सिर ढरि है।
ऐरापति गज इन्द्र, नंदीसुर सिव को बांहन।
गौरी-बाहन स्यंघ, रांम बिमुखन डरपावन।
मृग चंद बाहन भलौ, आदित कै उच्चीश्रवा।
रांम कृपा राघौ कहैं, इतने पसुपती ग्रवा ॥१०२

ये अष्टादस पुरांण, जे जगत मांहि तारण तिरण ॥टे०
बिष्ण, भागवत, मींन, बराह, कूरम, बांवन धर।
सिव, सकंद, लिंग, पदम, भवक्ष, बैबरत कथाबर।
ब्रह्म, नारदी, अगनि, गरुड़, मारकंड, ब्रह्मंडा।
धरम थापि अधरम मारि, करि है सतखंडा।

---

१. अरुण। २. दरसा। ३. सरह।

मन बच क्रम राघो कहै, प्रेम सहित सुणि है करण।
ये अष्टादस पुरांण, जे जगत मांहि तारण तिरण ॥१०३
ये अष्टादस समृति भली, तिन सुनत नसै अज्ञांन ॥टे०
बैष्णवी, मनुसमृति†, आत्री, जांमी, हारतिक‡।
आंग्री, जागिबलकि, सांनी, श्री-नांमी, सांमृतक।
कात्याइन, गौतमी, बसिष्टी, दाखी, सांखिल।
आसतापि, सुरगुरी, परासुर, कृत मुनि बहुफल।
आसा पासि उदारमति, हरत परत साधन सधनांन[1]।
ये अष्टादस समृति भली, तिन सुनत नसै अज्ञांन ॥१०४
रांम सचिव नांम ही लीये, अनन्य भक्ति कौं पाइ है ॥टे०
सुमंत पुनि जैयंत सृष्ट, बिजई र सुचिर मति।
राष्ट्ररबरधन चतुर, सुराष्ट्रर मैं बुधि अति गति।
असोकबरज सुख-क्षेम, सदा रुघुपति मन भाइक।
परम धरम-पालक, प्रजा कौं सर्ब सुखदाइक।
राघो अैसे प्रसन कर, सेवति मन बच काइ है।
रांम सचिव नांम हि लीये, अनन्य भक्ति कौं पाइ है ॥१०५
पद्म अठारह जूथपाल, तिनके सुमरूं नांम ॥
सुग्रीव, बालि, अंगद, केसरी बच्छ हनुमांनां।
उलका, दधिमुख, दुब्यंद, बहुत पौरष जंबुबांनां।
सुभट सुषेण, मयंद, नींल, नल, कुंमद, दरीमुख।
गंधमादन, गवाक्ष, पणस, सरभांग व हरिरख।
भीर परें भाजै नहीं, रुघनन्दन कै कांम।
पद्म अठारह जूथपाल, तिनके सुमरूं नांम ॥१०६
नाग अष्ट-कुल सुचित ह्वै, राति-दिवस हरि कौ भजै ॥
इलापत्र, मुखसहंस, अनंतकीरति निति गावै।
संकु, पद्म, बासुकी, हृदै मै ताली लावै।

1. स ध्यांन।

†स्वामूभर।
‡जम।

असु कमल हरि अजित, कदे आइस न निवारै।
तक्षक, करकोटक, सीस परि सेवा धारै।
जन राघो रत रांम सौं, मन की आसा सब तजैं।
नाग अष्टकुल सुचित ह्वै, राति-दिवस हरि कौं भजैं॥१०७
परजन्नि बृद्ध बृज गोप कै, नव पुत्र नंद कौं आदि दे॥
सुठि सुनंद, अभिनन्द, पुनैं उपनंद सु चातुर।
धरानन्द, ध्रुवनंद, धरम सत-गुन के पातुर।
धर्मां, कर्मानंद, करम काटन अभिनंदन।
गो-बछन के बृन्द, गोपिका हरि रंग-रंगन।
कुल-मध्य कृष्ण जू अवतरे, राघव नमत सुरादि दे।
परजन्नि बृद्ध बृज गोप कै, नव पुत्र नंद कौं आदि दे॥१०८
बृज के नर-नारी भक्त, लघु दीरघ सब जांचि हूं॥
नंद, जसोदा, कृष्ण, धरा, ध्रूनंद, कोरति दा।
मधु-मंगल, बृक्षभांन-कुंवरि सहचरि बिहरत दा।
श्रीदांमां पुनि भोज, सुबल, अरजुन, सुबाहु गन।
ग्वाल-बृंद बहुतांनि, स्यांम कौं संग रमांवन[1]।
राघो मन बच काय करि, घोष निवासनि राचि हूं।
बृज के नर-नारी भगत, लघु दीरघ सब जाचि हूं॥१०९
बन-धांम संगि श्री कृष्ण कै, अनुग सुचित रहबो करै॥टे०
चंद्रहास, मधुबरत रु, रक्तक, पत्रक जेते।
मधुकंठो, सुबिसाल, रसाल, सुपत्री तेते।
प्रेमकंद, संदांनि, सारदा, बकुल कुसलकर।
पयद सुद्ध मकरंद, प्रीति सूं सेवत गिरधर।
राघो समयो देखि करि, चतुर इच्छत आगैं धरै।
बन-धांम संग श्री कृष्ण कै, अनुग सुचित रहबो करै॥११०
सपत-दीप सातूं समुद्र, भक्त तिते सिर-मौर॥टे०
जंबू खार-समंद पलक्ष, चहूं फेर ईष रस।
सालमिली सर मधु, सुनौं कुस घृत देव बस।

---

[1] राधा।

क्रौंच पासि सर दुग्ध, साक दधि को नृमलसर।
पहुकर सागर सुधा, पार सोहै कंचन-धर।
परबत लोका-लोक मैं, बिटवोक चहुवोर।
सपत-दीप सातूं समुद्र, भक्त तिते सिर-मौर ॥१११
जंबुदीप नवखंड के, सेवक सेब्यन कूं भजूं ॥टे०
बीच इलाब्रत राज, सेस सिव अनुग सु जांनय।
भद्रा हयग्रीव भद्रश्रव, हरिबर नृस्यंघ प्रहलादय।
किं पुरसुरांम हनुमंत, भरथ नारांइन नारद।
केतमाल श्री कांम रभिक, मछ मनुहु बिसारद।
हिरन्यषंड कच्छ अरजु मां, कुरु बराह पृथी सजू।
जंबुदीप नवखंड के, सेवक सेबिन कौं भजूं ॥११२
राघो ततक्षरण तीहि सभा, हरि फेरचो नारद गुनी॥
राति-दिवस उनमन रहै, हरि ही कूं देखै।
टगा-टगी धुनि ध्यांन, पलक नहीं लगै निमेखै।
जिनकी उलटी चाल, काल-जित कूरम अंगी।
भर्म कर्म सूं रहत सदा, अबगति के संगी।
स्वेतदीप मधि सत-पुरष, सदा नृबर्त निश्चल मुनी।
राघो ततक्षरण तीहि सभा, हरि फेरचौ नारद गुनी ॥११३

टीका

इंदव छंद
रूप उपासिक स्वेतहि[1] बासिक, नारद देखन कौं चलि आये।
नैंन निहारत मो मति पागत, सैंन करी हरि जाहु फिराये।
कुंठ गये दुख पाइ कही हरि, साथ लये फिरिकै वतलाये।
ताल पिख्यौ खग ध्यांन रह्यौ लगि, बूझत है रिष रांम जनाये ॥६०
संबत्सहंस बदीत भये उर, भाव फल्यौ न नहीं जल पीवै।
स्वाद लगै वह खावत पीवत, नांव बिनां पल येक न जीवैं।
पाइ दयो जल नांखि दयो उन, फेरि करचौ उसही भरि लीवै।
देखि खुले चक्षुदे परदक्षरण, भाव भयो खग सेव सु कीवै ॥६१
दीप चलौ अब भाव भलौ उन, जाइ रु देखत वै प्रभु गावै।
आवत हौ जन आरति ह्वै गइ, प्रांन तजे रु तिया फिर आवै।

१. स्वेतह।

वाहि कह्यौ समयौ न परी धर, स्वास गये चलिया मन भावै।
यौं सुत आदिक आइ परे सब, देखि सचौपन फेरि जिवावै ॥९२

च्यारि सप्रदा बिगति बरनन : मूल

छपै ये च्यारि महंत चकवै रचे, जन राघो सब कौं प्रेह ॥टे०
मध्वाचारय मूल, कलपतर कला-बिथारी।
बिष्णुस्वांमी बिस्व-पोष, अमृतरस सर यो भारी।
रांमांनुज निह कांम, रांम पद पारस परसे।
नीबादित निधि नृषि, चतुर चिंतामणि दरसे।
बिधि बिधि सुत सिव सक्ति सौं, भक्ति उद्यापी येह।
यह च्यारि महंत चकवै रचे, जन राघो सब कौं प्रेह ॥११४
राघो रटि गुण होत गमि, भक्ति काज भूपरि भली ॥टे०
इम सिव बिरंचि लक्षमी सनकादिक, येते सब के परम गुर।
अब इनके सिष सो भक्ती पुंज भणि,कलिमल काटण धर्मधुर।
महादेव को बिष्णु-स्वांमि-मत,पुनि बिरंचि को मध्वाचारिय।
नींबादित कै सनकादिक मत, रांमांनुज कै रमाजु आरिज।
पधति प्रणाली प्रणम्य इम, सुध संप्रदा यौं चली।
राघो रटि गुण होत गमि, भक्ति काज भू-परि भली ॥११५

अथ रांमांनुज संप्रदा बरनन

महाबिष्णु तें बिष्णु, बिष्णु कै लक्ष अरधंगी।
चरण पलोटै नित्ति, सदा सर्वदा रहै संगी।
ता सिष बिष्वकसेन, सपुन भव[1] भक्ति चलाई।
सठकोप पुनि वोपदेव, हरि सूं ल्यौ लाई।
मंगलमुनि श्रीनाथ सुठ, पुंडरीकाक्ष धर्म की धुजा।
रांम-मिश्र[2] अरु परांकुस, जांमुन-मुनि रांमांनुजा ॥११६
इम रमा पधति परताप, रहणि रांमानुज पाई।
रांम-रीति परतीति, सबनि कौं नीति दिठाई।
उपजे सिष सिरदार, बहतरि भये उजागर।
ज्ञांन-गिर के पुंज, सील सुमर्ण के सागर।

१. भुव। २. विश्र।

रांमांनुज निज तत[1] कथ्यौ, नृगुण त्रिवृति निरबांन पद।
जन राघो रत रांम सूं, ज्यौं दत संगति मुक्ति जद ॥११७

टीका

मत-गयंद छंद

रांम अनुज्जु सु है लखमन्नहि, तास सरूप यहै उर आई।
मन्त्र दयो गुर अंतर राखन, जाप करें हरि दीन्ह दिखाई।
आइ दया सबही प्रभु पावहि, गोपुर पैं चढ़ि टेरि सुनाई।
जागि परे तिन सीखि लयो वह, भैतरि मुक्ति भये सिधि पाई ॥९३
जात भये जगनाथहि देखन, जांन असोच पुजारि उठाये।
साथि हजारन लै सिष सेवत, पूजन विंजन भाव दिखाये।
श्री जगनाथ कहै वह भावत, प्रीति खुसी सब और बहाये।
बात न मांनत वैसहि ठांनत, आगम और निगम सुनाये ॥९४
जब्बर संतहि जोर न चालत, सौक कही फिर खेल पिखायौ।
बांहन सूं कहि जाइ धरौ इन, ले सब कौं धरि द्राविड़ आयौ।
आंखि खुली जब देसहि देखत, गोपि मतौ प्रभु कौ किन पायौ।
पूजन[2] वैहि करै अजहूं निति, रीझत भावहि और न भायौ ॥९५

मूल

छपै

संत च्यारि द्रिगपाल, चहुं भोमि भक्ति चांपें भलैं॥
श्रुति-धांमां श्रुति-वेद, पराजित पद्दुकर जांनूं।
श्रुति-प्रज्ञा श्रुति-उदधि, ऋषभ गज बावन मांनूं।
रांमांनुज गुर-भ्रात, प्रगट आनंद के दाता।
सनकादिक सम ज्ञांन, संक्र संचिता सु राता।
बुधि उदार इंद्रा पधित, सत्रु चलायें ना चलैं।
संत च्यारि द्रिगपाल चहुं, भोमि भक्ति चांपें भलैं ॥११८
रामानुज जा-मात की, बात सुनत हरि भक्ति ह्वै ॥टे०
संत रूप सब कोइ, चल्यौ पांणीं मैं आवै।
दग्ध कीयौ ज्यूं भ्रात, कुटंब दल देइ बुलावै।
भू-सुर करी गलांनि, सुरग सुर लीये बुलाई।
देखे जीमत सबनि, जात नहीं दिई दिखाई।

---

१. नितन। २. मूजन।

लालाचार्य लक्ष मगन, राघो जांनैं पंथ द्वै।
रामानुज जा-मात की, बात सुनत हरि भक्ति ह्वै ॥११६

टीका

मत गयंद छंद

रांम अनुज्जह धीपति की सब, बात सुनौ जब बंधव मांनैं।
चौगुन प्रीति करी कुल बंधव, रीति बनैं न नहीं घटि जांनैं।
साध सरूप बह्यौ सब आवत, ल्याइ घरां सु वनाइ बिमांनैं।
लै तटि जात बजावत गावत, दागत रोवत यौ सुख मांनैं।९६
न्यौतत बिप्र महौच्छव मैं, उनमांनि लियौ फिरि आवत नांहीं।
ह्वै इक ठौर कहै सब कोहु त, बोलि उठे सब ह्यौ सब आंहीं।
जीमत ना हम जाति न जांनत, मत्त भलौं घरि आंनि रु दांहीं।
पंचन की सुनि बातहि सोचत, पूछन कौं गुर पैं चलि जांहीं ॥९७
रांम अनुज्जहि ढोक दई मम, बिप्र न जीमत बात जनाई।
आप कही परभाव न जांनत, जांनत है सुर पावत आई।
देखत ही सुर आइ गये ढिग, पंचन कौं भुज च्यारि दिखाई।
जीमन द्यौ इन स्वास न काढहु, हासि करा जब ये फिरि जाई ॥९८
देवन देखि प्रणांम करी परि, आज दया करि मो बड़ कीन्हौं।
भोजन पाइ गये नभ मारग, बिप्रन मैं किनहूं नहि चीन्हौं।
पाइ प्रसाद सराहत है सुर, साधुन को पर भावहि भींन्हौं।
जात भयो अभिमांन गये घरि, लाज न ये किणका चुनि[1] लींन्हौं ॥९९
पाइ परैं बिनतीहु करैं मन, दीन धरै हम चूक हि छांडौ।
संत कहै तुमरौ उपगार, उधार भयो मम बाद न मांडौ।
भक्ति धरौ उर दास करौ हम, है चित मैं मति हांसि न भांडौ।
दे उपदेस किये सब कौ सिष, गाड़ि दई ममता खिण खांडौ ॥१००

[मूल]

छपै

जन राघो राखे रांमजी, जन के पग जल तैं अधर ॥टेक
इक श्रीसंप्रदा महंत, सिषन सुरसुरी दिढाई।
इकही कहिये कांत, पाव जिन बोरै जाई।
पृथी प्रकर्मा देहुं, आप यहु आरंभ कीन्हौं।
षट-ब्रष लौं अटि खोजि, आय उन दर्सन दीन्हौं।

---
१. चुगि।

सिष पट तारचौ सुर धुनो, गुर संजन करत टेरचौ मग्नर।
जन राघो राखे रांमजी, जन के पग जल तैं अधर ॥१२०

टीका

इंदव छंद
संत रहैं बहु देव धुनि तटि, है गुर-भक्त जुदौ न न्हावैं।
जात गुरु परदक्षरग देवन, मो मति छाड़हु गंग वतावै।
कूप करै सब न्हांवन धोवन, गंग गुरू मनि ध्यांन करावै।
दे परदक्षरग आत भये जन, पाइ सबै दुख साध सुनावै ॥१०१
जांनि चले सिष लै करि गंगहि, धारहि पैठि अंगोछ मंगायौ।
सोच करै नहि पाव धरै जब, गंगहि बोलि उपाइ बतायौ।
अंबुज-पत्रनि पाव धरे, अधरे चलि जाइ तबैं पकरायौ।
भीर हुती तटि बाहरि आवत, पाइ परे सबही गुन गायौ ॥१०२

[मूल]

छपै
इम रांमांनुज के पाटि, परंतर देवाचारिय।
देवाचारिय कै दिप्यौ, हस हरियानंद आरिय।
हरियानंद करि हेत, राघवानंद निवाजे।
ताकै रांमांनंद महंत, महिपुर मैं बाजे।
अब राघौ रांमांनंद कै है, अनंतानंद सिष बड़ौ।
येकादस सिष और है, आदियधित अनुक्रम पढ़ौ ॥१२१
इम रांमांनंद प्रताप तैं, इतनें दिग द्वादस महंत ॥टे०
अनंतानंद, कबीर, सुखानंद, सुख मैं भूलै।
सुमरि सुरसुरानंद, रांम, रैदास न भूलै।
धना, सेन, पद्मावति, पीपा पुनि नरहरदासा।
भावानंद, सुरसुरी, कीयौ हरि घर मैं बासा।
परमार्थ कौं अवतरे, राघो मिलि रांम रहंत।
इम रामांनंद प्रताप तैं, इतने दिग द्वादस महंत ॥१२२

घनाक्षरी छंद
रांमांनंद रांम कांम सावधांन आठौ जांम,
कायागढ़ करि तमाम जीत्यौ मन घेरि कैं।
जाति-पांति ऊंच-नीच मेटिकैं अकाल-मीच,
सार बस्त सार गहि लीन्हौं हरि हेरि कैं।

ऊपजे सपूत सिष द्वादस दुनी मैं दीप,
चंदन सूं चंदन कपूर जैसें केरि के।
राघो कहै पंथ पाज थापिकैं भगत राज,
पूरौ गुर पूरौ साज सिर तपै सुमेर कै॥१२३

स्वांमी रांमांनंदजी के आनंद के कंद सिष,
तहां दस दीरघ अनंतानंद पाट कौ।
मन बच क्रम धर्म धारयौ सेवा जाप[1] पन,
कांम क्रोध जीत्यौ मन नृमल निराट कौ।
बड़ेन की रीति अति प्रीति परमेसुर सूं,
गुरु ज्यौं पहूंच्यौ धुर ज्ञांनी वाही घाट कौ।
राघो कहै राति दिन रांम न बिसारयौ छिन,
तारिक त्रिलोक-मधि बरण बिराट कौ॥१२४

कबीरजी कौ मूल

छपै
अथाह थाह पांऊं नहीं, क्यौं जस कहूं कबीर कौ॥
श्रीरांमांनंद कौ सिष, जाति जग कहै जुलाहौ।
कासी करि बिसरांम, लीयो हरि भक्ति सु लाहौ।
हिंदू तुरक प्रमोधि, कीये अज्ञांनी तै ज्ञांनीं।
सवद रमैंणी साखि, सत्य सगलां करि मांनी।
प्रमांनंद प्रभु कारनैं, सुख सब तज्यौ सरीर कौ।
अथाह थाह पांऊं नहीं, क्यौं जस कहूं कबीर कौ॥१२५

मनहर छंद
भरम करम तजि प्रसे गुर रांमांनंद,
उपज्यौ आंनंद क्रम जग्यौ यौं कबीर कौं।
कांम क्रोध लोभ मोह मारिकैं बजायो लोह,
सूर-वीर समर्थ भरोसौ तेग तीर कौ।
साखी सवदी ग्रंथ रमैंणी पद प्रगट है,
सोहै सबंही कंठि हार जैसै हीर कौ।
राघो कहै रांम जपि जगत उधारयो जिन,
माया-मधि मोक्ष भयो मोती जैसे नीर कौ॥१२६

टीका

इंदव छंद
मांनि अकासहि बोल भये सिष, जाइ परे मग न्हांवन जावै।
लागत ठोकर रांम कह्यौ सिर, हाथ धरचौ इतनौं यह चावै।
भक्ति करै गुर-भाव धरै जन, पूछत है उन नावं बतावै।
स्वांमि सुनि[1] तब बेगि बुलावत, सिष्य करचौ कब[2] भांति बतावै ॥१०३
पाव लग्यौ जब रांम कह्यौ तुम, मंत्र वही तिस बेदहि गावै।
खोलि मिले पट मांनि सचौ मत, भक्ति करौ तत यौं समझावै।
जाइ बुनै दुवटी हि भजै हरि, येक करै घर कांम चलावै।
बेचत आइ मगी अध फारत, द्यौं सब ही सबलै मन भावै ॥१०४
मात तिया सुत भूख मरै घरि, आप लुके कहूं धांम न धांनैं।
सोच परचौ प्रभु भक्ति करै जन, खांड गहूं घृत बाल-दि आंनैं।
तीनि दिनां जब बीति गये उन, केसव नांखि दई घर जांनैं।
मात कहै पकरै दरबारहि, लेत नहीं सुत येक न मांनैं ॥१०५
च्यारि गये जन ढूंढि र ल्यावत, आइ सुनी हरि जांनत पीरा।
बैठि बिचारत आप बिसंभर, न्यौंति जिमावत संतन भीरा।
छोड़ि दयौ बुनबौ प्रभु गावत, बिप्रन क्रोध करचौ तजि धीरा।
पाइ बिभो निति सुद्र जिमावत, जांनत नैं हम कौंन कबीरा ॥१०६
जात रहौ कित जांउ कहौ किम, रांम भजौं अब बाट न मारी।
मांन करचौ उन मोड़न कौ, अपमांन करचौ हम देत जिवारी।
जात बजार लगै अब हाथि र, हौ तुम ह्यांहि उपाधि निवारी।
ल्याइ हरी रिधि दै सब बिप्रन, होत खुसी जन कीरति कारी ॥१०७
रूप करचौ हरि बांह्मन कौ तुम, जाहु कबीरहि बांटत भाई।
भूख मरै मति ढ़ील करै जिन, जात घरां सिर देत अढाई।
धांम गये जब देखि खुसी मन, नौतम खेल दिखावत राई।
लै गनिका सब देखत कीड़त, भीर मिटांवन हासि कराई ॥१०८
साध दुखी लखि साख तहां सत, फेरि बिबेक करचौ कछु औरै।
जात सभा नृप मांन करचौ न, तबैं इक ख्याल करै जल ढौरै।
पूछत भूपति कारन कौंनस, पंड[3] जरचौं जगनांथहि ठौरै।
भूपति मांनस भेजि दयौ उन, आइ कही सब सांचहि चौरै ॥१०९

भूप कहै त्रिय सौं हुइ साचहि, सोच भयो उर पाव गहीजै।
चालि परे सिर घास भरौटहि, डारि कुल्हारी गरै दोउ धीजै।
लाजहि डारिब जारहि मारग, कीन्ह बुरी हम यौं बपु छीजै।
देखि कबीर गये चलि नीरहि, बोझ उतारि कहा इम कीजै ॥११०
ब्राह्मन देखि प्रताप उठे जरि, स्याह सिकंदर आइ किनारै।
मात कबीरहि साथि लई सब, गांव दुखावत जाइ पुकारे।
बेग बुलावत कौंन कबीर स, द्यौं लटकाइस खूंट हमारे।
ल्याइ खड़ा करि बात कहै सब, स्याह सलांम करौ हरि प्यारे ॥१११
सांकल बांधि रु गंग बहावत, देखि खड़े कहि चेटक आवै।
लाकड़ मेल्हि रु आगि लगावत, दीपत देह सु हेम लजावै।
भूंमि दये खनि नांहि रहे छिन, ऊपरि आइ र गोबिंद गावैं।
चालत नांहि उपाइ रहे थकि, हैं उर मांहि अ ग्यांन न आवै ॥११२

मूल

दास कबीर सधीर धर्म्म के, मांनौ सुमेर सहंस्रक रोपे।
हींदू तुरक संन्यासी रु ब्राह्मण, स्याह सिकंदर आदि दे कोपे।
झुकायो गयंद मयंद महाबलि, स्यंघ सरूप सभा बिचि चोपे[1]।
राघो कला प्रबला बढ़ी बेहद, पैज रही हद के दंद लोपे ॥१२७

[टीका]

देखि डर्‌यौ पतिस्याह प्रतापहि, आइ रह्यौ पगि लोग न ये हैं।
राखि हमैं हरि तैं मति मारिहि, ल्यौ धन गांवहि मान भये हैं।
भावत रांम न और कांम, रहैं हम आंम न दांम लये हैं।
धांम पधारत फौज फते करि, संत मिले ससनेह छये हैं ॥११३
हारि बुलाइ र ब्राह्मन च्यारहि, मुंड मुंडाइ र साध बनाये।
गांवहि नांवहि बूझि महंत न, नांम कबीर सु लेर बुलाये।
संतन आवत आप लुके कित, रांम उतारि चहू दिसि आये।
रूप कबीर बनाइ बहुतक, आप गये मिलि माध रिझाये ॥११४
बेस बनाइ बधू सुर आवत, देखि अडिग्ग चली नहीं लागी।
विष्णु पधारि दयो जन मांनहि, मांगि सवै कुछ द्यौं बड़ भागी।

१. बोपे।

फेरि कह्यौ मम धांम चलौ अव, जौर भजौत रहौ वुधि पागी।
फूल मंगाइ मगंहर सोइ र, भक्ति दिपा इम ले वपु सागी ॥११५

मूल

दास कबी र की तेग तिहूं पुर, है धुर धाक पुकारत माया।
कांम र क्रोध से जोध जुगति सूं, मारि मरद नै गरद्द मिलाया।
रांमहि रांम रटचौ न घटचौ पन, त्यागि तिरग्गुण नृगुण गाया।
ज्ञांन-गदा अबदा उर आयुध, राघो कहै भुव भार मिटाया ॥१२८
दास कबीर धर्म की सीर, तिहूं पुर पीर गंभीर गंभीरौ।
जरणां जल रूप अनूप घणी, सु बणी कलि क्रांति ज्यूं हेम मैं हीरौ।
बिधनां बिधि सूं रचि दै रिझयौ, दिज कौं सब दोवटी दै पर पीरौ[1]।
राघो कहै सब लोक[2] के धोक देहि,अैसौ तप्यौ कलि-कालि कबीरौ ॥१२९

घनाक्षरी छंद **अजर जराइ कैं बजाइ कै बिग्यांन तेग,**
कलि मैं कबीर अैसे धीर भये धर्म के।
मारचौ मन-मदन सो सदन सरीर सुख,
काटे माया मोह फंध बंधन भरम के।
निडर निसंक राव रंक सम तुल्य जाकै,
सुभ न असुभ मांनै भै न काल क्रम के।
जीति लीयौ जनम जिहांन मैं न छाड़ि देह,
राघो कहै रांम मिलि कीन्हें कांम मर्म के ॥१३०

छपै **रैदास नृमल बांणी करी, संसै ग्रंथ बिदार नैं॥**
आगम निगम सुंण[3], सबद सब मिलत उचारन।
पैं पांणी भिन्नता, संत हंसा साधारण।
गुर-गोबिंद परसाद, मुकति याही पुजांहीं।
ब्राह्मन क्षत्री चकित, काटि उप नयन बतांही।
अष्ट मदादिक त्यागि, या चरन रैंन सिर धार नैं।
रैदास नृमल बांणी करी, संसै ग्रंथ बिदार नैं ॥१३१

---

१. दीरौ। २. लोके धोक देहि। ३. पुरांण।

टीका

इंदव छंद
रांमहि नंद सुसिष्ष भलौइ क, ब्रह्म सु चारिहु चूंनहि ल्यावै।
बैस्य कहै इक चूंन हमारहु, ल्यौ तुम बीस-कबार[1] सुनावै।
मेह भयो तब बापहि ल्यावत, भोग धरचौ हरि ध्यांन न आवै।
रे किम ल्यावत बूझि मगावत, ढेढ बिसाहत श्राप चलावै ॥११६
नींच भयो सिसु खीर न पीवत, या दिसु पूरब बात रहाई।
अंबर बैंन सुन्यौं रमनंदहि, दंड भयो मनि यौं चलि जाई।
देखत पाइ परे पित-मातहि, सीस धरचौ कर पाप नसाई।
बोबन पीवत यौं पन जीवत, ईसुर जांनत फेरि भुलाई ॥११७
साधहि सेव लगे रयदास जु, मात-पिता स जुदा करि दीया।
संपति ठांव दिया न हुता बहु, याहु तिया पति नांव न लीया।
जूतिन गांठि निबाह करै तन, और उपांनत संतन कीया।
सालगरांमहि छांनि छवावत, आप सवा हरि बांटहि धीया ॥११८
पावत कष्ट गनैं न भजै हरि, संत सरूप धरे प्रभु आये।
भोजन पांन कराइ रिझावत, लेहू करौं सुख पारस ल्याये।
पाथरढीं मन सु नहि कांम, भजैं इक रांम बहौ समझाये।
हेम दिखाइ दयो घसि रांपि न, हाथि दयो धरि छांनि पिखाये ॥११६
मास तियौं दस बीति गये हरि, पूछत है जन पारस रीतं।
ल्यौ वहि ठौर समोड़ र चौरस, द्यौ किहि और स पावत भीतं।
लै फिर जात सुनौं नव बात, महौरहु पांच दई निति धीतं।
पूजन हुं करते भय मांनत, राति कही प्रभु राखत जीतं ॥१२०
आय समांनि चणावत मंदिर, साधन राखि भली बिधि चीन्हीं।
तांनि बितांनहू ठौरन ठौरन, भाव भगति सु कीरति कीन्ही।
राग र भोग करै बिधि बिद्धिन, ब्राह्मन बैर धरै बुधि दीन्हीं।
आप सिखावत बिप्रन कौं हरि, नीच तिया महलाइत भीन्हीं ॥१२१
प्रेम सहेत करै निति पूजन, यौं रयदास छिप्यौहि लड़ावै।
तौहु सिलावत भूपति कौं दिज, होइ सभा मुखि गारि सुनावै।
दाम बुलाइ कहै नृप जोर न, न्याव करै हरि गैल छुड़ावै।
राखि सिंघासन दोउन कै बिचि, तेउ बड़े जिन पै प्रभु आवै ॥१२२

---

१. कबीर।

मूल

दास रैदास की पैज रही निवही, सर्ब लोक सिरै मधि कासी।
बिप्रन बाद कियो यह जांनिकैं, सूद्र क्यूँ सालिगराम उपासी।
टेक यहै बटवा बिचि राखहु, जाहिकै प्रीति है ताहिक आसी।
राघो कहै गये दास रयदास पैं[1], प्रीति खुसी हरि जाति न जासी ॥१३२

टीका

गढ़ चितोर हि भूप तिया सिषि, आइ हुई उस नाम भुभाली[2]।
साथि कई द्विज देखि उठे दभि, भूपति पैं स सभा मिलि चाली।
भांति उहीं धरि है बिचि ठाकुर, पाठ करै द्विज है सव खाली।
गावत है पद हौ अघ-मोचन, आइ लगे उर प्रीति सु पाली ॥१२३
देसि गई फिरि कागज भेजत, आइ दया करि पावन कीजै।
आप चितौर गये धन वारत, ब्राह्मन आवत पांहूं जिमीजै।
जीमन कौंज लगे जबहि दिज, दोइन मैं रयदास लखीजै।
आंम्हनि सांम्हनि पेषि भये सिष, काटि र कंध जनेउ दिखीजै ॥१२४

पीपाजी कौ मूल

छपै **[पीपै सिंघ प्रमोधियो, जगत बात बिख्यात है॥]**
देबी द्वादस बरष, सेय करि मांगत मुक्ति।
सक्ति साच कहि दई, लाइ मन करि हरि-भक्ति।
श्रीरांमांनंद गुर धारि, करचौ अति भजन अनूपं।
परचा पद परसिधि, धरे उर संत सरूपं।
परस पछौपैं सरस पुनि, जन राघो आक्षात है।
पीपै स्यंघ प्रमोधियो, जगत बात बिख्यात है ॥१३३

इंदव छंद **देवी दयाल भई दत दैंन कौं, मांगि जितो मन भावत पीपा।**
जन के मुख तें यह जाव भयो, मोहि मोक्ष करौ जननी सत दीपा।
दीन भई दुरगा मुख भाखत, मोक्ष र मोहि नहीं छल छीपा।
राघो कहै गछि ग्यांन कै मारग, रांम भजौ रामानंद समीपा ॥१३४
दक्षिन देस नरेस वडै कुल, रांम कै कांम कौं रावत पीपा।
रज कौ रज मां प्रगट्यौ अज मां, अजबंस की छाप कौ अंस उदीपा।
कांम कलेस प्रवेस न पाखंड, सीतार है दिन राति समीपा।
राघो कहै भजनीक भलौ भड़, नांव की तेग सूं नौखंड जीपा ॥१३५

---

१. कैं। २. भुभाली।

टीका

मत-गयंद

भूप गयो गढ़ गाग्रुन कौ, पुनि सेवत देबिहि रग लग्यौ है।
चक्र हुतौ पुर संत पंधारत, चूंन दयो हरि भोग पग्यौ है।
सैन कर्‌यौ रजनी सुपनै महि, भूप पछारत रोइ भग्यौ है।
आपन कौं न सुहात फिर्‌यौ मन, देबि परी पगि भाग जग्यौ है ॥१२५
जांनत है सव स्यांन भई नृप, जात बनारसि स्वांमिहि पासा।
जांन लग्यौ सुगुरू ढिग अंदर, द्वार सु रक्षक बर्जत तासा।
जाइ कही प्रभू भूपति आवत, मा इक कांम न आप उदासा।
बेग लुटावत कूप परौ अब, जात परन्नहि देत हुलासा ॥१२६
दास कर्‌यौ कर सीस धर्‌यौ उर, नांव भर्‌यौ कहि जाहु उहांहीं।
साधनि सेवत दे धन धांमहि, कीरति आइ कहै हम आंहीं।
आइस पाइस आवत स्वै पुर, वैहि करी जन प्रीति करांहीं।
कागद भेजत बोल करौ सति, चालिस संत सुसंगि चलांहीं ॥१२७
साथि कबीर रदास हि यादिक, सैर कनै सुखपालहि ल्यायौ।
लागि पगां सब कौं परनांमहि, मांहि पधारत माल लुटायौ।
सेव करि निति मेव मिठाइन[1], राग करे गुण जीभ न मायो।
देखि भगत्ति मगंन भये सब, बैठि रहौ कहि साथिहि ध्यायो ॥१२८
साथि चली त्रिय द्वादस बर्जत, मांनत नांहि घणी डर पावै।
फारत कंबल ज्यौ[2] गलि मेखलि, भूषन दूरि करौं मन भावै।
आंम्हन सांम्हन देखत भांमनि, रोय चली इक सीत रहावै।
नांखिहु याहि तबै वहु डारत, नागि भई गुर कंठि लगावै ॥१२९

मूल

मनहर छंद

अैसौ सूर-बीर न सरीर संक मांनैं नैक,
पीपौजी प्रचंड नवखंड मध्य गाइये।
सीताजी सदन तजि मदन कौ मार्‌यौ मांन,
नगन ह्वै नांची त्रिहूं लोक मैं सराहिये।
छाड़ि दीन्हां भोग भछि स्वांमी संगि चली गछि,
कांमरी कमरि सिर मांगी भिक्षा पाइये।

---

१. निठाइन। २. ल्यौ।

रघवा रतीक प्रसि पीपोजी पारस अंग,
उधरे हैं ताकै संगि अनंत बताइये ॥१३६

टीका

इंदव छंद · आप दया करि द्यौ अब काहुक, मैं न रखौं इन साच कही है।
सौंह कढावत साथि लई जव, चालत ही दिज पात मही है।
फेर लयौ उन ज्याइ पठावत, चालि सबै हरि धांम लही है।
कोउ दिनां रहि मांगत आइस, सागर डांकि परे सु गही है ॥१३०
लैंन पठाइ दये हरि स्वै जन, देखि पुरी फिरि कृष्ण मिले हैं।
कंचन म्हैलन म्हैलन क्रीड़त, सात दिनां सुख पाइ भले हैं।
देव कहै जइये अब बाहरि, मांन तनै हरि रूप झिले हैं।
डूबि रह्यौ जन ह्वै अपकीरति, ब्याकुल ह्वै डर मांनि चले हैं ॥१३१
साथि भये नवड़ावन कौं हरि, प्रेम बधे जन बाहरि आये।
लेत पिछांनि सबै इक आचर्य, अंबर भीजत देह सुकाये।
छाप दई जग पातग काटहु, ऊठि चलौ कहि सीत जनाये।
मारग चालत तुर्क मिल्यौ इक, खोसि लई तिय रांम छुड़ाये ॥१३२
जाहु अबौं घर नारिहि कौं डर, रांम न जांनहु यौं उठि बोली।
पारख लेत सुहै हरि हेत, सुनी निहचै तब अतर खोलो।
मारग दूसर जात मिल्यौ हरि, दे उपदेस मिटावत रौली।
सेष सज्या हरि देखि धनेर हि, बांस हरे करि चींधड़ छौली ॥१३३
भक्तन देखि कहै तिरिया, पति नै घर मैं कछू प्रीति कराई।
बेस उतारि रु बेचि लयो अन, पाक करौ तिय देत छिपाई।
भोग लगाइ रु जीमन बैठत, ल्यौ तुम दंपति पीछै रहाई।
जौ तुम पावत तौ हम पावत, सीत गई वत नग्गन सु पाई ॥१३४
बेस कहां तुम यौंहि रहै हम, संतन सेव करै इम बाई।
आवत साध अनंद अगाधहि, देह रहौ किम बात न भाई।
फारि दियो पट बांधि कह्यौ कटि, हाथहु खैंचत बाहरि आई।
भक्त यहै हम भक्त कहावत, होइ इनौं पहि स्वांमि सुनाई ॥१३५
बारमुखी बणि ल्याइ धरैं धन, चालि गई जित नाजहि ढ़ेरी।
आवत लोग नखै द्रिग रोग रु, चाहत भोग कटाक्षहि फेरि।

को तु बता इम पातरि आहि, यहै भरवा सुनतैं परि बेरी।
रोक रु नाज दयो सब साज[1], सु चींधड़ देतहि जात निबेरी ॥१३६
ढोडहि आवत भूखन धावत, दांमहिं पावत जाव नहांनैं।
भूंमि गड्यौ चरवा लखि म्हौरन राति कही त्रिय बात सु वांनैं।
चोर सुनी धन पासि गये, खनि देखि भुजंग हतै उन प्रांनै।
डारि दई गनि कैं सु लई सत-सात र बीस तुला पच गांनैं ॥१३७
आवत द्वारि जिमावत है जिनि, साधन दे दल बेगि खवायौ।
तीन दिनां महि सर्ब लुटावत, सूरज भूप तबै सुनि धायौ।
दर्सन देखि भयौ अति पर्सन, देहु दक्षा हम सौ हम भायौ।
जो मन आवत सोउ करौ अब, ल्याइ धरौ सब रांणिन ल्यायौ ॥१३८
पारख ले करि नांव दये फिर, नारि दई परदा मत कीजै।
माल दयो[2] कुछ राखत संत न, मांन नहीं नृप रांम भजिजै।
भ्रात बरे सुनि सूरज के, परताप बड़ौ जन जाइ न खीजे।
बैल बिसाहु न नाइक आवत, हासि करी जनकै बहु लीजे ॥१३९
नाइक जाइ धरे रुपया तुम, द्यौष यला सब गांव रहावै।
छोड़ि गयौ लखि साध बुलावत, जीमत आवत ल्यौ मन भावै।
भक्तन देखत भक्ति भई उर, अंबर ल्याइ रु आप उढ़ावै।
बाज चढ़े सर न्हांन बड़े छड़ि, बांधि लयौ रपि चालत आवै ॥१४०
आप गयो[3] घरि साध पधारत, नाज नहीं कहुँ जा(इ) करि ल्यांऊं।
बसि बिषी त्रिय देखि लुभावत, ल्यौ सबही तुम रैंनि रहांऊं।
जीमत आइ गये बिधि बूझत, बात कही सति मैं निसि जांऊं।
अंग बनाइ चली बरषै घन, कंध चढ़ाइ लई पहुचांऊं ॥१४१
ऊपरि भेजि दई तरि बैठत, सूकि पगां जननी किम आई।
कंध चढाइ रु ल्यावत स्वांमिन, है सु कहां तरि लागत पाई।
कांम करौ न डरौ मन मैं तुम, दे कर माल स मोलि लिवाई।
बोल न आवत नीर बहै द्रिग, जांनि भयो सुध भक्ति दिढ़ाई ॥१४२
बात गई यह भूपति पैं द्विज, ह्वै यकठे बिप्रीति कहाई।
प्रीति घटी नृप की बुधि नूंन स, जांनत नैं यह भक्ति बधाई।

१. साच। २. दया। ३. गये।

ज्ञांनहि देवन स्वांमि चले किन, जाइ कही अब सेव कराई।
जीन करावत मोचिन कै घरि, आइ परचौ पगि यौं सुनताई ॥१४३
बांझ तिया इक रूपवती गृह, मांगत स्वांमि न ल्यौं मन नांहीं।
ल्यांन चल्यौ गुर स्यंघ वत्यौ लखि, होत खड़ौ डर दोइ पखांहीं।
स्यंघ मिट्यौ पुनि बाल भयो तिय, देखि प्रभावहि सीस नवांहीं।
आप खिजे वह भाव कहां, तव दास करौ अब ठेठ निबांहीं ॥१४४
दे उपदेस कियो सुध भूपति, नेम लयो फिरि धांम गयो है।
नांम भगत्त तिया निसि मांगत, लेहु कही भजि है न पयौ है।
लार भगी दिन होत चली नहि, धांमन धांमन देखि नयो है।
मात चलौ तव धांम धरौं फिरि, कांम मिट्यौ गुर-भाव भयो है ॥१४५
च्यारि बिपी नर स्वांग लयो धरि, मांगत सीतहि वेगिहि लीजे।
अंग बनाइ रही घरि येकल, आवत, आकुल जाहु रमीजे।
जातहि स्यंघनि खावन आवत, खात नहीं प्रभु भेष धरीजे।
रोस करै तुम भाव निहारहु, मांनिहु ये सिष रांम भनीजे ॥१४६
संतन कौं दल लेरु पुवावत, गूजरि मांगत तेर दुगांनीं।
आवत भेटहि आजि सबै तव, पीपहि साच स बात बखांनी।
माल चढ़ावत आइ महाजन, है सत च्यारि हुवो प्रवांनी।
देत न लेत दयो समझाइ, बुलाइ मिलाइ जिमाइ सिहांनी ॥१४७
ब्राह्मन कै घर चक्र भवांनिहि, पीपहि न्यौतत संत सुजांनी।
रांमहि भोग लगाइ र पावत, ल्याव सबै बिधि थोर स आंनी।
भोग लगी रिधि ईस्वर कै सब, भूख मरौ द्विज रोस भवांनीं।
वै किन मारत जोर न चालत, छोड़ि दई हरि भक्ति करांनी ॥१४८
तेलनि रूपवती इक देखि र, स्वांमि कहै करि रांम उचारा।
जाइ धणी मरि रांम कहै जरि, बोलत क्यूं न भगत्त बिचारा।
तौ जबही करि जात धणी मरि, होत सती तब रांम संभारा।
स्वांमि कहै अबलै निस-बासुर, तौ रजिवावत ल्यौं रजि वारा ॥१४९
भूपति भैंसि दई बन मैं चरि, आपहि आइ रहै घर मांहीं।
दोंहिं बिलोइ र साधन पावत, छाछि रहै फिरि राब रधांहीं।
चोरि लई उन जांन दई फिरि, पाड़ि न ल्यौ वह सोचि रहांहीं।
हौ तुम कौन स पीप कहै मुहि, देत भये अर पाइ परांहीं ॥१५०

गांव गये जित भेट भई बहु, म्हौर दई भरि गोहन गाडो।
चौरन खोसि लये स चले जब, दौरि कही तुम म्हौर न छाडी।
पाइन ये पहुचाइ दये फिर, सिष्य भये दय भैंसि रु पाडी।
ल्यात घरां जन सीत खिजै उन, आवत है सब संतन आड़ी ॥१५१
पांचहि गांवन तैं दल आवत, मांनि लये जन जाइ रिझाये।
गांवहु ते सिष दोइक डेरनि, देखि लगी पगि आनन्द पाये।
आप तज्यौ तंन जारि दये उन, होइ उदास चली हरि ध्याये।
दूसर गांव मिलेस तज्यौ तन, पांच जगां जरते दिखराये ॥१५२
वैबपुरी चलि टोडहु आवत, देखि सियाबर नैंन सिराये।
बात सुनौं बनियां रिधि लेवत, सात सतौ रुपयाह बताये।
कागद हाथि दयो अरु खीजत, लोग बंचावत आंक नसायें।
सोच भयो बनियां मुख सूकत, आवत भेट दये सु लिखाये ॥१५३
स्वांमि कहै सिय त्यागि करौ गृह, ठीक यहै मन मैं सु करीजै।
ह्वै नृबिर्ति जहां तह बैठि रु, मांग भिक्षा हरि ध्यांन धरीजै।
छोड़ि चले घर संपति ही बहु, तीन दिना मह लूटि परीजै।
जाइ रहे इक ऊजड़ गांवही, आइ सन्यास जमाति भरीजै ॥१५४
ब्राह्मन येक हत्या डर आवत, स्वांमिन सूं सब बात कही है।
गंगहि न्हाइ र पाक जिमावत, ब्राह्मन तौ मम लेत नहीं हैं।
सामगरी इत ल्याव जिमावहि, दूरि करैं तव पाप सही है।
बिप्र र साध सन्यास खुवावत, पांति भई फिरिजैस लही है ॥१५५
सूरज कौं अवसेर भई नर, भेजि बुलावत स्वांमि पधारे।
भेट करी बहु संपति आदिक, आप महौछव गांव सिधारे।
पीछहि साथ सिया ढ़िग आवत, देहु हमैं धन धीह वधारे।
दे दइ संपति थी घर मैं सब, होत खुसी मनि भौतल धारे ॥१५६
कागद आवत श्री रंग कौ ढ़िग, जात भये दिवसा जन द्वारा।
बैठि लख्यौ मन ध्यांन करै हरि, भावहि रूप चढ़ावत हारा।
कांन रह्यौ चित आंन बह्यौ तब, पीप कह्यौ मन ल्याव सिंगारा।
पूजन छाड़ि सिताबहि आवत, पूछत को तुम नांम उचारा ॥१५७

---

१. रथा।

नांव बतावत ज्ञांन सुनावत, श्रीरंग बोलत बाग चलीजे।
जात भये जन वाजन ले करि, जाइर ल्यावत संत पतीजे।
राखि घरां सब बात बखांनत, स्वांमि कहो चलि ताल रहीजे।
लेतां करि उन आतक डेरनि, रूपवती लखि सिष्य करीजे ॥१५८

भाव भरयौ उर नांव धरयौ उभ, तीरथ जा करि टोडहि आई।
पांचक डारहु बांसन ल्यावत, औौर छरी नटि हासि कराई।
बोझ खरा जल पीव न जातस, हाथ अठार वधे रहराई[1]।
ब्रांह्मन पंथ पुकार रह्यौ तब, पूछत. स्वांमिन क्या दुख भाई ॥१५६

धीह कवारि नहीं घर मैं धन, आप कहै चलि तोहि दिवांऊं।
भद्र कराइर भेष बनावत, बोलिय ना नृप पासि पुजाऊं।
ले करि जात भये जन म्हैलन, पूजि इन्है सुनि भेद बताऊं।
ये हमरे गुर कै सम जानहु, भेट करी बहु चालि नड़ाऊं ॥१६०

रैनि उछोहुत द्वारवती महि, लागि चिराक बितांन बरै है।
भूपति पासि हुते जन देखि र, लेत बुझाइ लु हाथ मरै है।
मांनत नांहि कहै सब लोगन, स्वांमिन देखि अचंभ करै है।
मांनस भेजि र ठीक मंगावत, आइ कही सति पाइ परै है ॥१६१

ब्राह्मन आइ कही यक स्वांमिन, अंन उपावन बैल दिवैये।
तेलक छोकर-पांवन ल्यावत, बैल दयो द्विज जाइ उपैये।
बालक रोवत धांम गयो पित, सूरजसेनहि जाइ कहैये।
भूप पठावत जाहु उनौं पहि, आइ पर्‌यौ पगि है घरि जैये ॥१६२

काल परयौ सत पन्द्रह बीसक, द्वन्द मच्यौ मरि है सब लोई।
स्वांमिन कैसु दया मन मैं अति, देत सदा ब्रत आवत कोई।
पात भयो धन भूमि गड़यौ बहु, देत लुटाइ न राखत सोई।
कांन सुने जितने परचे कहि, पीपहि के गुन पार न होई ॥१६३

धनांजो कौ मूल

छपै **[संतन कै मुख नांखि कैं, धनैं खेत गोहूं लुणे ॥]**
बीज बांहणैं लग्यौ, साध भूखे चलि आये।
मगन भयो मनमांहि, सबै गोहूं बरताये।

---
[1]रासरुक।

मात पिता तैं डरत, रिकत ऊंमरा कढाये।
भक्त भाव सौं भजे, और तैं बधे सवाये।
राघो अति अचिरज भयो, बिन बाहें निपजे सुणे।
संतन कैं मुखि बाहि कैं, धनैं खेत गोहूं लुणे॥१३७

मनहर छंद
गाड़ौ भरचौ बीज बीचि संतन कौं बांटि दयौ,
ऐसै रह्यौ ध्यांन तिहूं लोक धनां जाट कौ।
पारौसी कै खेत कौ करार कीन्हौं हारिन सूं,
हाथ मारि लयो जन कौल कीयो काट कौ।
गेहूं लगे ठौर[1] कछू वोरन कौं नांहीं और,
ऊंमरा कठाये डर मांन्यौ राज हाट कौ।
राघो कहै खेत हरि हेत अति नीपज्यौ जु,
दिन दिन बढ़त प्रवाह पुनि ठाठ कौ॥१३८

[टीका]

मत-गयंद छंद
खेत कथा कहि दी सब राघव, फेरि सुनौं इक पैल भई है।
बैसनु ब्राह्मन सेव करी घरि, देखि ठरचौ मन मांगि लई है।
गोल असंम उठाइ दयो वह, लेत भयो अति बुद्धि दई है।
भोग लगावत आड करावत, गास न खावत चित नई है॥१६४
पाइ परै विनतीह करै तजि, भूख मरै अड़ि कैं जु पुवायो।
रोटि न ल्यावत नित्य जिमावत, जोरहि[2] पावत यौं मन लायो।
कोउ खुवावत वाहि रिझावत, गाइ चरावत यौं प्रभु भायो।
आइ फिरौं द्विज देखत नैं कछु, बात कही सब रांम दिखायो॥१६५
गाइ चरावत देखि खुसी द्विज, भाव भयो जल नैंन ढरै हैं।
धांम सिधारि सु रांम रिझावत, आय हुवा जिम रीति करै है।
रीझि कही हरि जाहु धनां गुरु, रांमहि नंद करौ सु सिरै है।
जाइ भये सिष कंठ लगावत, कांम करै घरि ध्यांन धरै है॥१६६

सैनजी कौ मूल

छपै
[जगत मांहि यह प्रगट है, सैन सरम राखी हरी॥टे०]
सुणि घरि आये संत, भक्त इक बड़ौ हजांमी।
टहल करी मन लाइ, जांनि कैं अंतर-जांमी।

---
१. गौर। २. डोरहि।

लीये रछौंड़ी काच, भूप पैं प्रभु पधारे।
मरदन कीयो तेल, राइ बहौं भये सुखारे।
सैंन देखि नृप सिष भयो, आज मुक्ति मेरी करी।
जगत मांहि यह प्रकट है, सैन सर्म राखी हरी ॥१३९

इंदव छंद
एक समैं जन सैंन कै संत, पधारे हु ते उन प्रीति लगाई।
मंजन बेर भई नृप टेरत, आपन आइ भये तहां नाई।
सैंन सुन्यौ समजो[1] जब बीतिगौ, राजा के रांमजी दाबिगौ पाई।
राघो कहै अपनै जन की, महिमां हरि आदन आप बधाई ॥१४०

टीका

सैंन भगत्त सु बांधू रहै गढ, नांपिक जाति रु संतन सेवै।
नेमहि साधि चल्यौ नृप न्हांवन, आवन साध फिरचौ मन देवै।
सेव करै जन नांहि डरै हरि, भूप नहावत पाइन भेवै।
सैंन चल्यौ फिरि जाइ मिल्यौ नृप, जांनि अचंभ कहा यह टेवै ॥१६७
भूप कही फिर क्यूं करि आवन, ढील भई घरि संत पधारे।
मैं अब आवत भूप लग्यौ पगि, आप कृपा मम रांम सिधारे।
सिष्ष भयो उर भाव लयो अर, प्रेम छयो सब पित्र उधारे।
रीति वहि अजहूं सुत नांतिन, और कुटंब करचौ निरधारे ॥१६८

मूल

छपै
यम रसन[2] रांम रस पीवतैं, सही सुखानंद निसतरचौ ॥
गौड़ी राग गंभीर, हेत सूं हरि जस गायै।
गगन मगन गलतांन, नृषि नृभै पद पायै।
निज तन[3] निगम रसाल, चाखि रस चित दै चोखो।
चौथौ फर फारीक, गहत कछू रहत न धोखो।
जन राघो तर तृभवन-धणी, सर्ब-घट-व्यापक बिसतरचौ।
यम रसन रांम रस पीवतैं, सही सुखानंद निसतरचौ ॥१४१
यौं रांमांनंद प्रताप तैं, जन राघो भेटे रांम कौं ॥
बड़ौ बित ब्रिद भक्ति-कंद भावानंद पायौ।
यौं अखंड निज जाप, अहौं-निसि हरि हरि गायौ।

---

१. समवो। २. रसिक। ३. तत।

त्रिबिधि ताप तन दूरि, जीव जे आये चरणां।
तारिक मंत्र सुनाइ, मिटायो जामण-मरणां।
सुख पायो संसौ मिट्यौ, पूजि परम गुर-धांम कौं।
यौं रांमांनंद प्रताप तैं, जन राघो भेटे रांम कौं ॥१४२
सुर सुरानंद साचै मतै, महा-प्रसाद सब मांनियौं ॥टे०
चले जात मघ मध्य, जीमिये बरा बाकछल।
पीछैं पाये सिषन, देखि स्वांमी की सुभ चल।
वासूं आपन कह्यौ, बवन करि नांखि अभागे।
उन फिरी कीयो ढेर, जिसे खाये थे आगे।
सुपति सुरसुरी ऊगले, पुसप पतासे जांनियौं।
सुर सुरानंद साचै मतै, महा-प्रसाद करि मांनियौं ॥१४३

इंदव छंद
साचै मतै सुर सुरानंद नांव ले, काहूं सौं मांन गुमांन न जाकै।
दोजगी दुष्ट दुसील इसे परि, क्षोभ भरे जिव छिद्र न ताकै।
वै निरदोष निरपक्ष निरमल, ताहू सौं खेचर खेचरी हाकै।
राघो कहै भर भीर परें, प्रगटे परमेसुर बोचि सभा कै ॥१४४

छपै
यौं निधून नर-हरियानंद की, वा माता सूं महिमां भई ॥
लगी झरन की झींक नंद कै नहीं बरीतौ।
हुतौ द्रुगा कौ द्वार सहर मैं सदन बदीतौ।
राघों रूतौ महंत मात की छाति उपारी।
तब कीयो भवांनी कौल भक्त ग्रह लकरी डारी।
इक पारौसी हरि बिमुख सत कै भोरै बूडौ।
कूटे जाइ कपाट जाल पाप कर्यौ जूड़ौ।
आप बदलै की बेठ गहि, निति साकत कै सिरि दई।
यौं निधून नरहरियानंद की, वा माता सूं महिमां भई ॥१४५
यौं नारि सुर-सुरानंद की, प्रभु राखी प्रहलाद ज्यूं ॥टे०
ध्यांन करत धर्महीन, असुर जब भये सकांमी।
स्यंघ रूप कौं धारि, उद्यत भये अंतरजांमी।
धरि धरि पटके दुष्ट, नष्ट दांतन उर फारे।
कछू जीवत गये भाजि, महापापी संघारे।

राघो संम्रथ रांम धनि, भक्त-बछल ब्रिद कहत यूं।
यौं नारि सुरसुरानंद की, प्रभु राखी प्रहलाद ज्यूं ॥१४६

मनहर छंद

यह हित रजखांनि मिली आंनि हित जांनि करि,
स्वांमी रांमांनंद गुर सिष पदमावती।
मन कौ उतारचौ मांन उरमी उद्यम आंन,
बिसरै न रांम रांम रहै गुन गावती।
गुर कौ सबद उर भ्रम कौ बसायो पुर,
ज्ञांन-ध्यांन सील सत और वृति जावती।
राघो कहि कासी मधि हाथी जीयो हाथ देत,
प्रसिधि प्रवीन भई आयौ न जनावती ॥१४७

छपै

जन राघो रटि रांमहि मिले, ये दाता आनंद-कंद के ॥टे०
कर्मचंद क्रमगलित जोग जोगानंद पायो।
पैहांरी परसिधि समझि सारी हरि गायो।
मगन मनोर्थ अल्ह भयो श्रीरंग रांम रत।
कीयो गयेस प्रवेस मैह[1] मन दीयौ परमेतत।
येते आठौं अटल सिष, स्वांमी अनंतानंद के।
जब राघो रांमहि मिले, ये दाता आनंद-कंद के ॥१४८
धनि अब गति अचिरज भयो[2], यौं अंब नवायो अल्ह कौं॥
उपबन उत्तम[3] सुथांन, फूल फल ता मधि भारी।
तहां महंत भयो मगन, समझि सेवा बिसतारी।
भवतबिता कै भाइ, असुर अज गैवी आये।
उन लीन्ही छांह छुड़ाइ, संत मुनि मारि उठाये।
तब राघो रांमहि रिषि भई, वे सठ समझाये कल्ह कौं।
धनि अब गति अचिरज कीयौ, यौं अंब नवायो अल्ह कौं ॥१४९

टीका

मत-गयंद

जाइ चले इक बाग निहारत, अल्ह भई मन पूजन कीजे।
आंब रह्यौ पचि मालिहि जाचत, लेहु कही अब[4] डार नईंजे।
जाइ कही नृप सौंज हुई जिम, प्रीति भई सुनि पाव गहीजे।
आइ परचौ पगि आजि भलौ दिन, सीस दयो कर रांम भजीजे ॥१६९

---

१. मेहा। २. कियौ। ३. तमसथांन। ४. तब।

श्री रंगजी की टीका

श्रीरंग नांम सरावग जांम, हुतौ दिवसा तिन बात बखांनौं।
चाकर ह्वौ जम-धांम गयो उत[1], दूत भयो इन आइ लखांनौं।
नाइक नैं लय जात स देखहु, सींग बड़्यौ पसु मारि दिखांनौं।
रांम भजें बिन ह्वै जग यौं गति, भक्त भयौ सिर अनंत रखांनौं ॥१७०
पुत्र दिखावत भूत सरूपहि, सूकत जात सु बूझिक सूतौ।
मारन ध्यावत रैंनि उठे जन, माक्ष करौ मम भौत बिगूतौ।
होत सुनार तिया पर सूं रत, भूत हुवो तव पाव पहूंतौ।
रांमहि नांम सुनाइ करयौ सुध, आप कही फिरि होइ न भूतौ ॥१७१

पैहारीजी कौ मूल

छपै निरबेद दिपायौ कृष्णदास, अनत जिकैं पीयौ दुगध ॥टे०
बड़े तेज के पुंज, रांम बल कांम संघारे।
चरणांबुज आत-पत्र, राव राजा सिरि धारे।
जाकौं दक्षा दई, तास तलि कर नहीं कीयो।
सरणैं आयो कोइ, ताहि नृभै पद दीयो।
बंस दाहिमैं रवि प्रगट, साध खुलैं मुदि है मुगध।
निरबेद दिपायौ कृष्णदास, अनत जिकैं पीयौ दुगध ॥१५०
कृष्णदास कलि-कालि मैं, दधीच ज्यूं दूजैं करी ॥
स्यंघ सरिण यौं जांनि, काटि तन मांस खुवायौ।
भई पहुंन गति भली, जगत जस भयो सवायो।
महा अपर बैराग, बांम कंचन तैं न्यारे।
हरि अंघ्री सुठ गंध, लेत अह-निस मतवारे।
गाला-रिष आश्रम बिदत, रीति सनातन उर धरी।
कृष्णदास कलि-काल मैं, दधीच ज्यूं दूजैं करी ॥१५१

इंदव छंद ज्ञांन अनंत दयो अनतानंद, यौं प्रगट्यौ कृष्णदास पैहारी।
जोग उपास्यौ जुगति सूं तेजसी, अंतरवृति अवयंचनधारी।
जाकैं धरयौ कर सीस कृपा करि, तास की भेट भींटी न निहारी।
राघो बड़ी रहणी मिल्यौ रांम कौं, मोक्ष कौ पंथ निकाय कैं भारी ॥१५२

---

१. उन।

काटि सरीर दयो भक्ष स्यंघ कौं, पैज रही कृष्णदास की भारी।
प्यंड ब्रह्मण्ड स्थावर जंगम है, अब मैं बिस्व रूप बिहारी।
संतन कौं अबस्स दयो जिन, ज्यौं तन सौंपत नाह कौं नारी।
राघो रह्यौ गलतै गलतांन ह्वै, रांम अखंड रट्यौ इक तारी ॥१५३

टीका

जा सिर हाथ दयो न लयो कछु, राज दयो उन भूप कलू कौ।
डूंगर ब्यौर मिले सुत मातहि, दे हरि पूजन संत सलू कौ।
थार जले बिपरी सु लई सुत, भोग बिनां दुख पात हलू कौ।
मारन कौं तरवारि लई जन, वोट लई धन देत मलू कौ ॥१७२
भूपति पुत्र भगन्न भयो भल, संत सलाधि नहीं जन अैसौ।
साध तिया ग्रभ दे जुग पातलि, बालक है गुर आप कहै सौ।
भेष धरयां इक जूतनि बेचत, भूप कहा कर जोरि हरै सौ।
त्याग करौ जग होइ बुरौ धन, देर रिझावत पाइ परौ सौ ॥१७३

मूल

छपै पैहारी गुर धारि उर, सिष इते भये पार सब॥
अग्र कील्ह अरु चरण, नराइण पुदमनाभ बर।
केवल पुनि गोपाल, सूरज पुरषा पृथु तिपुर।
टीला हेम कल्याण, देवा गंगा सम गंगा।
बिष्णदास चांदन, सबीरां कांन्हा पुनि रंगा।
जन राघो भगवंत भजि, सिर तैं डारयौ भार अब।
पैहारी गुर धारि उर, सिष इते भये पार सब ॥१५४
स्वइंछा भीषम गबन, त्यूं कील्ह करण त्याग्यौ सरीर ॥टे०
राति दिवस हरि भजै, पलक नहीं अंतर पारै।
जेते प्राणीं भूत, नाइ सिर पाप निवारै।
नाग डसे त्रिय बार, जहर नहीं चढ्यौ लगारा।
सांखि जोग मजबूत, चले ह्वै दसवें द्वारा।
राघो बल परब्रह्म कै, सुत सुमेर दे सरस धीर।
स्वइंछा भीषम गबन, त्यूं कील्ह करण त्याग्यौ सरीर ॥१५५

इंदव कील्ह करण सरणैं संम्रथ कै, यौं परमेसुर पैज सुधारी।
छंद कांम न क्रोध न मोह न मंछर, नृमल ह्वै निज आतम तारी।

नांव नृदोष उचार कीयो ऐसें, दोष मिटे दस देह के भारी।
राघो कहै परचौ भयो प्रतक्ष, गूदरी नैक टरं नहीं टारी ॥१५६

टीका

देव सुमेर हुते गुजरातहि, बैठि बिमांन सु धांमहि चल्ले।
कील्ह रु मांन हुते मथुरा महि, देखि अकास उठे कहि भल्ले।
भूप कहै अजु काहि सुनावत, मेर[1] पिता हरि मांहि सु मिल्ले।
मांनि अचंभ पठावत मांनस, आइ कही सति पावहि झिल्ले ॥१७४
यौं हरि प्रीति लई मृति जीति, सनातन रीति सु पूजन कीजै।
फूलन हार पिटारि मझार, डसे जन[2] ब्यार स फेर कठीजै।
तीनहि बेर डसाइ घिरे जन, झैर चढ्यौ नहीं रांम भजीजै।
संत सभा महि बैठि मिले प्रभु, जोग कला ब्रह्म-रंध्र भनीजै ॥१७५

मूल

छपै　**अग्रदास आगर भयो, हरि सुमरन पन प्रेम कौ ॥ट०**
बहुत बाग सूं प्रीति रीति, हरि की जिन जांणीं।
नींदै गौंदै आप, आप परवाहै पांणी।
जो उपजै फल फूल, सोई प्रभुजी कौं अरपै।
साध-लक्षण सा-पुरष, भगत भगवत सूं डरपै।
राति दिवस राघो कहै, उदस करत निति नेम कौ।
अग्रदास आगर भयौ, हरि सुमरन पन प्रेम कौ ॥१५७

टीका

इंदव छंद　भूपति मांन दरस्सण आवत, बाग छयोद रहै सु सिपाही।
पात बुहारि गये जन डारन, भीरहि देखि र बैसि रहाही।
नाभहि आइ प्रनांम करी, जल नैंन भरे परवाह बहाही।
देखि रह्यौ नृप हारि गयौ ढ़िग, खीजत चाकर आप कहाही ॥१७६

मूल

छपै　**मन बच क्रम धर्म धारि उर, जन राघो उधरे रांम कहि ॥**
दिप्यौ दमोदरदास, तिलक गुर कौ लह्यौ पाछैं।
चतुरदास भगवान, रूप मत गह्यौ सु आछैं।

---
१. मोर।　२. जब।

लाखा छीतर देवकरन, देवासु सुघड़ अति।
खेम राइमल गौड़, करी ग्रह भगति-भाव मति।
अदभुत राइमल नीपजे, गुर कील्ह करन कौं सरण गहि।
मन बच क्रम धर्म धारि उर, जन राघो उधरे रांम कहि ॥१५८

जन के कारिज करत है, अनबंछित हरि आइ ॥
ये नाभा जगी प्राग, बिनोदि पूरण पूरे।
बनवारी भगवांन, दिवाकर नांहि न दूरे।
नृस्यंघ खेम किसोर, लघु ऊधौ जगनाथहि।
ये तेरह सिष अग्र के, सीझे मुनिं गुर कै साथहि।
जन राघो रुचि प्रीति पन, जे मन सधत सुभाइ।
जन के कारिज करत है, अनबंछित हरि आइ ॥१५९

नाभाजी कौ मूल

मनहर छंद

नाभै नभ सेती कीन्हौं खीर-नीर भिन भिन,
ग्रंथन कौ सार सरबंगी हरि गायौ है।
भक्ति भगत भगवंत गुर धारि उर,
बिच र बखांणि सर्वही कौं सिर नायौ है।
सत-जुग त्रेता अर द्वापर कलू के भक्त,
नांव क्रितमाला कीनी नीकौ भेद पायौ है।
राघो गुंर अगर कूं अर्पि गिरा गंगजल,
पुरे पतिब्रत बलरांम यौं रिझायौ है ॥१६०

मूल

छपै

अंधेर अज्ञता नासनैं, उदित दिवाकर दूसरौ ॥
परमोधे भूराज, नहीं को आज्ञा मोटै।
पक-पादप की न्याइ, संत पोषन ले भेटै।
अब पैं छाया कृपा, गिरा भोला यौं बोलै।
सुमरै रघुपति निति, साध के अंध्री खोलै।
कसिप करमचंद सुत, सुहृद बरखे ऊसर सूसरौ।
अंधेर अग्यता नासनैं, उदित दिवाकर दूसरौ ॥१६१

परखत साध सरांवहीं, मनौं दिवाकर यहु दुती ॥
उत्म भजन प्रकासि किरिणि, करणी करि पोषे ।
सीयाबर गुण नाम गाइ, आंन न संतोषे ।
जनक-सुता आधार अंघ्रि ग्रहि, यहुधन धरियो ।
गुर नरहर की कृपा, पुत्र नांतीयौ करियो ।
रघुनांथ इष्ट निहचल सदा, आंन बात को ना हुती ।
परखत साध सरांवहीं, मनौं दिवाकर यहु दुति ॥१६२

इंदव पर की प्रभुता करै आप अमानक, असो भयौ दिव्य देव दिवाकर ।
छंद संत सुभाव अबंगी सिरोमनि, मांनू मिली दुरि दूध मैं साकर ।
जीवत मुक्ति दिपै दसहूं दिसि, ज्यूं नव-खंड उद्योत प्रभाकर ।
राघो कहै परमारथ सूं रुचि, स्वारथ कै सिर दै गयो टाकर ॥१६३

छपै श्री सौरंभ स्वांमि प्रसाद सौं, पण ब्रत रह्यौ प्रियाग कौ ॥
मन बच क्रम भगवंत, उभै अंघ्री उर भायें ।
लीला मैं निर-जांन, भाव तन दोइ दिखाये ।
संतन सरस सनेह, मांनि दोऊ दल लीया ।
अंकू बलौ दे आड़ि, महोछा पूरण कीया ।
वोली[1] धुजां चढावहीं, वयारे कलस भाग को ।
श्रीसौरंभ गुर प्रसाद तैं, पण ब्रत रह्यौ प्रियाग कौ ॥१६४
हठ-जोग जमादिक साधिकैं, द्वारिकादास हरि सौं मिल्यौ ॥६०
कूकस की नदिका, नीर मैं लगी समाधी ।
प्रभु पद सुं रति अचल, येक आतम आराधी ।
बांम जांम घर बित बंध, कुल जगत निरासा ।
कांम क्रौध मद मोह, करम की काटी पासा ।
गुर कील्ह करण प्रसाद तैं, भक्ति सक्ति भ्रम कौं गिल्यौ ।
हठ-जोग जमादिक साधिकैं, द्वारिकादास हरि सूं मिल्यौ ॥१६५
परम धरम धन धारि उर, पूरण बैराठी प्रसन ॥
ऊगूंणौ आंथूण, सैल बिचि नदी बहांनी ।
जम-नेमा प्राणायांमसन, जहां साधे ध्यांनी ।

---
१ वाली ।

सीह बघेरा गरिजि रहे, मन संक्या नांहीं।
बाइ तलै संचरै, तास कौं ऊंचै लांहीं।
पद साखी उजल करे, रांम नांम उच्चरयौ रसन।
परम धरम धन धारि उर, पूरण बैराठी प्रसन ॥१६६
पूरण पूरा ज्ञांन सूं, बैराठी गुर-गम लयौ ॥टे०
अष्टांग-जोग अभ्यास, गुफा कंदर के बासी।
कनक कांमनी रहत सदा, हरि नांम उपासी।
बाचा छले मलेछ, कपट करि ब्याह करायो।
त्यागी तिरिया रहत नहीं, तन कलंक लगायो।
अनल पंख के पुत्र ज्यूं, उलटि अपूठौ बन गयो।
पूरण पूरा ज्ञांन सौं, बैराठी गुर-गम लयो ॥१६७
सिंध-सुता संप्रदाइ मैं, लक्षमन भट भारी भगत ॥
धर्म सनातन धारि, भक्ति करि जग मैं जांन्यौं।
संतन सेती हेत, नेम प्रेमां मन मांन्यौं।
जथा-लाभ संतुष्ट, सुह्रिद परमारथ कीन्हौं।
उत्म इष्ट थापि, साध मारग कहि दीन्हौं।
सारा-सार बिचार उर, सदा कथन श्रीभागवत।
सिंधु-सुता संप्रदाइ मैं, लक्षमन भट भारी भगत ॥१६८
खेम गुसांई रांम पन, रांम रासि गुर सीस धरि ॥टे०
रांमचंद्र कौ अनुग, जगत मैं नांहीं छांनैं।
उर मैं और न ध्यांन, येक सीयारांमहि जांनैं।
कारमुक बांमैं हाथि, दाहिनैं साईक राजै।
यह प्रीय लागै रूप, दरस तैं सर्ब दुख भाजै।
हनुमंत समां सो साहिसी, गद गद बांणीं प्रेम करि।
खेम गुसांई रांम पन, रांम रासि गुर सीस धरि ॥१६९
तुलसी रांम उपास की, रांमचरित बरनन करयौ ॥टे०
बालमीक कीयो सहंस, कृत श्रीफल सम जांनौं।
भाषा दाष समांन, पात परिश्रम मति मांनौं।
नर नारी सुख भयो, प्रेम सूं गावै निस दिन।
पातक सब कटि जात, सुनत निर्मल तन मन जन।

भक्त जक्त निसतार नैं, नांम रूप बोहिथ धरचौ।
तुलछी रांम उपास की, रांम चरित बरनन करचौ ॥१७०

मनहर छंद
कासी मधि कांमजित तपोधन जोग बित,
अति उग्र तेज तप भयो तुलछीदास कौ।
मगन महंत गति बांणीं कौ बिचित्र अति,
रांम रांम रौम सत्य ब्रत सासौ-सास कौ ॥
जत सत सावधांन अमृत कथा कौ पांन,
हरि की कृपा सूं वै हजूरी भयो पास कौ।
राघो कहै रांम कांम अरप्यौ तन मन[1] धांम,
गह्यौ मत अंन येक अटल अकास कौ ॥१७१

टीका : तुलसीदासजी की

प्रीति तियाहि गई उठि बूझिन, दौरि गयेस गई वहि ठौरा।
लाज मरी कहि रीस भरी अब, रांम भजौनि तिमा सच चौरा।
ग्यांन भयो सुनि सोचि विचारत, जात बनारसि धांमहु छोरा।
रांम भजै हरि पूजन धारत, मारत है मन है यह चोरा ॥१७७
वाहरि जात रहै कछु नीरहि, भूत पिवै हनुमांन बताये।
आवत मंदिर रांम चरित्र, सुनैं उठि जातस पैल पिछाये।
जात लखे चलि आरनि हू लगि, पाइ परे दुरि दूरि सुनाये।
जांन न देंत करौ किरपा अब, जांनत कैसक भूत बताये ॥१७८
लेहु कछू बर रांम मिलावहु, कांमतनाथ मिलै प्रभु प्यारे।
कौल करचौ नवमी सुदि चैत्रहु, प्रीति लगी वह द्यौस निहारे।
आवत वा दिन रांम लखम्मन, बाज चढ़े पट रंग हरचारे।
आइ कही हनुमंत लखे प्रभु, मैं न पिछांनत फेरि दिखारे ॥१७९
ब्राह्मन येक हत्या करि आवत, रांम कहै कछु देहु हत्यारैं।
नांम सुन्यौ घर मांहि बुलावत, भोजन दे सुछ नांम तुम्हारैं।
बिप्र जुरे सब जाइ कहै इस, पाप गये किम जीमत लारैं।
बांचत हौ तुम बेद पुरांनन, साच न आवत ग्रन्थ पुकारैं ॥१८०

१. धन।

बांचत पुस्तक नांम हरै अघ, सत्य सबै परमांन कहीजे।
ह्वै परतीति कहो तुम ही जिम, खाइ नदी सुर पांतिहि लीजे।
भोजन ले करि मंदिर आवत, भक्त कहै यह न्याव करीजे।
जांनत हौ तुम नांम प्रतापहि, पाइ लयो जय सब्द भनीजे ॥१८१

रैंनि निसाचर चोर न आवत, स्यांम सरूप खड़े सर लीया।
आत तबैं तब सांधि डरावत, प्रात लगैं हरि आंन न दीया।
बूझत संतहि स्यांम सिपाहिन, बोलत नांहि न नैंन भरीया।
राय लुटावत यौं न सुहावत, चोर भये सिष रांम भजीया[1] ॥१८२

मृत्यु भयो द्विज नारि सती हुत, जोरि करौ दुय सीस नवायो।
रांम सुहागनि बैंन कह्यौ पति, मौति भई उठि है हरि भायो।
स्यांम भजौ सबही कुल सौं कहि, मांनि लई उन बेगि जिवायौ।
भक्त भये सब साखत ता तजि, लेस[2] रहै मन लोक न पायौ ॥१८३

लैन खनाइ दये पतिस्या भृति, ज्याइ दयौ दिज यौं कहि सूबा।
चाहत देखन ल्याव(त) भली बिधि, जात बिनैं करि[3] यौं पग धूबा।
भूप मिले चलि ऊपरि लेवत दे बहुमांन कहै तुम खूबा।
द्यौ अजमत्ति सुनी अति गत्तिहि, रांम करै हमसौं नहि हूबा ॥१८४

रांम करै सु दिखाइ हमै अब, रोकि दये हनुमांन हि ध्याये।
बेगिहि बांदर म्हैल चढे बहु, फारत अंबर देह लुचाये।
ढाहत है गढ़ नांखि तलै लढ़, दांतन तैं बढ़ भूप डराये।
आंखि हुई यह कौंन दई सु, पुकारि कही अब राखि हराये ॥१८५

पाइ परयौ हम जीव उबारहु, देखि अजम्मति[4] लाज नयौ है।
सांत करे सब भूपहि भाखत, ह्यां न रहौ गढ़ रांम भयौ है।
त्याग दयो सुनि और करावत, हाजर है नहीं फेरि पयौ है।
जाइ बनारस आइ बृंदाबन, नाभहि सूंज कबित्त लयो है ॥१८६

कांम गुपाल जु को कर दर्सन, रांम सरूपहि सीस नवांऊं।
धारि लये कर साइक धन्नुक, देखि छबी कहियौं गुन गांऊं।
कोउ सुनांवत कृष्ण सुयं हरि, रांम कला कहि मैं न भुंलांऊं।
जांनत हौ दसरत्थ लला अब, ईसुर आप कहे मन लांऊं ॥१८७

१. भलीया। २. लैंस। ३. कर्यौ। ४. अजन्मति।

मूल

छपै　गुभ्कि लीला रघुबीर की, बिदत करी है मांनदास ॥टे०
सिंगार बीर करणांदि, नृमल रस कृत मधि आंनें।
जनक-सुता बर सुजस, अहोनिसि रहि रंग सांनें।
परमारथ पर्बीन, काव्य अक्षर धर मांनत।
चरणांबुज चित ध्यांन, येक की संपति आंनत।
रांमचरित हनुमत कृत, रहिसि उक्ति धरि करि हुलास।
गुभ्कि लीला रघुबीर की, बिदत करी है मांनदास ॥१७२
रांम रंगीलो भक्ति निधि, बनवारी बपु प्रेम कौ ॥टे०
नौख चौख अति निपुन, बात कबिता मैं चातुर।
खीर नीर बिवरन हंस, संतन सम पातुर।
सब जीवन सुह्रिद, सनातन धर्म संतोषी।
सुभ[1] लक्षन गुनवांन, भजत भयौ जीवन मोखी।
पातक नासत दरस तैं, जु तौ करत निति नेम कौ।
रांम रंगीलो भक्ति निधि, बनवारी बपु प्रेम कौ ॥१७३
मुरधर मांहैं भींथड़ै, केवल कूबै हरि भजे ॥
करता कीयौ कुलाल, भजन कौं भक्त उपावै।
जो नर मिलि है आइ, ताहि जन सेव दिढ़ावै।
तन मन धन सरबंस, येक प्रभु संतन दीजै।
मनख जनम यह लाभ, और कछूवै नहीं कीजे।
मन वच क्रम राघो कहै, भरम करम आरंभ तजे।
मुरधर मांहैं भींथड़ै, केवल कूबै हरि भजे ॥१७४

केवल कूबा को टीका :

मत- संतन के चरणांमत सीत कौं[2], लैनि बह्यौ कलि मैं कृत कूबा।
गयंद (भक्ष) भोजन दै सनमांन घणौ गुण, ग्राही महाबुधि उत्तम खूबा।
पूरण-ग्यांन दयौ निज नृम्मल, पछिम देस भगत्ति कौ सूबा।
राघो कहै पण प्रीति ह्रिदै हरि, धर्म की टेक टर्यौ नहीं डूबा ॥१७५

---

१. सुभग।　२. लौं।

टीका

केवल नांमहि संतन सेवत, बंस उधार करचौ जग जांनैं।
साध पधारत हेत करचौ बहु, नाज नहीं घर मैं कछु पांनै।
लैन उधारि गये जन बैसिहि, कूंप खुदाइ तलै मन मांनैं।
कोल करचौ अब तो लि सिताब ही, रोल चढ़ावत यौं घर आंनैं ।।१८८
खोदत कूपहि रांम कहै मुख, कांम भयो मनि वौ सुख पायो।
धूरि परी धसि मांहि गये दबि, दूरि करै थल होइ सवायो।
होत उदास घरांवह आवत, नांव सुनी धुनि मास वितायो।
कूप गये फिरि होत सुनैं रव, काढ़न लागत धीर कहायो ।।१८९
रेत निकारिक जाइ लये पग, देखि सबै अति अचरज[1] आयौ।
व्यौर लख्यौ जल कुम्भ पिख्यौ तन, कूब नख्यौ हरि कौं इम भायौ।
ध्यावत[2] धांम कहै धनि रांम, पुंमां नर बांम भलै जस गायौ।
आइ जुरचौ बहु लोग उमंगिर, भाव भयौ उर माल चढ़ायौ ।।१९०
मूरति ल्या करि संत पधारत, केवल कै वह रैंनि रहे हैं।
देखि सरूप भई मन मैं यह, नांहि चलै सु अचल्ल भये हैं।
जोर करै मन मांहि डरै जन, हारि चले जब दांम दये हैं।
जानि[3] गये उर अंतर की हरि, नांव सुजांनहि राइ कहे हैं ।।१९१
द्वारवती चलि छाप धरैं भुज, जांन न दे प्रभु धांम फिराये।
संतन की निति टैल करौ, उर भाव धरौ करिहूं तव भाये।
धांमहि संखरु चक्र गदांबुज, चिन्ह भये भुज देखि रिझाये।
सागर गोमति संग रह्यौ सुनि, मालहि मेल्हिर दोइ मिलाये ।।१९२
सिष्य प्रसिष्य हुये तिनसूं कहि, संतन सेव करौ चितलाई।
साध पधारत पाक करै तिय, आपन भ्रातहि खीर कराई।
केवल देखिर बुद्धि उपावत, दो घरि दे करि कूप चलाई।
सोचत जावत संत बुलावत, खीर परूंसि-र बेगि जिमाई ।।१९३
नीर सिताबहि ल्याइ निहारित, देखि उठी जरि भ्रातहु देखै।
केवल काढ़ि दई यह साखत, और करचौ भरता दुख पेखै[4]।
काल परचौ स पलै नहि टाबर, जाइ रहौं कहु यौं [illegible]र लेखै।
साथि लियें भरतारहि बालक, केवल द्वारि परी [illegible] पेखै ।।१९४

---

१. आश्चर्ज, आचर्ज। २. ल्याबत। ३. जौंनि। ४. देखैं।

भोजन-बौ परकार करावत, संत समू चलि आवत द्वारैं।
बैंन सुने तिय मांहि बिनैं दुख, होइ दयालहि राखत बारैं।
मोर धणी लखि तोर धणी पिषि, कष्ट परै जब कौंन निवारैं।
लेपन झारन टैल करौ रहि, अंन मिलै द्रिग चालत धारैं ॥१९५
बाल[1] कटाइर सीख दई तब, जात भई पछितात घणीं है।
पैल समै फिरि पीछै न आवत, रीति भली सतसंग तणी है।
सिष्ष करै जन सेव दिढावत, रांम मिलै इम वात भणी है।
मोलि लयौ कवि भाख छपा महि, रीति दिखाइ दई सु बणी है ॥१९६

खोजीजी कौ मूल

छपै **भाव भगति हित प्रेम सूं, खोजी खोजे रांम कौं॥**
कांम क्रोध अरु लोभ, मोह की काटी पासं।
मुरधर देस निवास, पालड़ी गांव प्रकासं।
समद्रिष्टी सुहृद, साध की सेव करांहीं।
अगुणी नृगुणी भक्त, कहूं सूं अंतर नांहीं।
अनहद बाजा बाजिया, राघो पावत धांम कौं।
भाव भगति हित प्रेम करि, खोजी खोजे रांम कौं॥१७६

इंदव छंद **ज्यौं पित मात कै गोहन बालक, रांम समीप यौं खेलत खोजी।**
जे प्रभु के परण धारि बिचारीक, ताहि कहौब दुखावत कोजी।
जिनकै हिरदै हरि नांम नृमल्ल, जाहि फुरै दसहूं दिसि रोजी।
रांम सूं रत तजै अबिहत्तहि, राघो कहै सतवादी इसौजी॥१७७

टीका

चातुरदास गुरू-जन खोजहि, मृत्यु समैं उन घंट बंधानीं।
रांम मिलैं हम बाजत है यह, चालत बाजिन चिंत बढांनीं।
अंत समैं न हुते फिरि आवत, सोइ वहां मति अंब रहांनी।
ले करि चीरत सूंक्षम जीवस, तांत[2] भयो जब घंट वजांनीं ॥१९७
जोगि भले सिष यौं सब मांनत, है गुर संम्रथ नूंन लखाई।
चंचल है मन पौन[3] समागन; रीति लखौ उन ह्वै सरसाई।

---

१. काल। २. सांत। ३. मौंन समागत।

लीन भये परमेगुर पैलहि, देखि पक्यौ फुल[1] बुद्धि चलाई।
प्रीति फली जन रांम लई मनि, वात रही दुरमत्ति बिलाई ।।१९८

मूल

छप्पै अल्हरांम[†] रावल दया, राघो कलिजुग जीतियो ॥
मोह क्रोध मद कांम, लोभ नीरौ नहिं आयो।
संग्रह जो कछु कीयो, सोई साधन बरतायौ।
आठ मास जल लेत, सूर चौमासै बरसै।
सिष सेवग मरजाद, चन्नावत गुर नहीं परसै।
गुर धरमसोल सत पुनि टहल, करत काल इम बीतियो।
अल्हरांम रावल दया, राघो कलिजुग जीतियो ॥१७८
हरिदास बांवनौ भगति करि, बांवन सम ऊंचौ बढ्यौ ॥
संतन सूं निरदोष रह्यौ, सुपनैं अर जागत।
स्यांम स्वांग सूं प्रीति रीति, यम गुर जिम पागत।
भवन मधि निरबेद, जनक ज्यूं लिपता नांही।
चरन-कवल भगवांन, बास ले मनमत मांहीं।
कुल जोगानन्द परगट्ट कर, रैंनि दिवस रांमहि रढ्यौ।
हरिदास बांवनौं भक्ति करि, बांवन सम ऊंचौ बढ्यौ ॥१७९
जन राघो रघुनाथ की, अथ सिर धारी पावरी।
दक्षन दरावड़ देस, तहां के भक्त बखांनौं।
नरनारी गुरमुखी, जथामति जो हू जांनौं।
सतवादी प्रम-हंस, पुनह श्रीसंत सरूपं।
दास-दास री नमो नमो, ब्रह्मचर रथ भूपं।
आदि भक्ति अनुक्रम धरम, करहि बेद बिधि द्रावड़ी।
जन राघो रघुनाथ की (ज्यूं), अथ सिर धारी पावड़ी ॥१८०
कबीर कृपा कौं धारि उर, पदमनाभ परचै भयौ ॥
रांम मंत्र निज मंत्र, जाप हिरदै मैं राख्यौ।
जप तप तीरथ नांम, नांव बिन और न भाख्यौ।

---

१. फल।

[†] गुरु।

चात्रिग की सौ टेर, कहि गदगद ह्वै बांणीं।
रांम मंत्र निज जाप, देइ उधरै बहु प्रांणी।
जन राघो अनभै उमंगि जल, आप पीयौ औरन पयौ।
कबीर कृपा कौं धारि उर, पदमनाभ प्रचै भयौ ॥१८१

टीका

इंदव छंद
साह बनारसि कोढ हुतौ उन, लट्ट परीतन बूड़न चाल्यौ।
आवत हेस पदम्महि बूझत, बात कही कस खोलि न हाल्यौ[1]।
रांम कहावत तीन बिरयां जन, कोढ़ गयो गुरदेवह काल्यौ।
नांव प्रभावन जांनत नैं कहु, लैस करै सुध जो श्रुति घाल्यौ ॥१९९

मूल

छपै
जीवा तत्वा[2] दक्षण दिसि, प्रगट उधारक बंस के ॥
भक्ति अमृत की नदी, दुहुला की दिढ़ पाला।
जोर बढ़न की रीति, प्रीति सोंही वहि चाला।
सूरज बंस सुभाव, बहुत गुण धर्म-सील सत।
भले सूर दातार, दया परबीन परम मत।
राघो जन अंबुज खुलै, रवि ससि जोजा अंस के।
जीव तत्वा दक्षण दिसि, प्रगट उधारक बंस के ॥१८२

टीका

भ्रात उभै द्विज जीवहि ततहि[3], सेवत संतन सिष्य भये हैं।
रोपत सूंठ[4] हरचौ यह होइस, साधन तोइ सु नांखि नये हैं।
आइ कबीर दिखाइ हरचौ तर, नेम हुवो सिधि पाव लये हैं।
नांम दयो तिनि[5] कांम बनै कठि, आइ कहौ हम वोलि गये हैं ॥२००
ह्वै इकठे द्विज बात गई निज, दूरि करे सु सुता नहि लेवै।
येक बनारस जात कबीर हि, बात कहो सब धीरज[6] देवै।
आप उभै सनबंध करौं न, डरौ चित मैं समझौ यह भेवै।
आइ करी वहि ज्ञाति डरी उर, नूंन धरी कहि यौं पग सेवै ॥२०१
यौंहि करै हम आंन न भावत, लेत तिणां मुख टेक तजीजे।
फेरि बनारस जा करि बूझत, ब्याह करौ सिरदंड धरीजे।

---

१. ह्वाल्यौ। २. तत्व। ३. तत्वहि। ४. ठूंठ, बूंठ। ५. तिठि। ६. धारज।

भक्ति करौ जन भाव धरौ तब, देत तुमैं सुनि लेत करीजे।
साखत भक्त भयेरु सराहत, पंच कहै तुम्हरे पन रीझे ॥२०२

मूल

छपै करणीं जित कबीर-सुत, अदभुत कला कमाल की ॥
प्रगट पिता संमाज रहे, कछु इक दिन द्वारै।
सतवादी सत-सूर, भजन सौ कबहूं न हारै।
सुक सनकादिक जेम, नेम सूं निरगुण गायौ।
मन बच क्रम भयो मगन, भेव कांहू नहीं पायौ।
जन राघो बलि (बलि[1]) रहणि की, पहुंचै राल न कालकी।
करणीं जित कबीर-सुत, अदभुत कला कमाल की ॥१८३
श्रीनंद-कुवर सन नंददास, हित चित बांध्यौ भाइकैं ॥टे०
समैं समैं के सबद, कहे रस ग्रंथ वनाये।
उक्ति चोज प्रसताव, भजन हरि गांन रिझाये।
महिमांसर परजंत, रांमपुर नग्र बिराजे।
संत चरन रज इष्ट, सुकल सरबोपरि राजे।
भ्राता राघो चंद्रहास है, सो सब गुण लाइकैं।
श्रीनंद-कुंवर सन नंददास, हित चित बांध्यौ भाइकैं ॥१८४
अति प्रतीति उर बचन की, गुर गदित सिष सति मांनियो ॥
सीष पाइकैं चल्यौ, कहूं कारिज कैं तांई।
मेरे मन की बात, कहूगो सीघ्र आंई।
रांमसरनि भये स्वांमि, दगध करनै लै जांहीं।
मनि गुर-गिर बिसवास, फेरि लोये अस तल मांहीं।
बिभू बरसहि यह कही हरि-जन गुर इक जांनियो।
अति प्रतीति उर बचन की, गुर गदित सिष सति मांनियौ ॥१८५

टीका

इंदव छंद है गुर भक्तस नूंन गिनैं जन, पूजि मनैं गुर क्यूं समझावै।
कै न करै परि नांहि कहै निति, रांमति चालत बेगि बुलावै।
छूटि गयौ तन बारन देतन, ल्यावत फेरिस बात जनावै।
भाव लखै सति यौं जिय बोलत, सेव करो जन वर्ष दिखावै ॥२०३

---

१ छलि।

मूल

छपै

बीठलदास हरि भक्ति करि, जुगल पांनि मोदक चढ़े ॥टे०
सदा प्रेम परा रहत, संत रज सीस चढ़ाई।
तरकि तज्यौ संसार, येक हरि भक्ति दिढ़ाई।
संप्रदाइ सिंध[1] जादि पत, दीपक ज्यौं मांनौं।
जन परषत सतकार, करै रैदासी जांनौं।
लोक उभै हरि गुर दये, सबद साखि निसि दिन रढ़े।
बीठलदास प्रभु भजन करि, जुगल पांनि मोदक चढ़े ॥१८६

परसोतम गुर की कृपा, जगंनाथ जग जस कर्‌यौ ॥टे०
प्रेम भक्ति कौ पुंज, सिंधु जा पधित संभारी।
श्रीरांमांनुज पन प्रीति, रीति उर अंतर-धारी।
संसकार सतकार, सनातन धरम सुहावै।
समद-मादि मुनि बृत्ति, बिसद हरि के जन भावै।
पारासुर कुलकौ थडर्यो, रांमदास घरि तन धर्‌यौ।
परसोतम गुर की कृपा, जगंनाथ जग जस कर्‌यौ ॥१८७

बालार भलप्पन उर भलौ, ग्रैसौ भक्त कल्यांन है ॥
लीलाचल पति भृति, चतुर हरि कौ चित चाह्यौ।
उतम भक्त पिछांनि, मांनि अपनौ निरबाह्यौ।
देह त्यागती बेरि, हेत सीता-बर कीन्हौं।
बांम जांम घर बिस, काढ़ि मन रांमहि दीन्हौं।
बिद्युत-प्रभा परकास सम, धर्‌यौ स्यांम-घन ध्यांन है।
बालार भलप्पन उर भलौ, ग्रैसौ भक्त कल्यांन है ॥१८८

ये भरथ-खंड मधि भूप, द्वै टीला लाहा भक्ति के ॥टे०
अंगज परमांनंद, परम भजनीक उजागर।
जोगीदास रु खेम, दिपत दसधा के आगर।
ध्यांनदास के सोज, गही गुर धरम की टेका।
हरीदास हरि भक्ति करी, अति मरम की येका।
जन राघो रटि रांमजी, काटे बंधन सक्ति के।
ये भरथ-खंड मधि भूप द्वै, टीला लाहा भक्ति के ॥१८९

---

१. सिंधु।

मनहर छंद

परस कूं पारस मिले हैं गुर पीपा आइ,
आपसौ कीयो बनाइ बारंबार कसिकैं।
खोयौ है कन्यां को कोढ़[1] धोवती दई बोट,
सकति की सेवा मेटी ताकै गृह बसिकैं।
खाती को खलास करि रीझे हैं परसपरि,
मांथैं हाथ धर्यौ स्वांमी हेत सेती हसिकैं।
राघो कहै प्रास[2] प्रसिधि भये तीनूं लोक,
संतन की सेवा कीन्ही पूठी हरि असिकैं ॥१९०

छपै

कूरम-कुलि दुती बलि बिक्रम यम, निबह्यौ पन पृथीराज कौ ॥
दया द्वारिकानाथ, करै तौ दरसन जाजे।
परे कुदरती चक्र, आइ आंबेर निवाजे।
घरि-घर नीबा ईस, आप राजा रति गांमी।
सुत उपजे षट[3] दोइ, भये नौ-खंड मधि नांमी।
हुवो हरिं भगतन कौ भगत, जन राघो बड़ कुल काज कौ।
कूरम-कुल दुती बलि बिक्रम यम, निबह्यौ पन पृथीराज कौ ॥१९१

टीका

इंदव छंद

संग चल्यौ गुर कै पृथिराजन, प्रीति घणी रनछोड़हि पांऊं।
बात सुनी स दिवांन गयो निसि, भक्ति हुई गुर संतन गांऊं।
लेहु बिचारि करौ तत्र भावस, संगि न लेवत बात दुरांऊं।
प्रात भये नृप आवत चाहत, आप कही रहिये सुख पांऊं ॥२०४
गोमति न्हाइर लेवत छापहि, देखत हौं रणछोड़ पुरी कौं।
तीनहु बात इहांहि लहौ[4] तुम, सोच करौ मति देखि हुरी कौं।
मांनि लई पहुचांवन जावत, आई घरां नृप जांनि खरी कौं।
दोइ गये दिन सौवत ही निसि, आइ कही उठि लेहु करी कौं ॥२०५
बोलि गुरू जिम आप कहै प्रभु, आइ गयो उठि सीस नवायौ।
गोमति मांहि सनांन करौ कहि, न्हाइ लयो सुनि आप न पायो।
छाप भई भुज संख चक्रादिक, ढील लगी त्रिय आइ चितायौ।
सेस रह्यौ जल सुद्ध करौ तन, रांम धरौ उर भूप सुनायौ ॥२०६

---

१ पक हेढ़। २. पारस, परस। ३. षट। ४. लहैं।

प्रात भयो सब लोग सुनी चलि, आवत देषन भीर भई है।
साध महंत भले पुनि आवत, छाप सरीरहि देखि लई है।
भेट धरै बहुमांन करै नृप, लाज मरै सुनि बात नई है।
देवल श्रीनरस्यंघ बनावत, होत खड़े जत साखि दई है ॥२०७
नैंन बिनां द्विज द्वार परचौ सिव, चाहत है द्रिग मास बदीते।
नाथ कहै यह फेर न होवत, जात नहीं मन मांहि प्रतीते।
ले पृथिराज अगोछ छुवावहु. आंनि कहीं दिज सौं भय भीते।
नौत्म लाइ दयौ तन कै छुय, आंखि खुली द्विज ह्वै चित चीते ॥२०८

मूल

छपै **आसकरन कै आस यहु, मन मै मोहनलाल हरि॥**
भींव पिता गुर कील्ह, भक्त भगवत सम देखै।
जो कछू घर मधि माल, जितौ साधन कै लेखै।
जज्ञ महोछव रास, दास हरिजी कें पूजे।
भरम करम कुल रीति, आंन धर्म छाड़े दूजे।
राघो रांम रच्यौ भलौ, कूरम-कुल पृथीराज घरि।
आसकरन कै आस यहु, मन मै मोहनलाल हरि॥१९२

टीका

इंदव कोट नरव्वर को बड़-भूपति, मोहनलालहि सेव करै हौ।
छंद मंदरि मैं रहि पैर सवा इक, चौकस जांन न पात नरै हौ।
कांम भयौ नृप बेगि बुलावत, लोग कहै नहि कांन धरै हौ।
फौज चढ़ी पतिस्या चलि आवत, जाइ कही तउ नांहि डरै हौ ॥२०९
फेरि पठावत रारि सुनावत, चित्त न आवत साहि गयो है।
चिंत भई प्रतिहार कही इक, आप पधारहु जात भयो है।
पूजन ह्वै परनांम करै नृप, ढील लगी पग खंग दयो है।
ऐड़ि बढ़ी मुखिसी न कढ़ी निति, नेम सध्यौ तब द्वार लयो है ॥२१०
नांखि दई चिग देखत पीछहि, साहि सलांम करी बहु रीझे।
साच सनेह लख्यौ फिर बूझत, भाव कह्यौ सुनिकैं नृप भीजे।
भक्त तज्यौ तन भूप भयौ दुख, आप सुनी प्रभु भोग न कीजे।
सेव करै द्विज गांव दये तिन, लाड़ करौ उसके प्रभु धीजे ॥२११

मूल

छपै संतन कौ सरबस दीयो, जन राघो हरि की प्रीति कौं ॥
कुर सारत करतार सूं, भक्ति जिहाज के खेवा।
रांम कांम सरखरू, पोता पृथीराज के येवा।
भगवांनदास भगवंत भज्यौ, करि भक्ति अनूपं।
छाप छहूं दरसन बिषै, भयो बैरागी रूपं।
काछ बाच निकलंक है, महा-निपुन धर्म-नीति कौं।
संतन कौं सर्बस दीयो, जन राघो हरि की प्रीति कौं ॥१६३

इंदव छंद भजनीक भलौ सत सूर सदा, हरदास की तेग महा अति सारी।
भोग की भावनां नारि कै ऊपनी, बालक ऐक ह्वै तौ भलौ भारी।
जेहरि लै जल कै मिसि नीसरी, बांधि कै पाव कूवा मैं उसारी।
राघो कहै बढी मांनि महंत की, चित्र के दीप ज्यौं सो जिहि टारी ॥१६४
मालि करी बनमालि की बंदगी, भक्ति की वाड़ी निपा गयो नापो।
ध्यांन को धोरो कियो उर अंतर, पांणी पताल सूं काढ्यौ अमापो।
यौं निज नीर परेरचौ निरंजन, रांम रट्यौ रसना निहपायो।
राघो रसाल बिसाल बयारौ लै, यौं हरि कौं मिल्यौ मेटिकैं आपो ॥१६५
काच तणैं कुलि कंचन देखहु, कीर तैं हीर भयौ कलि कालू।
ऊसर सूसर भूमि ह्वै ज्यूं, उपजै अन-ईष अनंत उन्हालू।
गोधूम ज्यूं सुद्धक अंग कीयो गुर, दूरि करे कुल-क्रम के सालू।
राघो कहै गुण गोबिंद के पढ़, तैं कहु जीभ लगी नहीं तालू ॥१६६

इति श्री रांमानुज संप्रदा

अथ विष्णु स्वांमि संप्रदा लिखतं

छपै छंद क्यूं करि बरनौं आदि घर, खबर न येकौ अंक की ॥
विष्णु स्वांमि स्यंभू मतौं, मनौं बच क्रम करि धारचौ।
भाव भगति भगवंत भज, जसैं जग मधि बिसतारचौ।
पैड़ी[1] बंध प्रवाह घणो, घट सौं घट सीझै।
खुली मुकति[2] की पौरि, जास गुर गोबिंद रीझै।

१. पड़ी। २. मुकति।

रघबार वान पहूंचिही, किती अकलि मुझि रंक की।
क्यूं करि बरनौं आदि घर, खबरि न येकौ अंक की ॥१६७

ग्यांनदेव गंभीर चित, बिष्णु-स्वांमि की संप्रदा ॥
नांमदेव नव-खंड, नांव नौबति बजाई।
हरदासहु जैं देव, भक्ति की रीति बढाई।
तिलोचन करि प्रीति, आप केसौ बसि कीन्हौं।
मिश्र नरांइनदास, छाप लाहौरी चीन्हौं।
याही मैं बलभ भये, हिरदै मैं भगवत सदा।
ग्यांनदेव गंभीर चित, विष्णु-स्वांमि की संप्रदा ॥१६८

टीका

इंदव छंद
ग्यांनहि देव सु संकर पद्धिति, चित गंभीर हु बात सुनीजे।
त्याग पिता घर धारि सन्यासहि, भूठ कही पृय नांहि न लीजे।
आत तिया सुनि पाछहि दौरत, लाप रहै मुख आगर कीजे।
ल्यात भई घरि जाति रिसावत, पांति निवारत कोऊ न छीजे ॥२१२
तीन हुये सुत दीरघ ग्यांनहि, देव भजैं हरि प्रीति लगाई।
कोऊ पढ़ावत नांहि सु बेदन, बिप्र करे इकठे किम भाई।
ब्राह्मन कौं अधिकार कहे श्रुति, भैंसन कौं पढ़ तेहु सुनायी।
भक्तिहि सक्ति निहारी सबै द्विज, पाव लये अरु देत बड़ाई ॥२१३

नांमदेवजी कौ मूल

छपै
नांमदेव बचन प्रभु सति करे, ज्यूं नरस्यंघ प्रहलाद के ॥१९०
प्रतिमां कर पै पाइ, बछ अरु गऊ जिवाई।
महल पातिस्या जरे, सेज जलपैं मंगवाई।
देवल फेरयौ द्वार, सभा के सबही झुकवे।
अतुल रह्यौ रंकार, बरिब बहु बहुके बुगचे।
राघो छांनि छई इसी, पार नहीं अहलाद के।
नांमदेव बचन प्रभु सति करे, ज्यूं नरहरि प्रहलाद के ॥१९९

इंदव छंद
ऐसौ नर नांमदेव नांम कौ पुंज, सदा रसनां रुचि रांमजी गायौ।
ऐसौ सुनी भयौ दीन दुनी बिचि, प्रीति प्रचै प्रतिमां पैं पिवायौ।

पैज रही पतिस्याह द्रबार मैं, गाइ जिवाइ कैं बच्छ मिलायौ।
राघो कहै परचौ परचे पर, देहुरौ फेरि दुनी दिखरायौ ॥२००
नांमदेव नांम नृदोष रटै रुचि, पाप भजैं कुचि देह तैं दूरी।
उर थैं अपराध उठाइ धरे दस, रांम भये बस पात ज्यूं पूरी।
जाप जपै निह[1] पाप नृम्मल, भीर परै गहि साच सबूरी।
राघो कहै जल मैं थल मैं, स चराचर मैं हरि देखै हजूरी ॥२०१

टीका

बांमसदेव भगत्त बड़ो हरि, तास सुता पति-हींन भई है।
संबत बारह मांहि भई तब, ताताहि ठाकुर सेव दई है।
तोर मनोरथ सिद्धि करै प्रभु, प्रीति लगाइ रहो तम ईहै।
सेव करी अति बेगि भये खुसि, भोग चहै अपनाई लई है ॥२१४
म्यौ गरभादिक बात करै सव, साखत लौगन कैं चित भाई।
कांनि परी यह बांमसु देवहि, ठीक करी हरि की किरपाई।
बाल भयो तब नामस देवहि, राइ हुतौ सब देत बधाई।
होत बड़ो हरि सौं हित लागत, रीति जगत्तहु नांहि सुहाई ॥२१५
खेलत है निति पूजन ज्यूं करि, घंट बजाइर भोग लगावै।
ध्यांन धरै परनाम करै जब, संझ परै तब सैंन करावै।
नांम कहै निति बांमहि देवस, पूजन देहु भलैं मन भावै।
गांवहि जावत आत दिनां त्रिय, दूध पिवाइन पीय सुहावै ॥२१६
ह्वै बिरियां कब आवत है दिन, बारहिबार कहै नहि आई।
बार हुई तब दूध चढ़ावत, सेर उभै अवटात कडाई।
प्रीति लगी अवसेर घणी उर, कंठ घुटै द्रिग नीर बहाई।
ढील लगी बहु मात खिजै अब, बेर करै जिन लै करि जाई ॥२१७
ले तबला हरि पासि चल्यौ मधि, दूध निवात सुगंध मिलाई।
है चित चाव डरै अगि ता करि, दास करै मम है सुखदाई।
मंद हसै अतिकांत लसै उर, भाव बसै सिसु बुद्धि लगाई।
पावन[2] मैं मन आड़ करै जन, देखि परचौ कहि पीहरि राई ॥२१८

---

१. तिह। २. पांवन।

बीति गये दिन दोइ न पीवत, सोइ रह्यौ निसि नींद न आवै।
प्रात भयौ अवटाइ लयौ फिरि, जा अरप्यौ अब पी मम भावै।
जोड़ि कहौं कर जो नहि पीवत, खंजर खाइ मरौं गरि लावै।
हाथ गह्यौं लखि पीवत हौं सब, पीवत देखि सु आप खुसावै॥२१९
आइर पूछत बालक सुं हित, दूधहि बात कहौ कहि नांनां।
औलु करी तव दोइ दिनां नहि, पीवत खंजर लै गर-ठांनां।
पीत भयो तब खोसि लयो कछू, होत खुसी सुनि साखि भरांना।
जाइ धरयौ पय पीवत नांहि न, लेत छुरी जब पीवत मांनां॥२२०
भूप तुरक्क कहै बसि साहिब, द्यौ अजमत्तिक मोहि मिलावौ।
ह्वै अजमत्ति भरैं दिन क्यौं हम, साधन कौं रिझवैं उर भावौ।
वा परभाव बुलाइ यहां लग, गाइ जिवाइ घरां तुम जावौ।
रांमहि ध्याइर गाइ जिवावत, देखि परचौ पग गांव रखावौ[1]॥२२१
नांम करौ हम हूं सुख पावत, चाहि नहीं किम सेज दई है।
सोस धरी जब लोग दये करि, नांहि करी जल मांहि बई है।
आइ कही पतिस्याह बुलावत, आवत मांगि करात नई है।
काढ़ि दिखावत उतम उतम, लेहु पिछांनि सु आंखि भई है॥२२२
पाइ परचौ फिरि राख हरी पहि, नांम कहै मति संत दुखावै।
मांनि लई फिरि नांहि बुलावत, गावत रांमहि देव लजावै।
बाहरि भींर निहारि उपांनत, बांधि लई कटि जा पद गावै।
देखि लई किनि चोट दई उन, देत धका चित मैं नहि आवै॥२२३
ऊठि गये पिछ-वार लयो पद, झांझ बजावत रांम रिझावै।
चोट दिवावत मोहि सुहावत, ठौरहु भावत नित्ति रहावै।
आप सुनी हरि है करुनांमय, देवल होइ दयाल फिरावै।
मंदिर मांहि हुते सु जिते नर, आब गई जन पाइ परावै॥२२४
लाइ लगी घर मांहि जरचौ सब, जो अवसेष रह्यौ वह नाख्यौ।
नाम कहै यहु ल्यौ सगरौ तव, आप हसे हरि मो लखि राख्यौ।
है तुमरौ घर आंनक हाजर, छांन छवाय खुसी प्रभु भाख्यौ।
पूछत हैं नर छाइ दई किन, देहु छवाई स देवन दाख्यौ॥२२५

---

१. रषायौ।

दे तन प्रांन धनादिक पावत, आंनहु बात न चाहत भाई।
साह तुला तुलि बांटत है धन, लै स[1] गये सब नांम न जाई।
लेन खिनावत फेरि दये जुग, तीसर कै चलि साथि भनाई।
लीजिये हाथि कछू हमरौ भल, चाहि नहीं द्विज देहु लुटाई॥२२६
साह करै हठ ले तुलसी-दल, रांमहि नांम लिख्यौ अध दीजे।
हासि करौ मति ल्यौ हमरी गति, तोलि बरोबरि तौ किम लीजे।
कांटहि मेल्हि चढावत कंचन, होइ बरोबरि नांहिस खीजे।
बौत चढै इक ताक धरचौ धन, जातिहु पांतिहु कौं न नईजे॥२२७
चिंत भई सबही नर नागर, नाम कंहै इक और करीजे।
तीरथ न्हांन व्रतादिक दांन, किया सब आंन सु मांहि धरीजे।
हारि रहे सु पला नहि ऊठत, साह कहै इतनूं इ लईजे।
लेरि करै किम नांहि भयो सम, नांम यहै अधिकार सुनीजे॥२२८
रूप धरचौ हरि ब्राह्मन कौ, अति-दूबल सो पर्चो व्रत देखै।
ग्यारस कै दिन जाचत अंनहि, आज न द्यौं परभाति बसेखै।
वाद करै दहु सोर भयौ बहु, नांम बचन्न कहेस अलेखै।
अस्त भयो दिन प्रांन तजे द्विज, नाम-प्रभाव स ग्यारिस पेखै॥२२९
लाकड़ ल्याइ चिताहि बनावत, गोद लयो द्विज साथि जरौंगो।
रांम हसे तव पारिष लेत सु, छोड़ि करै मति नांहि करौंगो।
भक्तन प्यास लगी जल ल्यावत, भूत बध्यौ अति मैं न डरौंगो।
लै पद गावत झींझ बजावत, रूप करचौ हरि यौंहीं तिरौंगौ॥२३०
जात चले मग खंभ खरौ इक, पूछत मारग बोलत नांहीं।
गात भये पद ताल बजावत, काढ़ि हरी कर बोलि बतांहीं।
संकट बैल जुप्यौ स गयौ मरि, रोइक नांमक पाइ परांहीं।
लै कर झींझ बजावत गावत, बैल उठ्यौ जुपि कैं घरि जांहीं॥२३१

जैदेवजी को बरनन—मूल

छपै **यम जैदेव सम कलि मैं न कबि, दुज-कुल-दिनकर औतरचौ॥**
श्रवन गीत गोबिंद, अष्ट-पद दई[2] असतोतर।
हरि अक्षर दीये बनाइ, आइ प्रगटेस प्रांणवर।

१. लैंसु। २. ई।

तांन ताल तुक छंद, राग छतीस गाई धुर।
अवर बिबिधि रागणी, तीन ग्रांमहु सपत सुर।
जन राघो लगि त्रियलोक महि, गिरा ज्ञांन पूरण भरचौ।
यम जैदेव सम कलि मैं न कबि, द्विजकुल दिनकर अवतरचौ ॥२०२

इंदव छंद
ये जैदेव से कलि मैं भगता कविता, कबि कीरति ब्रह्मी[1] के अंसी।
छाप परी द्विज के कुल की निज, तासूं कहावत जैदेव बंसी।
अष्टपदी असतूती सतोत्र, गाये पढ़े हरि हेत हुलंसी।
राघो कहै मृत सौं पदमावति, फेरि सजीव करी हरि हंसी ॥२०३

[टीका]

इंदव छंद
किंदुबिलै सु भये जयदेव, धरचौ सिणगार मुक्ता बिन मांहीं।
नौतम रूंख रहै दिन हीं दिन, है गुदरीस कमंडल आंहीं।
बिप्र-सुता जगनाथ चढांवन, जात भयो जयदेव बतांहीं।
जात जहां कविराज बिराजत, लेहु सुता यह बिप्र कहांहीं ॥२३२
देखि बिचार जहां अधिकार, बिभौ बिसतार तहां इह दीजै।
श्रीजगनाथ कि आइस राखहु, टारहु नांहि न दूषन भीजै।
ठाकुर कै तिय लाख फबै हमकौं, नहि सोहत येकहि खीजै।
जाहु वहां फिरि बात कहौ तुम, नांव तिया वह रूंख न धीजै ॥२३३
बिप्र कहै अब बैठि रहौ इत, आइस मेट सकौं नहि वाई।
ऊठि चल्यौ समझाइ रहे जन, सोच परचौ समझौ मन भाई।
बालहि कौं द्विज बात कहै कछु, तूहु बिचारि कहूं उठि जाई।
हाथहि जोरि कहै अलि जोर न, यौ तन तौ तजि हौ मनि आई ॥२३४
होत भई तिय जोर करचौ हरि, छांनिहि बांधिर छाइ करांवैं।
छाइ भई तब पूजन राखत, नौतम उत्तम ग्रंथ बनावैं।
गीत-गुबिंद उदित्त भयो सिर, मंडन मांन प्रसंग सुनांवैं।
ऐह पदा मुख तैं निसरचौ अति, सोच परचौ हरि आइ लिखावैं ॥२३५
पंडित भूप पुरी पुरसोतम, गीत-गुबिंद वही सु बनायो।
बिप्र सभा करि वाहि दिखावत, च्यारि दिसा पठवो सु सुनायो।
ब्राह्मन देखि हसे लखि नौतम, उतर देत न चित्त भ्रमायो।
दोउ धरी जगनांथहि पांइन, नांखि नई वह कंठि लगायो ॥२३६

---
१. ब्रह्म।

भूप उदास भयो अति सोचित, जात भयो सर बूड़ि मरौंगो।
मो अपमांन कर्‌यौ सुधर्‌यौ वह, बात छिपै कत नांहि टरौंगो।
आप कहै हरि बूड़ि मरै मति, ग्रंथन और सु ताप हरौंगो।
द्वादस सर्ग्ग सलोकहि द्वादस, मांहि धरां विख्यात करौंगो ॥२३७
बैंगन कै बन-मालिन गावत, पंचम सर्ग कथा बनमाली।
लार फिरै जगनांथ झगो तन, घूंमत लागत प्रेम सु झाली।
दौर फटें लखि बूझत है नृप, सेवक देखि बजावत तालो।
श्री जगनाथ कहै सर्ग पंचम, चालि गयो बन गावत आली ॥२३८
भूप कहाइ दयो सगरे यह, गीत-गुविंद भली धर गावो।
बांचत गावत है मधुरै सुर, आइ सुनैं हरि है बहु चावो।
येक मुगल्ल सुनी यह ठांनत, वाज चढ्यौ पढ़ि है प्रभु भावो।
गीत-गुबींद हि गावत है सुर, स्यांम धर्‌यौ पद आप सुहावो ॥२३९
काबि कथा बरनीस सुनी जिम, और सुनौं अधिकाइ महा है।
म्हौर कनै मग मांहि मिले ठग, जात कहां तुम जात जहां है।
जांनि गये पकराइ दई सब, चाहत लैं हम बात कहा है।
दुष्ट कहै चतुराइ करी इन, ग्रांमहि मैं पकराइ लहां है ॥२४०
मारि नखो इक यौं उठि बोलत, दूसर कै जिनि मारहु भाई।
लेहि पिछांनि कहूं त करैं किम, काटि करौ पग[1] झेरन खाई।
भूपति आइ गयो उन देखत, झेर उजासर मोद लखाई।
काढ़ि लये तब पूछत कारन, भक्त कहै हरि यौंह कराई ॥२४१
संत भले बड़ भाग मिले मम, सेव करौं निति यौं सुख लीजै।
लै सुखपाल बढ़ाइ चले पुर, भूप कहै कछु आइस कीजै।
संतन सेव करौ नित मेवन, आवत जो जन आदर दीजै।
स्वांग बनाइ र आवत वैठग, आप कहै बड़ भक्त लहीजै ॥२४२
भूप बुलाइ कहै तुम भागहि, आत वड़े जन सेव करीजै।
मंदरि मै पधराइ रिझावन, होत सुभोग डरै बप छीजै।
आइस मांगत है दिन ही दिन, आप कहै इनकौं द्रिब दीजै।
माल दयो बहु लार करे भृन, द्यो पहुचाय सु-बैंन भनीजै ॥२४३

---

१. फेर।

बूझत चाकर नांहि समा तव, काहु कि नांहि भई यम सेवा।
स्वांमिन के तुम हौ लगते कछु, साच कहैं हम जांनत भेवा।
चाकर थे इकठे नृप कें, बिगरी इन सूं हम मारन देवा।
जीवत राखहु[1] काटि करौ पगु, वा गुन कौं अबहू भरि लेवा ॥२४४

भूमि फटीस समाइ गये ठग, देखि भगे चलि स्वामिप आये।
बात सुनी तब कांपि उठ्यौ तन, हाथ र पाव मले निकसाये।
होइ अचंभ कहे नृप पैं भृत्य, स्वांमिन पासि गयौ सुख पाये।
सीस धरचौ पग बूझत आंनि र, बात कहौ सत मो मन भाये ॥२४५

टेक गही नृप सत्य कही जन, जांनि अमोलिक धारि लई है।
औगुन कौं गुन मांनत जो जन, सो सबही विधि जीति भई है।
संत सुभाव तजैं न सहै दुख, छाड़त नींच न नीच मई है।
नांव लख्यौ जयदेव किंदूबल, नाथ रहो इत भक्त छई है ॥२४६

जा करि ल्यात भयौ पदमावति, स्वांमि मिलावत आवत रांनीं।
भ्रात मुवो तिय होत सती किन, अंग कटे इक डांकि परांनीं।
भूप तिया अचरिज्ज करै यह, नांहि करै फिरि वा समझांनीं।
या परकार कि प्रीति न मांनत, देह तजै पति प्रांन तजांनी ॥२४७

आप इसी इक भूपति सूं कहि, स्वांमि छिपावहु प्रीतिहि देखौं।
नींच बिचारत अंतर पारत, मांनि तिया हठ यौं अबरेखौं।
स्वांमि मिले हरि आइ कही इक, सोच करे सति मैं नहि लेखों।
कं पदमावति क्यूं तुम रोवत, वैं सुख सूं अपनैं मन पेखौं ॥२४८

बात बनी न तिया सरमावत, बीति गये दिन फेरि करी है।
जांनि गई पदमावति पारिष, लेत कही सुनिकैं-ज मरी है।
स्वेत हुवो मुख भूपति देखत, आगि जरौं अर यह पकरी है।
ठीक भई तब स्वांमि पधारत, देखि मुई कहि इच्छ हरी है ॥२४९

भूप कहै जरिहौं अनि बातन, ज्ञांन सबै मम छार मिलायो।
स्वांमि कहै बहु मांनत नांहि न, अष्ट-पदी सुर देव पुज्यायो।
भूप बहौ[2] सरमावत चावत, घात करौं कछु भाव न आयो।
आप करचौ सनमांन पधारत, किंदुबिलै परचा हु सुनायौ ॥२५०

---

१. राखत। २. छहौं।

गंग अठारह कोस सथांनत, न्हांवन जात सदा मन भाई।
प्रौढ़ भये तउ नेम न छाड़त, पेस लख्यौ निसि आबत लाई।
खेद करौ मति मांनत नांहि न, आइ रहौं इतकैं सलखाई।
अंबुज फूलत मोहि निहारिहु, भांति भई वह जांनि सु आई ॥२५१

तिलोचनजी को मूल

इंदव छंद **संत इसो[1] सद-रूप ह्वै साहिब, आय तिलोचन सूं गुदराई।**
मैं हू अनाथ रहूं बृति काहूं कै, जो कोइ प्रीति निबाहै रे भाई।
दास तिलोचन लै ग्रह आये हैं, रांमकी पैं तब रोटी कराई।
राघो कहै जन के हित को अन, सुद्ध मैं रामोटी सोलक पाई ॥२०४

टीका

नांम तिलोचन दोइ ससी रवि, नाम बखांन करयौ जग मांहीं।
नांम कथा बर पीछ कही हम, दूसर की सुनियौ चित लांहीं।
बंस महाजन कै प्रगटे जन, पूजत है तिय गोढ़िक[2] न रहांहीं।
चाकर नांहि न संत लखै मन, सेव करै उर मैं हरखांहीं ॥२५२
रूप धरयौ भृति कौ हरि आपन, जीरन कंबल टूटी पन्हैया।
बाहरि आय र बूझत है जन, मात पिता नहि गांव जन्नैया।
तात न मात न भ्रात न गाव न, चाकर रौं-ज सुभाव मिल्लैया।
बात अमिल्ल सुनाइ कहौ सब, खांउ घणौं अन नारि रसैया ॥२५३
च्यारि बरन्नहु रैसि सबै कर, लार न चाहत एक कराऊं।
संतन सेवत बीति गये तन, नौतम नांहि न बरष बताऊं।
नांम हमार सु अंतरजांमे हि, दास तुम्हार-स तोहि धपाऊं।
पांहनि कंबलि नौतम देवत, आप नुहावत मैल छुटाऊं ॥२५४
दास कहै तिय दासि रहौ इन, ह्वै न उदास-स पासि रहांवै।
जीम सु याहि जिमांइ निसंकहि, जीवत है स मिले हरि गावै।
संतहि आवत त्यांह रिझावत, दावत पावस वाहि लड़ावै।
मास बदीत भये सुं तियोदस, ऊठ गये कछु बात कहावै ॥२५५
जात भईस परोसनि कैं तिय, बूझत गात मलीनस क्यूं है।
हंसि कहै इक चाकर राखत, धापत नांहि डरूं सुनि यौं है।

१. असौ। २. गोटि।

नांहि कहौ किनि राखि मनो-मन, कांन परे उठि जावत त्यूं है।
जांनि गये रमि जात भये दुख, पात नये बिन पेसि-सु ज्यूं है ॥२५६
नीर अनादिक त्याग दये दिन, तीन भये फिरि पाइ न बैसौ।
भाग बिनां तिय क्यूं र कही बिय, संतन सेव न हौ भृत्य कैसौ।
अंबर बोलि कहै हरि मैं हुत, भूख मरौ मत मांनि अदैसौ।
प्रेम तुम्हार कर्‌यौ बसि है मम, सेव करूं फिरि मैं घरि बैसौ ॥२५७
चौंक पर्‌यौ सुनि भक्ति करी किम, आप हरी पहि सेव कराई।
भक्त कहै मम संत बड़े बड़, भक्ति करी नहि लोक दिखाई।
आप दयाल निहाल करै जन, रंच करै तिन भौत मनाई।
धांम बिराजत मैं नहि जांनत, आइ मिलै अब पाइ पराई ॥२५८

मूल

छपै भाव सहित भागवत कौं, निरांनदास नीकैं कह्यौ ॥
नवल्या-कुल परसिधि, मिश्र संज्ञा सत्य पाई।
सुति सुमृति अतिहास, ग्रंथ आगम बिधि गाई।
बक्ता नारद ब्यास, बृहसपति सुक सनकादिक।
इन सम है सरबज्ञ, सोत ज्यूं चलै गंगादिक।
संत समागम होत निति, प्रेम-पुंज राघो लह्यौ।
भाव सहित भागवत कौं, निरांनदास नींकैं कह्यौ ॥२०५
बिष्णु-स्वांमि पुर सारि मधि, लाहौरी लाहौ लीयौ ॥
नांम निरायनदास, मिश्र मिश्रत भ्रम भाख्यौ।
भक्ति भेद भागवत, सार सुख मुनि ज्यौं चाख्यौ।
ब्यास-बचन बिसतार, कही गद-गद ह्वै बांणीं।
साध संगति गुर-धर्म, अनंत प्रमोधे प्रांणीं।
जन राघो नाथ कृपा भई, खीर-नीर निरनैं कीयौ।
बिष्णु-स्वांमि पुर सार मधि, लाहौरी लाहौ लीयौ ॥२०६
पण परतंग्या कौं भले, जन राघो पुरवै रांम रिधि ॥
बलभ गुसांई हरिबल्लभ, ताहि हरि गोकल आप्यो।
सदा नाथ रछपाल, आप अपणौ करि थाप्यौ।
ता सुत बिठलेसुर भली, बिधि भक्ति जु साही।
अपणौ मत मजबूत, थप्यौ हरि पैज निबाही।

तास पछौपै सुत सरस, गिरधर गोकलनाथ निधि।
पण प्रांतज्ञा कौं भले, जन राघो पुरवै रांम रिधि ॥२०७

बल्लभाचारय को बरनन : टीका

इंदव छंद
मूरति-पूजन भाव घनूं उर, यौं मन मैं सब ही जन दीजे।
वैहि करी हरि धांमन धांमन, सेवत है सुख आंखिन लीजे।
है सुघुराइ अवद्धि महा निति, राग रु भोग बहौ बिधि कीजे।
नांव सुबल्लभ रीति सबै प्रभु, गोकल गांव-स देख तरीजे ।।२५९
देखन गोकल संतहि आवत, होत मुदित्त-स रीति हि न्यारी।
रूंख सु खेजर रूप भुलावत, देखि दरस्स भयो सुख भारी।
आइ निहारत पूजन नांहि न, फेरि गयो कहि जाहु तयारी।
देखि घणे वत भूलत ठाकर, जाइ कही तव लेहु सभारी ।।२६०
आंखि हुई फिरि तौ नहि भूलत, देहु दिखाई अबै मम रूपं।
आप कहै अबकै फिरि देखहु, हेत लगाइ सुजांनि अनूपं।
जातहि पावत कंठ लगावत, नैंन भरावत पाइ सरूपं।
राति रह्यौ स भजै र ज-जै हरि, होत प्रकास दया अनुरूपं ।।२६१

मूल

छपै
श्रीबल्लभ सुत बिठलेस नैं, लाल लड़ाये नंद ज्यूं॥
परचर्ज्या मैं निपुन, राग अर भोग बिबिध कर।
गहणां बसतर सेज, रचत रचनां रचसुंदर।
बृजपति उहै गोकलज, धांम सोहै दीछत को।
घोष चंद तहां बिदत, भिभौ वासव ईछत को।
राघो भक्ति परताप तैं, दीपत राका चंद ज्यूं।
श्रीबल्लभ-सुत बिठलेस नैं, लाल लडाये नंद ज्यूं ॥२०८

टीका

इंदव छंद
कायथ हौ तिपुरा हरि भक्त सु, सीत समैं दगली पहुंचावै।
मोल घणौं पट लेवत हौं अट, नांथ चढ़ावत यौं मन भावै।
आइ गयो सम यौ नृप लूटत, खांवन धांम सु अंन न पावै।
सीतहु आवत दैन उभावत, द्वाति हुती इक बेचन जावै ।।२६२
एक रुपैया मिल्यौ पट ल्यावत, रंग सुरंग धरयौ घर मांहीं।
हेत घणौं द्रिग धार बहै जल, देहि घणौं प्रभु और मंगाहीं।

आइ मिल्यौ हरिदास सुभावहि, देत भयौ मन मैं सरमांहीं।
दासन कै यह काज न आबत, मोर गुसांई क्रिनैं करवांहीं ॥२६३
जाइ दयो धरि राखत है पट, नाथ सनेह सबेगि बुलाये।
सीत लगै हम बेग निवारहु, भौत उढ़ावत कंप उठाये।
फेरि कही तब आगिहु बारत, जात नहीं सुनिकै सरमाये।
दास बुलाइ जड़ावलि पूछत, देत बताइ सबै न बताये ॥२६४
नांहि सुनी तिपुरा कहि दारिद[1], मोटहु थांन बिछाइ सु राख्यौ।
बेग मंगावत ब्यौंत सिवावत, ठंढि नसावत बीठल भाख्यौ।
धारि लयो तन सुक्ख भयो मन, ठंढि गई प्रभु आप न दाख्यौ।
हेत दिखावत भक्त हु भावत, प्रेम-रसाइन को रस चाख्यौ ॥२६५

मूल

छपै श्रीवल्लभ-सुत बिठलेस कै, सपत-पुत्र हरि भक्ति पर।
गिरधर, गोकलनाथ, प्रेमसर सूभर भरिया।
गोबिंद पुनि जसबीर, पीब गोवरधन धरिया।
बालकृष्ण, रुघनाथ, नाथ श्रीनाथ उपासी।
श्री कृष्ण पगे घनस्यांम, रैनि-दिन करत खवासी।
ये गादीपति राघो कहै, जग मैं मांनैं नारि-नर।
श्रीबल्लभ-सुत बिठलेस कै, सपत-पुत्र हरि-भक्ति-पर ॥२०९
सोभित बल्लभ-बंस मैं, गिरधर श्री बिठलेस-सुव ॥टे०
च्यारि पदारथ भक्ति, देत उत्तम अनपाइन।
सास्त्र बेद पुरांन, ग्यांन सब ग्रंथ परांइन।
सेवा पूजा निपुन, नंद-नंदन मन मोहै।
नृषत परम पबित्त, अमी बरषत संग सोहै।
राघव सरल सुभाव अति, दूजो कोई नांहि भुव।
सोभित बल्लभ बंस मैं, गिरधर श्री बिठलेस-सुव ॥२१०
श्री गोकलनाथ अनाथ पै, दया करत अति गुन गंभीर॥
क्रौध रहत मति धीर, मनौं रतनांकर नांई।
सुजस सकल संसार, प्रबत-पति सम गरवाई।

---

१. वारिद।

भजन प्रबल जल बिठल[1]-नाथ को जाकी बेला।
प्रभु प्रसाद तन तेज, चरन चरचित नृप चेला[2]।
श्री बल्लभ-कुल मैं प्रेम-पुंज, नृबिलीक ग्रैसो खंभीर।
श्रीगोकलनाथ ग्रनाथ पै, दया करत ग्रति गुन-गंभीर ॥२११

टीका

इंदव छंद
ग्रांनि कही इक मोहि करौ सिष, भेट चढावन लाख न ल्यायो।
ग्राप कह्यौ तब हेत इसौ कहु, जाहि विनां तन जाइ छुटायो।
बोलि कह्यौ मम नांहि कहूं हित, मैं न करैं सिष ग्रौर सुनायो।
प्रेम कथा इत ग्रौर न दूसर, बैंन ग्रचाइ सुन्यौ दुख पायो ।।२६२
भंगिह कांन्ह भजै भगवांन, नहीं उर ग्रांन-स लालहि भावै।
रैंनि सुपंनहि नाथ कही यह, भीति हुई मम नांहि सुहावै।
गोकल-नाथहि जाइ कहौ तुम्ह, बागन वोट ढवाइ नखावै।
प्रात भयो उरि सोच नयो किम, जाइ गयो सुनि मोहि मरावै ।।२६३
बीति गये दिन तीन कहै निति, मोर कहा बस जाइ कहैगो।
द्वारहि पालहि जाइ चितावत, रोस करचौ सुनि पास लहैगो।
जाइ कही किन वेग बुलावत, बात कहौ यह डौल ढहैगो।
कंठ लगावत जाति बहावत, येक कह्यौ हरि को सु रहैगो ।।२६४

मूल

छपै **कृष्णदास पैं करि कृपा, गिरधरन सीर दियो नांम मैं ।।**
श्री बल्लभ गुर पाइ, भयो हरि गुण कौ ग्रालै।
नौख चोज मधि काबि, नाथ सेवा निति पालै।
सेवत बांणीं सुजन, ज्ञांन गोपाल भाल भर।
सर्बस बृज मैं गनत, ग्रवर नांहीं जांनत बर।
प्रभुदास बरज नेरौ रहै, मन सो स्यामां स्यांम मैं।
यम कृष्णदास पै करि कृपा, गिरधरन सीर दियो नाम मैं ॥२१२

टीका

इंदव छंद
दास जु कृष्ण करचौ रसरास सु, प्रेम धरचौं उह नाथ बरचौ[3] है।
होत बजार जलेबि दिली, ग्ररपी प्रभु ग्रापहि भोज करचौ है।

---
१. बिललनाथ। २. लेला। ३. करचौ।

नांचनि को अति राग सुन्यौ यह, नाथ सुनै सुर चित्त धरयौ है।
रीझि गये उन पासि बुलावत, साथि चलावत लाज तरयौ है ।।२६५
मंजन अंजन कौं करवाइ, सुबास लगाइ र देवल ल्याये।
देखि हुई मत लेत भई गति, लाल कहै लखि मोहि सुहाये।
नाचत गावत भाव दिखावत, नाथ रिझावत नैन लगाये।
होत भई तदकार तज्यौ तन, आप मिलाइ लई सु रिझाये ।।२६६
सूरहु सागर आइ कहै पद, गाइ इसे सम[1] छाइ न आवै।
सातक आठक गाइ सुनावत, सूर हसे परभात बतावै।
चिंत भई हरि जांनि लई पद, बेस बनाइ र सेज रखावै।
फेरि सुनावत लै सुख पावत, पच्छि बतावत सो सब गावै ।।२६७
पाव चिग्यौ तब कूप परे तन, छूटि गयौ जब नौतम पायौ।
दास दुखी सुनि नाथ लखी मनि, आपटि ग्वाल सरूप दिखायौ।
जात भये गिर-गोवर पासिक, बल्लभ कौं परनांम कहायौ।
म्हौर बतावत खोदत पावत, संक नसावत यौं प्रभु पायौ ।।२६८

मूल

छप्पै **हरदास रसिक असो भयो, आस धीर कीयो उदित ।।**
कुंज-बिहारी भजत, नांम निश्चत पृय लागै।
निरखत रंग बिहार, बात सुख सौं अनुरागै।
गंध्रब ज्यूं करि गांन, जुगल सरदार रिझावै।
नैबेदन अरपाइ मोर मंछा कपि ज्यावै।
भूप खरे रहे बारनैं, करि दरसन होवै मुदित।
हरदास रसिक असौ भयो, आस धीर कीयो उदित ।।२१३

टीका

इंदव छंद
है हरदासहि छाप रसिक्क, सहौ रस ढेर[2] हरी बुधि लाई।
अत्तर ल्याइ दयो कि निचौड़न, नांखि पुलांनि गयो उर आई।
देखि उदासहि लाल दिखावत, खोलि दये पट गंध लुभाई।
नीर न खावत पारस कौं, पथरा कहि कैं जब सिष्ष कराई ।।२६९

---

१. मम। २. टेर।

मीरां बाई का बरनन : [मूल]

छपै **लोक बेद कुल जगत सुख, मुचि मीरां श्री हरि भजे ॥**
गोपिन को सी प्रीति, रीति कलि-कालि दिखाई।
रसिकराइ जस गाइ, निडर रही संत समाई।
रांनैं रोस उपाइ, जहर कौ प्यालो दीन्हौं।
रोम खुस्यौ नहीं येक, मांनि चरनांमृत लीन्हौं।
नौबति भक्ति घुराई कैं, पति सो गिरधर ही सजे।
लोक बेद कुल जगत सुख, मुचि मीरां श्री हरि भजे ॥२१४

मनहर छंद **रांमजी की भक्ति न भावै काहू दुष्टन कौं,**
मीरां भई बैरनु जहैर दीन्हौं जांनि कैं।
रांनौं कहै मारै लाज, मारि डारौ याहि आज,
आप करै कीरतन संत बैठै आंनि कैं।
प्रेम मधि पीयो बिस पद गाये अह निस,
भै न व्याप्यौ नैंक हूं न लीन्हौं दुख मांनि कैं।
राघो कहै रांनौं मुखि बैरी अब राजलोक,
मीरां बाई मगन, भरोसे चक्रपांनि कैं ॥२१५

टीका

इंदव छंद मात पिता जनमीं पुर मेड़त, प्रीति लगी हरि पीहर मांही।
रांनहि जाइ सगाइ करावत, ब्याहन आवत भावत नांही।
फेर फिरावत वा न सुहावत, यौं मन मैं पति साथि न जांहीं।
देन लगे पित मात अभूषन, नैंन भरे जल, मोहि न चांहीं ॥२७०
द्यौ गिरधारिहि लाल निहारन, बेस अभूषन बेग उठावौ।
मात पिता-स सुता अति है प्रृय, रोय दये प्रभु लेहु लड़ावौ।
पाइ महासुख देखत है मुख, डोलहि मैं बयठाइ चलावौ।
धामहि पौंचत मात पुजावत, सास करावत गंठि-जुरावौ ॥२७१
मात पुजाइ लई सुत पैं पुनि, पूजि बहू अब सास कही है।
सीस नवै मम श्री गिरधारिहि, आंन न मांनत नाथ वही है।
होत सुहागणि याहिक पूजन, टेकत जौ सिर नाइ मही है।
येक नवै हरि और न नावत, मांनत क्यूं नहि बुद्धि बही है ॥२७२

होइ उदास भरै उर सास, गई पति पास बहु नहिं आछी।
मान तनैं अब फेरि गिनें कब, केति कहौ फिरि आत न पाछी।
रोस कर्‌यौ नृप ठौर जुदी दइ, रीझि लई वह नांच न काछी।
नृत्य करै उर लाल करै[1], सत-संग बरै सब है जन साछो ॥२७३

आइ नणंद कहै सुनि भाभिहि, साधन संग निवारि भजीजे।
लाजत है नृप तात बड़ौ कुल, लाजत द्वै पख बेगि तजीजे।
संत हमारहि जीवन प्रांन-स, तारन द्वै कुल सत्य मनीजे।
जाइ कही तब झैर पठावत, लै चरनांमृत पांन करीजे ॥२७४

सीस नवाइ र पीत भई बिष, संतन छोड़न है दुख भारी।
भूप कहै भृति चौकस राखहु, आइ कनै जन बोलत मारी।
स्यांमहि सौं बतलात सुनी तब, जाइ कही अब हैस तयारी।
सो सुनिकैं तरवारि लई कर, दौरि गयो पट खोलि निहारी ॥२७५

बोलत हौं स गयो कत मांनस, देहु लखाइ न मारत तोही।
येह खरे कछू नांहि डरे चित, लेत हरे किन बाहत मोही।
भूप लजाइ रह्यौ जड़ होर र, ऊठि गयो तजि कैं उर छोही।
देखि प्रताप न मानत आप, रहै उर ताप करै हरि वोही ॥२७६

संतन भेष कर्‌यौ बिषई नर, आइ कही मम संग करीजे।
लाल दई यह आइस जावहु, मांनि लई अब भोजन लीजे।
सेज बिछावत साध सभा विचि, टेरि लियौ तब कारिज कीजे।
देखित ही मुख सेत भयो पगि, जाइ न यौ अब सिष्ष मनीजे ॥२७७

भूप अकब्बर रूप सुन्यौ अति, तांनहि-सेन लिये चलि आयौ।
देखि कुस्याल भयो छबि लालहि, ऐक सबद्द बनाइ सुनायौ।
जा बृज जीउ मिली पनहौ तिय, देखत नैं मुख ताहि छुड़ायौ।
कुंजन कुंज निहारि बिहारिहि, आइ-स देस बनैं बन गायौ ॥२७८

भूपति बुद्धि असुद्ध लखी अति, द्वारवती बसि लाल लड़ाये।
पेठि जलंधर होत भयौ नृप, जांनि महादुख बिप्र खिनाये।
लै करि आबहु मोहि जिबाबहु, बेगि गये समचार सुनाये।
हो(त)न बिदा चलि ठाकुर पैं मुख, मांहि लई तुछ चीर रहाये ॥२७९

---

[1] धरै।

नरसीजी कौ बरनन : [मूल]

छपै **गुर्जर धर नरसी प्रगट, नागर-कुल पावन करचौ ॥**
सबै सुमारत मनिख, बिष्णु की भक्ति न मांनै ।
उर्धपुंडर गलि माल, देखि ता बहुत हसांनैं ।
आप भयो हरिभक्त, देस कौ दोष निवारचौ ।
तन मन धन करि प्रेम, भक्त भगवत पर वारचौ ।
हुंडी सकरी सांवरै, बेटी-कै माहिरो भरचौ ।
गुर्जर धर नरसी प्रगट, नागर-कुल पावन करचौ ॥२१६

मनहर छंद **मन बच क्रम करि नरसी सुव्रत हरि,**
मांहे पूजी प्राननाथ हरिजी नौं नांव रै ।
जन के बचन जगदीस बांचै बारंबार,
जात्रिन कौं दीन्हे दाम 'हूंडी' लैकें सांवरै ।
नृप नै कीयौ अठाव जन कै न आई बाव,
आप्यौ हरि हार ततकार बलि जांव रै ।
राघो कहै रांमजी दयाल नरसी सौं निति,
पूत्री नै माहिरै करतार बूठौ ठांव रै ॥२१७

टीका

इंदव छंद
मात पिता मरि जात जुनांगढ़, आप र भ्रात तियास रहे हैं ।
खेलत आइ कही जल पावहु, भाभि जरी कुट बैंन कहे हैं ।
ल्याइ कुमाइ कहावत है जल, पी भरिकैं स जबाब लहे हैं ।
ऊठि गये यह त्याग करौं तन, जाइ सिवालय चिन्ह गहे हैं ॥२८०
सात भये दिन जात न बाहर, द्वार गहै तुछ सो सुधि लेवै ।
भूख र प्यास तजी र भजे सिव, रूप धरचौ जन दर्सन देवै ।
भांगि कहै कछू मांगि न जांनत, जो तुम कौं पृय द्यौ मम तेवै ।
सोच परचौ यह आइ अरचौ तिय, कैत डरचौ निति मो हित सेवै ॥२८१
मैं-ज दयौ बिरकासुर कौं बर, होत भयौ डर या परवारे ।
पालक है जग बालक नैं यह, द्यौंस कहाइ न रांम पियारे ।
द्यौं र नहीं मम बैंन नसावत, आप बहू बपु नारि न धारे ।
आत भये बृज रास दिखावत, भौत तिया मधि कांन्ह निहारे ॥२८२

रास करै मनि हीर जरै नग, लाल धरै नृति गांन र तालं।
रूप प्रकास मयंक उजासज, जीव हुलास लई गति लालं।
कंठ ढरे अगुरी सु फुरै, मधुरे सु सुरे सुनिकैं रति पालं।
ढोल बजै मृदंग सजे, मुहचंग र जै दरियावजु हालं ॥२८३
हाथि चिराक दई गति देखत, कान्ह लई लखि येह नई है।
संकर-सैचरि जानत है हरि, मंद हसे द्रिग सैंन दई है।
टारन चाहत स्यौ नहि भावत, आइ कही ढ़िग मांनि लई है।
जाई भजौ घरि टेरत आवत, देस गये जन ध्यांनमई है ॥२८४
धांम जुदौ करि बिप्र-कन्यां बरि, दोइ सुता इक पुत्र भयौ है।
साध पधारत लै धन वारत, ये पन पारत स्यांम नयो है।
ब्राह्मन बंस भये सब कंसन, जांनत अंस सदोष लयो है।
ये हरि लीन रहै जल मीन, महा परिवीन न पार दयौ है ॥२८५
संत पधारत तीरथ या पुर, पूछत है स हुंडी लिखि देवै।
बिप्र कहै इक सा नरसी बड़, जाइ धरौ रुपया पग लेवै।
बारहि बार कहौ-र रहौ गिरि, आत पछैं उनकी यहे टेवै।
धांम बतावत ये चलि जावत, वेहि करी उठि अंक भरे वै ॥२८६
सात सतै रुपया गन देवत, लागत है पग बेगि लिखीजैं।
जांन लये बहकाइ दये इन, हूंडि लिखी यह सांवल दीजै।
जात भये जान द्वारवती फिरि, पूछत चौटन पा तन खीजै।
हेरत हारि रहे मरि भूखन, प्यास लगी जल बाहरि पीजै ॥२८७
सांवल साह बने हरि आवत, ल्यौ रुपया वह कागल ल्यावो।
हेरत हारत भूख मरे कहि, मैं सुनि दौरत लाज मरावो।
बास इकंत लखै हरि संत, लिखौं अब कागद द्यौ उन जावो।
है रुपया बहु फेरि लिखौ अहु, जाइ दयो उरका सिर नावो ॥२८८
ऊठि मिले इन सांवल देखत, वैहु छके सतसंग यसौ है।
वे रुपया सब साध खुवावत, कांम भये सिधि रांम वसौ है।
छूछक को समयो-स सुता घरि, सास दुखावत भाव नसौहैं।
बाप लिखावत मोहिं जरावत, द्यौ कछू आइ र तौहु र सौहै ॥२८९
भैल पुरातन आप पुरातन, बैल पुरातन जोइ र ल्याये।
भेटन कौ पुतरी हु गई सुनि, नाहि कछू ढ़िग क्यु तुम आये।

सोच करै मति सास कहै, यह कागद मैं लिखि दे मन भाये।
जाइ कही समझाइ रिसावत, स्वैपुर के सब लोग लिखाये ॥२६०
कागद ल्यावत फेर पठावत, चूकन नैं दुय पाथर[1] मांडे।
ठौर बतावत जाइ रहावत, छांनि छ ीँद र्है घर खांडे।
नीरहि न्हांन अठाइ खिनावत, मेह भयो ठिरिये जल भांडे।
साल सवारि करयौ परदा कर, झींझ[2] बजी बहु अंबर छांडे ॥२६१
दें पहरांवनि गांव समूहहि, कंचन रूपक पाथर आये।
येक रही उन भूलि लिखी नहि, भौत लिखै जित भूलहु जाये।
जाइ सुता बिनवै पित दें इन, देत उनें हरि पं मंगवाये।
मात नहीं तन मांहि सुता लखि, तातहि ख्याल सबे बिसराये ॥२६२
दोइ सुता इक धांम न ब्याहत, येक सुता तजि कै पति आई।
गांइन दोइ फिरै पुर गावत, पावत नांहि कछू दुख पाई।
कोइ बतावत आइ र गावत, आप कहावत रांम सहाई।
जो हरि चावहु बाल मुंडावहु, लाल लड़ावहु यौं मनि भाई ॥२६३
दोउ सुता मिलि गाइन हू जुग, नाचत है चहु भाव दिखावै।
मामहि सालग भूप दिवांनहि, बात निषिद्धहि आप लखावै।
पंडित दीरघ और जुरे सब, भांड करे इनको समझावै।
भूप बुलावत भृत्य पठावत, आइ कही दरबार बुलावै ॥२६४
जावत हैं नृप पासि रहो, चहु साथि चलें हम हू न डरें हैं।
लार भई गति लेत नई रस, भीजि गई वह नृत्य करै हैं।
वैसहि आवत पंच छिपावत, तौउ कहै तिय क्यू र धरें हैं।
भक्ति न जांनत वेद बखांनत, नारि कहो सुकदेव बरें हैं ॥२६५
येक कही द्विज भात भरयौ हद, ठांव दये अगनंत सुता कें।
भूप लगे पग भक्ति करो जगि, कुंजर लागत नांहि कुता कें।
और सुनौ इक ठाकुर देवल, गावत राग किदारउ ताकैं।
माल हुती हरि के गलि मैं उर, आइ गई नरसी महता कैं ॥२६६
ब्राह्मन जाइ सिलावत भूपहि, हार पुयौ कच तागस टूट्यौ।
मात कहै सुत कांन धरौ मति, राज स बांनि बुरी चलि छूट्यौ।

१. माथर। २. झींक।

देवल जाइ रु पाट मंगावत, बाटि गुह्यौ गलि नावत घूह्यौ।
गाइ दिखावहु ख्याल हमैं अब, गावत राग दुती नहि खूट्यौ ॥२९७
देखि खुसी खल देत उराहन, नौख नई हरि कौं बहु भाखैं।
आखिर[1] ग्वाल गही उरमाल, सुहावत लाल कहौ किन लाखैं।
रांम भले सु लख्यौ क्रम पावत, कौन मिटावत है अभिलाखैं।
जाइ कहा मम तोहि कहै धिक, जाहु यहै तन भक्ति न नांखैं ॥२९८
साह रहै जुग नारि बिवाहत, भक्त इकै हरदेव दिखावो।
आप कही सति जांनि गये प्रभु, ल्यौ रुपया वह राग दिवावो।
देखि निहाल भई प्रभु कों मुख, जाइ जगो रुपया गिनवावो।
दांम लिये र दयो वह कागद, भोजन देत भई प्रभु पावो ॥२९९
साहक राग धरचौ गहनै, नरसी करि रूप सजाइ छुड़ायौ।
गोदहि नांखि दयौ वह कागद, आइ हरी जन हार गहायौ।
सब्द हुवो जयकार सभा मधि, भूप परचौ पगि भाव सवायौ।
दुष्ट गये मुरझाइ नये नहि, रांम दया बिन पंथ न पायौ ॥३००
ब्राह्मन हेरत डोल भलौ बर, पायौ नहिं नरसीहु बतायौ।
बूझत आई सु पुत्र दिखावत, देत तिलक्कहि देखि लुभायौ।
नांहि बरोवरि हौ सब सौं बर, बेगि गयो द्विज नांव जनायौ।
सीस धुनै सुनि ता लकुटा भनि, बोरि सुता फिर जाहु कहायौ ॥३०१
ढारहु काटि अगूठहि कौं, जब जाइ कहूं कर कौं कमलायौ।
भाग सुता लखि बैठि रहे. कहि ब्याहन आवत दैं बहुरायौ।
देत लगंन सु ब्राह्मन भेजत, जाई दयौ कर लैर डरायौ।
ताल बजावत च्यारि रहे दिन, सोच नहीं मन सावल आयौ ॥३०२
ह्वै पकवांन बजैहु निसांन, सुनै नहि कांन-स उच्छव भारी।
मांडत है मुख कृष्ण वधू रुख, चौढ़ि तुरी निसि गात सु नारी।
ह्वै जिवनार अपार भये नर, मोट न बांधत बिप्र बिचारी।
हाथिन घोरन ऊंटन हूं रथ, वैस किसोर जनै तपधारी ॥३०३
कृष्ण कहै नरसी चलिये तुम, आवत हूं नभ मारग मांनौं।
आपहि जांनहु मैं उर आंनहु, ह्वै सुख फैंटहि ताल रखांनौं।

---

१. आंगिर।

लेइ उठाइस बोझ सबै, हरि जाइ रहे समधी पुर जांनौं।
भेजत है नर आइ र देखत, फौज किसी यम पूछि बखांनौं ॥३०४
येह जनैत मनौं नरसी जन-नैंन रसी नरसी इन ध्यावै।
आंनि कहु[1] यहु बुद्धि गई वह, साच कहैं हमहीं डहकावै।
ये तहि आत सगाइ करी द्विज, मात नहिं तनि बात सुनावै।
तो धन सौ इक फूस सरै नहि, देखहु ता लकुटा परभावै ॥३०५
देखन कौं चलि जात बरातहि, मांन मरचौ द्विज सूं कहि राखौ।
पाइ परै किरपा करि है जब, जाइ परे हम चूकहि नांखौ।
भक्ति[2] मिले उठि कृष्ण मिलावत, सौंपि सुता इन बीनति भाखौ।
भेजि दई लखमी उतहू हरि, आत भये परणाइ र पाखौ ॥३०६

इति श्री विष्णुस्वांमि संप्रदा

अथ माध्वाचारिज संप्रदा : [मूल]

छपै **रघवा प्रणवत रांमजी, मम दोषो नहीं दीयते ॥ट०**
आदि बृक्ष बिधि नमो, निगम नृमल रस छाते।
मध्वाचारय मधुर पीवत, अमृत रस माते।
तास पथित भू प्रगट, संत अरु महंत निसतरे।
हरि पूजैं हरि भजै, तिनहि संग बहुत निसतरे।
मैं बपुरौ बरनौं कहा, जांणीं जाइ न जीय ते।
रघवा प्रणवत रांमजी, मम दोषो नहीं दीयते ॥२१७

ये पांच महंत परसिध भये, ज्ञांनी गौड़ बंगाल मधि ॥
नित्यानंद श्रीकृष्ण-चैतन्य, भजि लाहो लीयो।
रूप सनातन रांम रटत, उमग्यौ अति हीयौ।
जीउ-गुसांई खीर-नीर, निति निरनौं कीयौ।
जै जै जै त्रिलोक ध्यांन, ध्रुव ज्यूं नहीं बीयौ।
राघो रीति बड़ेन की, सब जांनैं बोलै न बधि।
ये पांच महंत परसिध भये, ज्ञांनी गौड़ बंगाल मधि ॥२१८

---

१. कहि यह। २. भक्त।

उभै भ्रात कलिजुग प्रगट, भक्ति सथापन कारनै ॥२६०
नित्यानंद बलिभद्र, कृष्णचैतन्य कृष्णघन।
कीयो दूरि अधर्म्म, धरम बर थप्यौ भजन-पन।
प्रेम रसांइन मत बड़े, जन अंघ्री सेवत।
जो नर लेवै नांव, ताहि उत्म गति देवत।
पूरब गौड़ बंगाल के, तारे जन औतार नैं।
उभै भ्रात कलिजुग प्रगट, भक्ति सथापन कारनैं ॥२१९

नित्यानन्द महाप्रभु की टीका

मत्त- आप सदा मदमत्त रहे. बलिदेव चहै पुनि प्रेम मताई।
गयंद वै निति आनन्द रूप धरयौ प्रभु, आइ भरी तऊ है चित चाई।
छंद भार भयौ न सभार सरीर हु, पारख तौं महि राखि धराई।
कैत हु तें सुनि कांन धरे जन, होइ गई मतवारि सभाई ॥३०७

श्री कृष्ण चैतन्य प्रभु की टीका

गोपिन की रति देखि थके हरि, या तन मैं श्यम भ्रात ललाई।
गौर तनी सब और रही बनि, रंग खुल्यौ बन अंग न माई।
कृष्ण सरीरहि लालप आवत, जांनत हूं फिरि यौं मनि आई।
पुत्र यसोमति होत सची सुत, गौर भये गन मांझ नचाई ॥३०८
प्रेम हुवै कब हेम डरौ तन, अंग खुलैं कबहूं बधि जावै।
और नई अस वा पिचकारनि, लाल प्रियाजु ग भाव समावै।
ईस्वरता परमांन करौ, जगनाथ हु छेतर देखन[1] आवै।
च्यारि भुजा षट बाहु दिखावत, बात अनूपम ग्रंथहु गावै ॥३०९
चैतनि स्यांम सु नांम भयौ जुग[1], ख्यात महंत जु देह धरी है।
गौंड जितौ नर भक्ति न जांनत, प्रेम समुद्र बुड़ाय हरी है।
संत सिरोमनि होत भये सब, तारन कौं जग बात खरी है।
कोड़ि अजामिल वारत दुष्टन, भक्ति मगन करे भुभरी है ॥३१०

---

१. जग।

---

[1]टि. रोहणी कुंड।

मूल

छपै श्री रूप[†] सनातन तज्ञ दुहु, बिषै स्वाद कीयो बवन ॥
पूरब गौड़ बंगाल, तहां कौ सूबौ होई।
बिभौ भूप परमांन, खजांनां असु गज जोई।
मिथा सब सुख मांनि, चालि बृन्दाबन आये।
प्रापति मैं संतोष कुंज, करवां मन भाये।
संत तोष राघो रिदै, भक्ति करी राधा-रवन।
श्रीरूप सनातन तज्ञ दुहु, बिषै स्वाद कीयो बवन ॥२२०

टीका

पांच तुकां निरबेद निरूपण, जांनि कर्यौ मन मांहि डरे हैं।
येक रही तुक मांझ निरंतर, लाख कबित्त अरत्थ धरे हैं।
स्यांम प्रिया रस बात कही बड़, जीव सु नाथ छपैहि करे हैं।
है अनुराग कहा बरनूं गति, जास दया करि प्रेम भरे हैं ॥३११
भू बृज की बन की बड़िता जन, जांनत नांहि न देत दिखाई।
रीति उपासन की सु पुरांनहु, कै अनुसार सिंगार लखाई।
आइस पाइ सु स्यांम प्रभू करि, आइ लगे सु गुपेस्वर भाई।
ग्रंथ करे तिनकी इक बात, सुनै पुलकै अखियां झर लाई ॥३१२
रूप रहै नद-गांव सनातन, आतहु खीर सु भोग लगांवै।
आत प्रिया सुखदाइक बालक, रूप लियें सब सौंज धरांवै।
पाइस पावत नैंन घुलावत, पूछि जितावत सो पछितांवैं।
फेरि करौ जिन बात धरौं मन, चाल चलौ निज आंखि भरांवैं ॥३१३
रूप गुनांगुन गांन सुनैं, अकुलांन तिते उन मूरछ आई।
आप बड़े धरि धीर रहे न, सरीर सुधी इम बात दिखाई।
श्री क्रणपूर गुसांई गये ढ़िग, स्वास लग्यौ तन कै सुधि पाई।
आगि छुये छिलका हुय जात, सप्रेम नयो यह कौंन सगाई ॥३१४
गोबिंदचंद जु आइ निसा, सुपनैं महि भेद सबैहि जनायो।
मैं जु रहौं खिरका बिचि गोइक[1], सांझ र भोरहु दूध सिचायौ।

---

१. गारक।

[†]शिष कृष्ण चैतन कौ।

रूप अनूप प्रगट्ट करयौ छबि, को बरणै थकि जात लखायौ।
सागर गागर मांहि न मावत, नागर कौं भजि पार न आयौ ॥३१५
पांवन पैज रहैत सनातन, तीन दिनां पय ल्यात पियारौ[1]।
सांवर रूप किसोर रहौं कत, भ्रातहु च्यारि पिताहि बिचारौ।
ग्रांमहि बूझत पातक हूं नहि, देखि चहूं दिसि नैंन भरारौ।
आइ मिलै अबकै कबहूं फिरि, जान न द्यौ सिर लाल पगारौ ॥३१६
सांपनि रूप सिखा द्रिग देखि र, जांनि सनातन काबि[2] बिचारौ।
झूलत फूलत है द्रुम डारनि, सो सर तीर हलांन निहारौ।
आइ र भ्रातक दे परदक्षण, आप डरै सिर लै पग धारौ।
भ्रात उभै सु अपार चिरित्रनि, पेखि जगे जग[3] बात उचारौ ॥३१७

मूल

छपै　　**श्रीजीव गुसांई अध्व बड़, श्री रूप सनातन भजन जल ॥टे०**
प्रेम पालि परपक्क, आंन बिधि फूटै नांहीं।
जुगल-रूप सूं प्रीति, बसत बृन्दाबन मांहीं।
अखंड अक्षर मन लग्यौ, कलम पुस्तक कर राजै।
सास्त्र बेद पुरांन सार, उर मधो बिराजै।
राघो रसिक उपासना, संसा काटन अति सबल।
श्रीजीव गुसांई अध्व बड़, श्री रूप सनातन भजन जल ॥२२१

टीका

ग्रंथ रचे बहु ग्रंथनि छेदक, आत जितौ धन लै जल डारै।
सेव करैं जन पात्र न दीसत, मैं जु करो कटु कोप उचारै।
गौरव संत बढ़ाई सिखावत, बोलत मिष्ट निसा-दिन सारै।
कौंन करै निरबेद निरूपण, भक्ति चरित्र करे सु अपारै ॥३१८

मूल

छपै　　**गोबिंद इष्ट सिर भक्त भूप, मधुर बचन श्रीनाथ भट ॥टे०**
श्रुति संमृत सास्त्र पुरांण, भारथ ही खोलै।
अब ग्रंथन को सार, आप पारा ज्यूं जोलै।

---

१. लखायौ। २. काछि। ३. जज्ञ।

पूरब जा जिम कह्यौ, आदि श्री रूप सनातन।
नारांइन भट जीव, हीव धारचौ सोही पन।
गोपाल[1] अपति कुल नाग कै, दास भाव प्रेमां अघट।
गोबिंद इष्ट सिर भक्त भूप, मधुर बचन श्रीनाथ भट ॥२२२
श्री नारांइन भट प्रभु, बृज-बल्लभ बल्लभ लगैं ॥टे०
नांचन गांवन सरस, रास मंडल रस बरखैं।
ललितादिकन बिहार, देखि दंपति मन हरखैं।
महिमां बहु बृज भई, देस उधारक जीय की।
उच्छव प्रचुर प्रमाण, चाहि इक है प्रिया पीय की।
राघव संत समाज मैं, प्रेम मगन निस-दिन जगै।
श्री नारांइण भट प्रभु, बृज-बल्लभ बल्लभ लगै ॥२२३
भट्ट नरांइन बृज धरा, गुह्य धांम प्रगट करे॥
इष्ट येक श्रीकृष्ण. और उर मैं नहीं आवत।
भजन अमृत कौ अबध, संत जन सरस लड़ावत।
स्वांमि बिलास हुलास, आंन सूं रहत रसज्ञ-जन।
पक्ष सु भारत बोध, तांन कौं करै निखंडन।
तहं तहं प्रभु लीला करी, जो जो तीरथ उर धरे।
भट्ट नरांइन बृज धरा, गुह्य धांम प्रगट करे ॥२२४

टीका

इंदव छंद
भट्ट नरांइन ब्रजु परांइन, ग्रांमहु आत करे व्रत ध्यावै।
आप कहै इत है अमुकौ प्रभु, कुंड र धांम प्रतक्ष दिखावै।
जागिहि जागि बिलास बतावत, जीत भये रिस की सुख पावै।
बेगि चल्यौ मथुरात कहैं जन, गांव उचे त्रिय सोत लखावै ॥३१९

मूल

छपै
मध्वाचारिज मधुपुरी, दुती कवलाकर भट भयौ॥
अति पंडित परबीन, भागवत कंठ बसेखै।
पैंतालीस हजार हृदै, दिज दीपक देखै।

१. गोयल।

अंतर गति की प्रीति, प्रभुजी प्रगट पिछानी।
दोऊ भुजन ह्वै चक्र, बात सर्ब ही जग जांनी।
राघो अति रुचि स्यांम सूं, भक्त भांवनां सूं नयौ।
मध्वाचारिज मधुपुरी, दुती कवलाकर भट भयौ ॥२२५

सपतदीप नवखंड मैं, भक्त जक्त की नांव॥
मथुरा सदन सुथांन, पुरी पूरण श्रुति गावै।
सुकृत बिनां सथांन बसै, कोई मुक्ति न पावैं।
संत सुकिरती बरणि, काल-क्रम जिन तैं डरपै।
तन मन धन सरबंस, साध साहिब कौं अरपै।
राघौ रटवै रांमजी, जहां जहां धारै पाव।
सपतदीप नवखंड मैं, भक्त जक्त की नांव ॥२२६

ब्यास द्विती माधौ प्रगट, सर्ब कौ भलौ बिचारियौ ॥टे०
श्रुति समृति पौरांण, अगम भारथ मथि लीयौ।
ग्रंथ सबै पुनि देखि, अरथ रस भाषा कीयौ।
गाई लीला जैति, कृतम जै जै उचरचौ।
श्रवनां सुनि करि कंठ, जीव जग निरभै बिचरचौ।
निरबेद अवधि सिर जगंनाथ, रस करुणा उर धारियौ।
ब्यास द्विती माधौ प्रगट, सर्ब कौ भलौ बिचारियौ ॥२२७

इंदव छंद
सारहु मैं ततसार सिरोतर, लीन्हौं महा मथि माधौ गुसांई।
लीला र जैति जपै दुख दूरि ह्वै, काज सरै महामंत्र की नांई।
भैरव भूत पिरेतर पाखंड, व्याधि टरै बपु तैं सब बाईं।
राघो कहै निति नेम निरंतर, असैं मिले ढुरि सेवग सांई ॥२२८[†]

टीका

माधवदास तिया तन त्यागत, यौं दिज जांनि मिथ्या बिवहारा।
पुत्र बड़ौ हुइ जाइ तजौ गृह, और भई दिखई करतारा।

---

१ छांई।

[†]प्रति लेखक ने इसे टीकाकार का पद्य मानकर ३२० की संख्या देदी है, पर 'राघो' की छाप होने से मूल ग्रन्थकार का ही है।

छाड़ि दयौ गृह पालत है वह, मांनत हूं कर तास गवारा।
आइ परे जगनाथ पुरी तटि, धीरज भूखन प्यास बिचारा ।।३२१
तीन दिनांस भये न नही खुत, लीन रहै हरि सोच परचौ है।
सैंन सु भोग पठात भये, कवलाकर हाथ क थार धरचौ है।
बैठि कुटी मधि पीठ दई मग, दांमनि सी दमकी न फिरचौ है।
देखि प्रसाद बड़े मन मोदत, मांनत भाग सुपात्र परचौ है ।।३२२
खोलि किवार निहारत थारन, सोच परचौ उत ढूंढत पायौ।
बांधि र बेत दई सु लई प्रभु, जांनत पीठि चिहंन दिखायौ।
आप कही हम देत लयौ इन, पाव गहे अपराध खिमायो।
बात बिख्यात नमावत कीरति, साध लजावत सील बतायौ ।।३२३
रूप निहारत सुद्धि बिसारत, मंदिर मैं रह जात न जांनैं।
सीत लग्यौ जन कांपि उठे हरि, देसि कला तउ हैं दुख भांनैं।
बेग लगे तटि सिंध गये चलि, चाहत नीर तबै प्रभु आंनैं।
जांनि लये हरि दूरि करौ दुख, ईस्वरता तुम खोवत क्यांनैं ।।३२४
नाथ कही सब कांम करौं तव, देत मिटाइ बिथा यह भारी।
भोग रहें तन फेरि धरौ नहि, मेटत हूं प्रभुता हम हारी।
बात वहै सति गांस सुनौं इक, साधन कूं न हसै सु बिचारी।
देखत ही दुख दूरि गयौ सब, नौंतम भक्ति कथा बिसतारी ।।३२५
कीरति देखि अभंगहि मांगत, खीजि तिया रु चलावत पोता।
देण लयौ गुण सो कर धोवत[1], बाति बनाइ करी दिव जोता।
मंदिर मांहि उजास भयो, तम नास गयौ उर देखत नौता।
साध दयाल निहाल करै, दुख देत उनैं सुख सेवत होता ।।३२६
पंडित जीतत आत भयो वत, बात करौ हम सौं नहीं हारौ।
हारि लिखि पुनि बांचि बनारस, माधव जीतत खुवार जमारौ।
आय कही फिरि माधव सौं अब, हारि गधै चढ़ितौ पतियारौ।
बांधि उपानत कांनन हूं, जगनांथह राय खराहि चढारौ ।।३२७
गावत है बृज की रचनां, गिर नील सवै चलि नैंन निहारैं।
चालि परे इक गांव तिया जन, ल्यावत भोजन चाव पियारैं।

१. धावत।

बैठि प्रसाद करैं सु भरै द्रिग, है किम बात कहौं जु उचारैं।
सांवर बाल भुराइ चलावत, मात न जीवत देह बिसारैं ॥३२८
गांव चले अनि भक्त महाजन, ही मनमैं बिनतीहु करी है।
जात भये घर वौ जु गयौ, अनि भाव भरी तिय पाइ परी है।
म्हंत रहै इक बूझत आसन, नाटि गयौ मन मांहि डरी है।
ल्यौ परसाद सु दूधहि पीवत, माधव नांव सु आस भरी है ॥३२९
आप गये तब आत महाजन नाम सुन्यौ पुनि म्हंत भगत्ता।
जाइ परे पगि आप मिले झिलि, हौ धनि दंपति धांम सपत्ता।
म्हंत कहै अपराध करचौ हम, सेव करौ हरि संत महत्ता।
आत मिलाप बनैं सुधरौ मन, जात बृंदाबन है प्रभु सत्ता ॥३३०
देखि बृंदाबन मोद भयो मन, जात बिहारी चनां कु छपाये।
ल्यौं परसाद कही प्रतिहार, गये जमना तटि भोग लगाये।
भोजन कौं अरपात भये जन, पाप नहीं हरि वै हि बताये।
बूझत आप जनाइ दयो फिरि, ल्याइ कह्यौ रस हास गहाये ॥३३१
देखन कौं बृज जात भये दुरि, खेम भखै निसि कृम दिखाये।
जैत गये सुनिबे हरियानहु, गोबर पाथि निलागिर धाये।
आइ घरां सुत मात मिले, मग मैं सुपनां कहि बैसि मिलाये।
या बिधि भांति अनेक चरित्रहु, कांन परे हम गाइ सुनाये ॥३३२

मूल

छपै

रघुनाथ गुसांई की रहणि, श्रीजगनाथ कैं मनि बसी ॥
स्यंघ पौरि सत सूर, रहै गरुड़ासन ठाढ़ौ।
अति धीरज अति ध्यांन, आहि अति पण कौ गाढ़ौ।
सीत समैं सकलात, जगतपति आंनि उढ़ाई।
अब कूं अचिरज भयौ, महंत की मांनि बढ़ाई।
ज्यूं जननी सुत सुचि करै, जन राघौ रीति करी इसी।
रघुनाथ गुसांई की रहणि, श्रीजगनाथ कै मनि बसी ॥२२८

टीका

संपति सूं घर पागि रह्यौ उन, त्यागि निलाचल बास करचौ है।
बाप पठावत है धनकूं, नहि लेत महाप्रभु पास परचौ है।

मंदिर द्वार सुरूप निहरत, सीत लगें सिकलात डरयौ है।
सोचहु रीति प्रमांन उहै जिम, माधवदास उधार धरयौ है ॥३३३
चैतनिकृष्ण सु आइस पाइ र, आइ बृंदाबन कुंड बसे हैं।
रूप चहूंनि कहै न सकै तन, भाव सरूप करयौ जु लसे हैं।
चांबर दूध खवाय मनौमय, नारि लये रस बैद हसे हैं।
संतन की महिमां न सकौं कहि, देहु वहै गति भक्त रसे हैं ॥३३४

मूल

छपै बृधमांन गंग लंगहर जन, राघो नारद ज्यूं नचे ॥
पीवत रस भागवत भक्ति, भू परि बिसतारी।
परमारथ के पुंज, उभै भ्राता ब्रह्मचारी।
संतन सूं लैलीन, दीन देखें कछू दीजै।
रांम रांम रांमेति, राति दिन सुमरन कीजै।
भट भीखम सुत सांतकौ, भक्ति काज भू पर रचे।
बृद्धमांन गंग लंगहर, जन राघो नारद ज्यूं नचे ॥२२६
मिश्र गदाधर ग्यांन पक्ष, जिन भ्रम बिध्वंसे भींव ज्यूं ॥
बसत बृंदाबन बास, भजत हरि सुख कौ आलै।
करै हंस ज्यूं अंस, खीर नीरहि निरवालै।
पीवत रस भागौत अनि न निज धरम दिढ़ायौ।
आन धर्म सब त्यागि, गर्भ[1] गहि अघर उड़ायौ।
राघो धरनि धमाल की, धरयौ निगम मत नींव ज्यूं।
मिश्र गदाधर ग्यांन पक्ष, जिन भ्रम बिध्वंसे भींव ज्यूं ॥२३०

टीका

इंदव छंद स्यांम रंगी रंग जीव सुंन्यौं पद, साध उभै लिखि पत्र पठायौ।
रैणि बिनां चढियो रंग क्यौं करि, प्रेम-मढ्यौ उरका उत आयौ।
कूप तहां पुर कैं ढ़िग बैठक, पूछत हे उन नांव बतायौ।
कौंन जगां बसिहौ जु बृंदाबन, धांम सुन्यौं मुरछा गिर पायौ ॥३३५
कोउ कह्यौ भट येह गदाधर, बेगि उठे पतियांहि जिवाये।
हाथि दयौ उरका सिर लावत, बांधि र चालि बृंदाबन आये।
जीउ मिले द्रिग तैं जल ढारत, बेह गई सुधिवै फिर गाये।
ग्रंथ पढ़े सब स्यांम कबादिब[2], प्रेम उमंग न अंग सु छाये ॥३३६

१. भरम। २. कथादिव।

नांव कल्यांन हुतौ रजपूत सू, आत कथा सुनिबे मन लाग्यौ।
गांव नजीकहि धौरहरा उन, भोग तजे तिय कौं दुख पाग्यौ।
सील लिवाय दयौ भट मो पति, स्वार करौं इन कांमहि जाग्यौ।
मांगत ही जुवती अभवंतहु, बीस दये रुपये कहि राग्यौ॥३३७

भट्ट गदाधर की हु कथा कहि, है तुमरी किरपा सुधि लीजै।
लोभ करचौ मन भंग गई व्रत, यौंहि कही मम काज करीजै।
आप कहै तव ध्यान करौं निति, दोष नहीं हम मांगत दीजै।
श्रोतन कै दुख होत भयो सुनि, झूठ कही इन मार नखीजै॥३३८

भूमि फटै बरि जांहि कहै सिष, नीर बहै द्रिग बुद्धि गई है।
वल्लभदास प्रकास भयो दुख, राम सुनी स बुलाइ लई है।
साच कहौ तन आंच करैं बहु, मार डरी सब कैंत भई है।
मारन कौं जु कल्यांन गयौ तिय, भट्ट कही मम सीख दई है॥३३९

देस महंत कथा महि आवत, पासि पठात[1] सबै जन भीजै।
आंसु न आंवहि सोच मुचे[2] जल, लावत लाल मिरच्चि[3] हु खोजै।
साध लखे भटजूहि जनावत, ऊठि गये सब ले मिलि रीझै।
चाहि इसी उर होइ जबै मम, रोइ भरें द्रिग प्रेम सु धीजे॥३४०

चोर धस्यौ घर संपति बांधत, जोर करै नहीं ऊठत भारी।
आइ उठाई दई सु लई लखि, नांम सुन्यौ हम भूलि बिचारी।
लै धन जाहु उजास करै रवि, आत गुनी दस तेरि जिवारी।
सीस उतारि विचार करौ यह, कैंत भयौ सिष बात निवारी॥३४१

सेव करै प्रभु की निज हाथनि, भक्ति प्रतीति पुरांनहु गाई।
देत हुते चवका सिख ले धन, आवत ही भृति सैंन जनाई।
हाथ पखारि बिराजहु आसन, चाव उही खिजिकैं समझाई।
हेत हरो परि आस तजी जग, प्रेम गये पग रीति दिखाई॥३४२

मूल

छपै　　**श्री बृन्दावन कौ मधुर रस, इन सबहिन मिलि चाखियौ॥**
१भट गोपाल २भूभृति, प्रभु मैं सरबस देखै।
थानेसुरी ३जगनाथ, बिपुल ४बीठल रस रेखै।

---

१. बठात। २. डुबें। ३. मिच्चि।

५रिषीकेस ६भगवान, ७म्हामुनि ८मधु ९श्रीरंगा।
१०घमंडी ११जुगलकिसोर, १२जोव १३भूगरभ उतंगा।
१४कृष्णदास १५पंडित उभै, हरि-सेवा ब्रत राखियो।
श्री बृन्दाबन कौ मधुर रस, इन सबहिन मिलि चाखियौ ॥२३१

गोपाल भट की टीका

भट्ट गुपाल बसें उर लाल, लसें प्रिय पीव बिख्यात सरूपा।
भोग धरैं अर राग करै, अनुराग पगे जग वात अनूपा।
स्वाद लयौ बन माधुरता जिन, सीत चख्यौ सु भये रस रूपा।
औगुन त्यागत जीवन के गुन, लेत भले जन मैं बड़ भूपा ॥३४३

अली भगवान की टीका

रांमहि पूजि अली भगवांन, बृंदाबन आइ र और भई है।
रास बिलास निहारि बिहारिहि, प्यास बढ़ी रसरासि नई है।
चाहि सु रास बिहारीहि पूजन, बात सुनी गुर रीति गई है।
आत भये बन जाइ परे पग, ईस तुमैं सिर कैसु दई है ॥३४४

बीठल बिपुल की टीका

बीठलदास बरे हरिदास जु, दाह उठी गुर कै स बिवोगा।
रास समाज बिराज बड़े जन, बोलि लये सुनि आवत जोगा।
देखि बिहार जुगल्लकिसोरहु, गांन र तांन सुने मन सोगा।
जाइ मिले उस[1] भाव धरचौ तन, और गये सब देखत लोगा ॥३४५

लोकनाथ गुसांई की टीका

कृष्ण जु चैतनि के भृति उत्तम, लोकहु नाथ सबै सुखदाई।
कृष्ण प्रिया सु बिहार रहै मन, ज्यूं जल मीन निसा दिन जाई।
भागवत रस गांन सु प्रांन हि, गावत है तिन सूं मितराई।
माग चलै पगि लागि रसिक्कनि, नेह सु रीति दया तजि ताई ॥३४६

गुसांई मधु की टीका

श्री मधु आइ बृदाबन मैं इन, नैननि सौं कब देखहु रूपं।
हेरत हे बन कुंज लता द्रुम, भूख न प्यास गिणैं नहि धूपं।

---

१. उन।

काटत ही जमुना स किरारनि, बंसिबढं तटि देखि अनूंपं।
दौरि लगे पगि र[1] आप भये जड़, है अजहूं गोपिनाथ सरूपं ॥३४७

कृष्णदास ब्रह्मचारी की टीका

मोहन कांम सरूप सनातन, सीस धरे भल पूजन कीजै।
कृष्ण सुदास मनुं ब्रह्मचारिहु, भट्ट नरांइन सिष्य जु भीजै।
चारु सिगार करैहु निहारत, चेत गहि नहि यौं मन दीजै।
राग रु भोग बखांन करूं किम, है अजहूं उन देखि र जीजै ॥३४८

कृष्णदास पंडित की टीका

गोविंद देव सरूप सिरोमनि, पंडित कृष्ण सुदास प्रमांनौ।
सेवन सूं अनुराग सु अंगनि, पागि रही मति है मन जानौं।
प्रीत करै हरि भक्तन सौं बहु, दे परसाद सुपद्धित मांनौं।
रीति सु तै प्रतीति बिनी तिहु, चाल चलै वहि और न आनौं ॥३४८

भूग्रभ गुसांई की टीका

भूग्रभ जू बसिकै रु बृंदाबन, कुंजन कौ सुख गोबिंद लीयो।
है बिरकतहि रूप सुमाधुर, स्वाद लयो मिलि भक्तन जीयो।
मांनसि भोग लगाइ निहारत, तवै हि जुगल्ल सरूप सु पीयो।
बुद्धि समांन बखांन करचौ बहु, रंग भरचौ रस जांनि र कीयौ ॥३४६

मूल

छपै **राघो रिसिक मुरारि धनि, अति प्रमोध पूरब कीयौ॥**
राजा खल खंडैत दक्षत, करि करम छुड़ाया।
भाव भगति पन थप्यौ, भरम गहि अधर उड़ाया।
तन मन धन सर्बस, अरपि साधन कौं दीजै।
मनिख जनम फल येह, देह धरि लाहा लीजै।
करहि कीरतन रैनि दिन, प्रेम प्रीति उमगै हीयौ।
राघो रसिक मुरारि धनि, अति प्रमोध पूरब कीयौ॥२३२

टीका

इंदव संतन सेव बिचारि करै विधि, पार न पावत कौंन मुरारी।
छंद साधन के चरणांमृत के घरि, माट भरे रहि पूजन धारी।

१. गरि।

आवत दास तिनैं सुख दे अति, जीभ कहै न सकै सुबिचारी।
उत्सव यौं गुर कौ सु करै दिन, मानि र द्वादस राखत ज्यारी ।।३५०
साधन कौ चरणांमृत ल्यावहु, भावहि जांनन दास पठायौ।
आंनि कह्यौ सब सन्तन खोरन, पांन करचौ वह स्वाद न आयौ।
भक्ता सभा सबही न चखावत, जांनत नैंकि न छोड़ि सु आयौ।
बूझि कह्यौ तन कोढ रह्यौ फिर, ल्याय दयौ पिय कै सुख पायौ ।।३५१
राजसभा सु बिराज कहै जन, वैह बिवेक कहै न प्रभाऊ।
भोजन साध करै इकठे बहु, दूर[1] रसोट हु द्यौ नहीं भाऊ।
पातरि डारि दई ब गुसांई, पगारि दई सुनि देखत दाऊ।
सीतल यौ नहि देत भये मुख, दूरि करचौ भृति सेवन चाऊ ।।३५२
बाग समाज चले जन देखनहू, का दुरावत सोच परचौ है।
साधन मान चहै तन घुंमर, बैठि कहो कित ल्याव धरचौ है।
जाइ सुनावत दास तमाखहु, पासि किनैं सुनि आंनि करचौ है।
झूठहि खैंचि र साच दिखावत, पाइ लये मन दोष हरचौ है ।।३५३
संतन सेवन गांव दयो किन, भूपति दुष्ट उतारि लयौ है।
स्यांमहि नंद बिचारि करचौ जब, दास मुरारिहि पत्र दयौ है।
जा बिधि होइ सु ता विधि आवहु, आवत बेगिअ चैंन लयौ है।
प्रिष्टि करी परनाम निबेदन, भोजन मैं चलि प्रेम भयौ है ।।३५४
आइस सौ अचवन्न लयौ उन, दुष्टन मैं मुखि तापहि आये।
माग मिले सचिवै सिष बोलत, प्रात पधारहु नीच बताये।
कांम करै हम सौ समझावत, आत नहीं मन नेह डराये।
चिंत करौ जिन धीर धरौ उर, भूप कही दिन तीन लगाये ।।३५५
आत भये गुर ल्याव कह्यौ बर, देत करामति येह सुनाई।
जाहु अभू उन मांनष देखहि, जोर चले गज धूम मचाई।
भाजिक हार गये नहि देखत, बोलि कही सु गिरा सुध भाई।
कृष्ण हि कृष्ण कहौ तभ छाड़ हु, पेम सन्यौं सुनि देह नवाई ।।३५६
नीर बहै द्रिग होत न धीरज, आप दया करि भक्ति हु दीन्ही।
दास गुंपाल गरे धरि माल, सुनावत नांव सु यौं बुधि कीन्ही।

---

१. दूसर सोटउ।

भूप लख्यौ परभाव परचौ पग, दुष्टपणौ तजि यौं मति भींनीं।
नौतम गांव दयौ उन केतक, भाग फल्यौ मम आजहि चीन्ही ॥३५७
भक्त भयौ गज संतन सेवत, देखि प्रनांम करैं जनतो कैं।
ल्यावत गौनि उठाइ र बार न, नाइक जाइ पुकारत पोकैं।
आवत उच्छत्र सीतहि पांवन, आप दुयैं कहि निंद कही कै।
छोड़ि दई गति भक्तन सूं मति, संग समूह रहै सुख जीकैं ॥३५८
संग रहै जन पांच सतंछय, जाइ जहां नर ल्यावत सीधा।
बात भई दसहूं दिसि कौं यह, सूरज चाहि न आवत गीधा।
संत गयौ इक आंनि दयौ गहि, नीर न पीवत सीतहि बीधा।
बीति गये दिन तीन र च्यारिहु, गंग गये तन त्यागन कीधा ॥३५९

मूल

छपै　जकरी जन गोपाल की, जगत मांहि पर्बत भई ॥
नरहड़ सहर न्यावजि[1] देस, बागड़ बर कीयौं।
नवधा भक्ति बखांनि, येक दासत्व बर्त लीयौ।
बक्ता बड़ भागौत, साध परखत मैं सोहै।
छेदक संसय गृन्थि, भक्ति बल सब कौं मोहै।
संत दया उर निति चहै, भावत स्यांमा स्यांम ई।
जकरी जन गोपाल की, जगत मांहि परबर्त भई ॥२३३
कृष्णदास की चरचरी[2], सकल जगत मैं बिसतरी ॥
चालक कीयौ चरित, कोप वासव कौ नीकौ।
पंचाध्याई पाठ प्रगट, प्यारौ प्रिया पीकौ।
केलि रुकमनी कृष्ण, कहो भोजन सघराई[3]।
परबतधरकी छाप, काबि मैं जहां तहां लाई।
जाडौ संग्या पाइ कैं, जग की सब जड़ता हरी।
कृष्णदास की चरचरी, सकल जगत मैं बिसतरी ॥२३४
संतदास की सेव हरि, आइ निवाई पाइ है ॥
बिमलानंद प्रबोध, बंस उपज्यौ धर्म सींवां।
प्रभु जन जांनि समांन, दोइ बल गाये ग्रींवां।

---

१. निवाज। २. टी. राग। ३. सुघराई।

सूर सहृसि कहि, काव्य मरम कोऊ नहीं पायौ।
रहसि भक्ति गुन रूप, जनम कर्मादिक भायौ।
छपन भोग पद राग तें, प्रभु नांई दुलराई है।
संत दास की सेव हरि, आइ निवाई पाई है॥२३५

टीका

इंदव छंद
बास निवाइ सु गांव हरी मन, भोग छतीस प्रकार लगाये।
प्रीति सची जग मांहि दिखावत, सेव भलैं जगनाथजु पाये।
भूपहि रैंनि कह्यौ जन नांम स, संतहि कै घर जैंवत भाये।
भक्ति अधीन प्रबोन महाजन, लाल रंगील जहां तहां गाये॥३६०

मूल

छपै
सूर मदनमोहन की, नांम शृंखला अति मिली॥
स्यांमां स्याम उपास, गोपि रस ही कौ रसिया।
राग रंग गुन टेर हुतौ, अगिलौ बृज बसिया।
बरन्यौं मुक्षि सिंगार, सबद मैं अठ रस नांहीं।
मुखि निकसत ही चल्यौ, गयौ द्वारावती मांहीं।
जुमला अर्जुन द्रुमन ज्यूं, अजसुत की आग्या पिली।
सूर मदनमोहन की, नांम शृंखला अति मिली॥२३६

मूल

मनहर छंद
मदनमोहन सूरदास पासि राख्यौ हरि आप,
थाप्यौ नांम धरि ताकौ जस गाइये।
जैसैं मिसरी मैं बंस बिकत महंगे मोल,
रांम होत रांम बोले जो पैं भेद पाइये॥
जैसैं कृत कागद मैं उतम श्लोक होत,
ताहि मुनि देखि सनमुख सिर नाइये।
राघो कहै राज मधि रांम जस गायौ नीकैं,
धनि करतार कबि छाप न छिपाइये॥२३७

टीका

नाम सु सूर खुले द्रिग कंजहु, रंग भिले पिय जीय ज्यवाये।
आंमिल आप संडील लख्यौ, गुर बीस गुने दमरा पुरि लाये।

खांहि पुवा सु मदंन-गुपाल जु, प्रेम पग्यौ छकरा पहुचाये।
रैंनि पहुंचत स्यांम कही अब, भोग करौ उठिके फिरि पाये ।।३६१
लै पद गावत भक्ति दिखावत, संतन की पनही रखवारौ।
सीख लयौ किनि पारख चाहत, खोलि गयो दर राखि संभारौ।
बैठि रह्यौ जब हाथि उठावत, आस भई सिधि मैं हु बिचारौ।
मांहि गुसांईं बुलात न जावत, सेवन सौंपि गये जन सारौ ।।३६२
संपति संतन कौं सुखुवाय र, नांहि डरे जु निसंक रहे हैं।
लैन खजानहि आत भगे निसि, पाथर घालि सिंदूख गये हैं।
मेल्हि रुका धन साध गटक्कहु, यौं सटके हम आप कहे हैं।
भूपति खौलि सिदूषहि देखत, कागद बांचि खुसी स भये हैं ।।३६३
लैन पठायहु मोहि रिझायहु भक्त लिख्यौ बन में तन डारचौ।
टोडर फेरि कही धन खोवत, बांधि र ल्यावहु मूढ़ हकारचौ।
ल्यांत हजूर कही नृप दूरिहि, सौंनत दुष्टन कष्ट न धारचौ।
साखि लिखी अकबैर पिकी भल, जाहु वही धन तो परि वारचौ ।।३६४

साखि

इक तम अंधियारौ करै, सुन्नि दई पुनि ताहि।
दश तम तैं रक्षा करौ, दिनमनि अकबर साहि ?

आइ बृंदाबन माधुर मैं मन, सब्द कह्यौ सुनि सो रस रासैं।
जा दिन तैं उचरचौ मुख तैं सत जोजन जात बढ़ी जग प्यासैं।
सो र दिजै द्विज म्हैल चहै लहु, चैल[1] पहैल जुगल्ल प्रकासैं।
मोहन जू सिर इष्ट महा प्रभु, आश्चर्य नांहि दया अनयासैं ।।३६५

मूल

छपै **संसार सलित निसतारनैं, नवका ये जन जांनियौं ॥**
१तिलोचन २हरिनाभ, ३धीर ४आधारूं ५सोभा।
६सींवां ७सधनां ८आसाधर, ९डूंगर गुण गोभा।
१०कासीस्वर अवधूत, ११नीरद्यौ १२राज १३पदारथ।
१४ऊदां १५सोभू १६पदम, १७कृष्ण किंकर पर्स्वारथ।

---

१. कैल।

१८बिमलानंद राघौ कहै, १९रांमदास परमांनियौ।
संसार सलित निसतारनैं, नवका ये जन जानियौं ॥२३८

सधनांजी की टीका

इंदव छंद
है सधनां सु कसाई बनी अति, हेम कसोटी भली कस आई।
जीव हतै न करै कुलचारहि, बेचत मांस हरी मति लाई।
सालिगरांम न जांनत तोलत, संत भरै द्रिग सेन कराई।
राति कही धरि आव वही[1] मम, गांन[2] सुनौं उर रीझ्य[3] सचाई ॥३६६
आइ दये अपराध कर्‌यौ हम, सेव करी हरि कौं नहीं भाई।
रीझि रहे तुमपै सु करौ मन, नैन भरे सुनि सुद्धि गमाई।
धारि लये उर छोड़ि दयौ सब, श्री जगनाथ चलैं उपजाई।
संग चल्यौ इक संग भये जन, देखि सुगात स दूरि रहाई ॥३६७
मांगन गांव गये सु तिया इक, रूपहि देखि र रीझि परी है।
राखि लये परसाद करांवन, सोइ रहे निस आइ खरी है।
संग करौ गर काटि न होवत, कंठ कट्यौ पति तौ न डरी है।
पागि कही अब कांम नहीं मम, रोइ उठी इन नारि हरी है ॥३६८
आंमिल बूझत याहि हत्यौ हम, सोच पर्‌यौ कर काटिहि डार्‌यौ।
हाथ कटें उठि पंथ चले हरि, पूरब पाप लख्यौ उर धार्‌यौ।
श्री जगनाथ पठी सुखपालहि, लै सधनांन चढौ[4] सु बिचार्‌यौ।
नींठि चढ़े प्रभु पासि गये, सुपनां सम त्रास मिटी पन पार्‌यौ ॥३६९

कासीस्वर अवधूत की टीका

कासिस्वरै अवधूत बरै करि, प्रीति निलाचल मांहि बसे हैं।
कृष्ण जु चैतनि आयस पाय र, आय बृंदावन देखि लसे हैं।
सेव लही प्रभु गोविंद देवहि, चाहत है मुख जीव नसे हैं।
नित्य लड़ावत प्रेम बुड़ावत, पारहि पावत कौंन असे हैं ॥३७०

मूल

छपै
भक्त भागवत धर्मरत, इते सन्यासी सर्ब सिरै ॥
१रांमचन्द्र कासुष्ट, दमोदर तीरथ गाई।
२चितसुख टीकाकरी, भक्ति प्रधांन बताई।

---

१. उही। २. ग्यांन। ३. रीझि। ४. चढं।

३नरसिंघ आरन चन्द्रोदय, हरिभक्ति बखांनी।
४माधौ ५मदसूदन-सरस्वती गीता गांनी।
६जगदानन्द ७प्रबोधानन्द, रांमभद्र भव-जल तिरै।
भगत भागवत धर्मरत, इते सन्यासी सर्ब सिरै ॥२३९

प्रबोधानन्दजी की टीका

इंदव छंद श्री परबोध अनन्द बड़े जन, चैतनिजू अति होत पियारे।
कृष्ण प्रिया निज केलि सु कुंजन, कैत भये र करे द्रिग तारे।
बास बृंदावन ले परकासत, दे सुख भर्म र कर्म निवारे।
ताहि सुने सुनि कोटि हजारन, रंग छयो बन पैं[1] तन वारे ॥३७१

मूल

छपै **भागवत अध्बके रतन, जे बिष्णुपुरी संग्रह कीया॥**
भक्ति धर्म कहि मुखि, आन धर्म गवन बताया।
कहां पीतर कहां हेम, निषक परिकस जब आया।
सुमन प्रेम फल संग, बेलि हरि कृपा दिखाई।
सकल ग्रंथ करि मथन, रतनआवली बनाई।
राघो तेरह बिचन मैं, द्वादस स्कंद दिखावीया।
भागवत अध्बके रतन, जे बिष्णुपुरी संग्रह कीया ॥२४०

बिष्णपुरीजी की टीका

इंदव छंद होत निलाचल मांहि महाप्रभु, चौं दिसि भक्तन भीर छई है।
बिष्णपुरी कहि बास बनारस, हो न मुकत्तिहु चाहि भई है।
पत्र लिख्यौ प्रभु माल अमोलिक, दे पठवौ मम प्रीति नई है।
भागवतं मथि काढ रतन्नहि, दांम दई पठि मुक्ति दई है ॥३७२

मूल

छपै **ये मुक्ति भये माठा-पती, जन राघो जपि रांमजी॥**
१बालकृष्ण २बड़भरथ, ३गोविन्दो ४सोठौ केसौ।
५मुकन्द ६खेम ७हरिनांथ ८भीम, हरि घरि परवेसौ।
९नागदास १०गजपत्य ११देवाजू १२गोपीनाथहि।
१३गजगोपाल जंजाल तज्यौ, १४ खेता हरि साथहि।

---

1. मैं

श्रीजगन्नाथ रणछोड़ [illegible]टि, नर-नारांइण -धांमजी।
ये मुक्ति भये माठा-पती, जन राघो जपि रांमजी ॥२४१

श्री प्रतापरुद्र गजपति जु की टीका

इंदव छंद
रुद्रप्रताप कह्यौ गजपत्तिहि, भक्ति लई प्रभु तौहु न देखै।
कोटि उपाइ करे लस न्यासहु, हौ अकुलात किहूं मम पेखै।
नृत्य करै जगनाथ रथै मुख, पाय परचौ नृप भाग बसेखै।
लाय लयौ उर प्रेम बुड़े सर, भाव भयौ दुख देत निमेखै ॥३७३

॥ इति श्री मध्वाचार्य संप्रदा ॥

मूल

छपै
श्री १नाराइण तैं २हंस, तिनैं ३सनकादिक बोधे॥
उनकै ४नारद-रिषी, ५निवासाचार्य सोधे।
६विष्णाचार्य ७परसोतमां, ८बिलास ९संरूपा।
१०माधव कै ११बलिभद्र, १२कदमां १३स्यांम अनूपा।
पुनि १४गोपाल १५कृपाचार्य, १६देवाचारिय भन।
१७सुन्दरभट कै १८वांवनभट, जिनकै १९ब्रह्मभट गन।
२०पद्माकर जग पद्मवत, २१श्रवनभट कौ जग श्रवस।
२२नींबादित आदित समां, राघो ये द्वादस दस॥२४२

छपै
जन राघो रत रांम सूं, यौं हरिजन दीनदयाल है॥
यम १सनक २सनंदन सुमरि, ३सनातन ४सनतकुमारा।
नींबादित बड़ महंत, सु तौ उनका मत धारा।
सुरति बिरति हरि भज्यौं, करी नीकी बिधि सेवा।
इष्ट येक गोपाल, बड़ौ देवन कौ देवा।
संप्रदाइ बिधि सुतन की, सत[1] महंत द्रिगपाल है।
जन राघो रत रांम सूं, यौं हरिजन दीनदयाल है॥२४३

टीका

इंदव छंद
नांम निबारक ख्यात भयौ यम, ग्राम जती यकता दल दीयौ।
भोजन बेर लगी[2] निसि आवत, जीमत नैं पद बेद सु लीयौ।

---

१. संत। २. लली।

आंगन नीव दिखावत सूरज, पाय चुके निस आंवन कीयौ।
देखि प्रभाव भयौ जग भावहु, नांव परचौ सुनिकैं जन जीयौ ।।३७४

मूल

छपै नीबादित कै पाटि महंत, १भूरीभट भारी।
भूरीभट घट परसि, कला २माधौभट धारी॥
३स्यांम ४राम ५गोपाल, बहुरि ६बलिभद्र भद्रकर।
७गोपीनाथ ८कैसौ जु, तास कै ९गंगल भटबर।
१०कसमीरी केसव जासकै, ११श्रीभट भयीयौ।
श्रीभट कै १२हरिब्यास, देबो कौ मन हरि लईयौ।
१३गुपाल १४सोभू १५परसरांम, जन बोहिथ रिषीकेस।
राघो दीरघ सिष इते, अर सेवग सर्ब देस ॥२४४
कसमीरी करता कीयौ, श्री केसौभट सोभा सरस॥
मनुखां मांही मुख्य ताप, त्रिय पाप नसावन।
कर परसी हरि भक्ति, बिमुख मारग द्रुमटा वन।
परचो प्रचुर दिखाय[1], तुरक मधुपुरी हराये।
काजी दीये कढ़ाइ, मारि जमनां डरवाये।
यह कथा सगला[2] जग मैं प्रगट, ह्वै पुनीत वाकैं दरस।
कसमीरी करता कीयौ, श्री केसौभट सोभा सरस ॥२४५

केसौभटजी की टीका

इंदव पंडित जीति करीस बिजै दिग, हारि गये सब भीत उपाई।
छंद है सुखपाल चढै द्युग बाजहु, आत भये नदियां पुर भाई।
ब्राह्मन संक महाप्रभु लेखत, जावत देव धुनी सुखदाई।
आजि गये ढ़िग है नृमता मुखि, नैंक सुनैं जग कीरति छाई ।।३७५
बालन मांहि पढौ र गढ़ौ बड़, पूछि कहूंस[3] सुभावहि रीझे।
गंग सरूप कहीं जु लहौ द्रिग, सौं'क शलौक करे सुनि भीजे।
कंठि करचौ इक पाठ सुनावत, देहु लगाइ दया अब कीजे।
मांनि अचंभ कही किम सीखिहु, आप मयात यहै सुन लीजे ।।३७६

---

१. विखास। २. सकल। ३. पूछि कहूं से।

खोलि कह्यौ इस दूषन भूषन, मांनि कही दुख दोष कहां हैं।
काबि प्रबन्ध रहै कित लेसहु, आयस द्यौसु दिखाइ जहां हैं।
भाखि बतावत औगुन सौगुन, धांम गये कहि आत पहां हैं।
सारद ध्यांन करयौ तब आवत, जोति करी जग बाल बहां हैं ॥३७७
सारद बोलि कही वह ईसुर, मांन कितौ उन सूं बतराऊं।
ईस मिले तब होत सुखी सुनि, आत महाप्रभु कै चलि पांऊं।
आपस मैं अरिदासि करी जुग, भक्ति करौ अब नांहि हरांऊं।
धारि लई उर भीरहु छाड़त, होत नई इक ह्वां फिर जांऊ ॥३७८
भट्ट सुनी बिसरां तजि[1] वनहि, द्वार परे इक जंत्र धरयौ हैं।
तास तरै निकसै नर भूलि र, जाइ गहै खतना हु करयौ है।
साथि स हंस लये सिष आवत, तुर्कन को पट जोर हरयौ है।
आमिल सौं कहि सो नति[2] नांहिं न, देखि दये जल क्रोध भरयौ है ॥३७९

मूल

छपै **प्रगट्यौ परमात्म परस हरि, भक्ति करन श्रीभट सुभट ॥**
संतन कौं सुख-करन, हरन संदेह मधुर सुर।
सुन्दर भाव सुसील, देखि परसन्न प्रेम उर।
संग्रथ कबि उदार हेत, निति भजन करावत।
उदै भयौ ससि[3] सुजस, तास तम ताप नसावत।
सिर राखे राधारवन, दूरि कीये दुबध्या कपट।
प्रगट्यौ परमात्म परसि हरि, भक्ति करन श्रीभट सुभट ॥२४६
श्रीभट गुर परसाद तैं, दुरगा कूं दक्षत करी ॥
धर चर की सिख भई, खेचरी अदभूत मांनैं।
कथा सकल विख्यात, साध सर्ब महिमा जांनैं।
संतन के समूह, सदा ही साथि रहावै।
ज्यौं जोगेसुर बीचि, जनक सोभा अति पावै।
हरि ब्यास तेजस्वि जांनि कै, परिजा सर्व पांवन परी।
श्रीभट गुर परसाद तैं, दुरगा कौ दक्षत करी ॥२४७

---

१. तहि। २. नसि। ३. समि।

हरि ब्यासजी की टीका

इंदव छंद
हौ चट थावल गांव उपैंबन, राग भयौ इत पाक बनांवैं।
मंढ द्रुगाव कराकिनि मारिहु, देखि गलांनि भई नहि पावैं।
भूख सही निसि मात हुई बसि, देह धरी नइ आइ लखांवैं।
भोग करौ हरि कौंन करै परि, माफ करौ कर सीस धरांवैं ॥३८०
सिष करी र बरी नगरी झट, जाप करचौ सिरदार बड़े हैं।
बैठि कही उर दास भई हरि, ब्यास परौ पग मारि गड़े हैं।
भृत्य भये सब पाय नये तन, पाप गये भव पार कढे हैं।
द्यौस रहे बहु आइ सु पच्छहि, है सरधा हरि भक्ति बढै हैं ॥३८१

मूल

छपै
अजमेरा के आदमी, श्री परसरांम पांवन कीया॥
मलियाढिग बहु बृक्ष, बात सूं चंदन कीनां।
है हरि नांव मसाल, अंधेरा अघ हरि लीन्हां।
भक्ति नारदी भजन, कथा सुनतैं मन राजी।
श्रीभट पुनि हरिब्यास, कृपा संत संगति साजी।
भगवंत नांम औषदि पिवाय, रोग दोष गत करि दीया।
अजमेरा के आदमी, श्री परसरांम पांवन कीया॥२४८

मूल

इंदव छंद
करुणां जरणां सत सील दया, प्रसरांम यौं रांम रजा[1] मैं रह्यौ।
कहणी रहणीं सरसौ परसौं, निश्चै दिन-राति यौं रांम कह्यौ।
ममता तजि कैं समता संग लै, भ्रम छाड़ि सबै दृढ़ ग्यांन गह्यौ।
लीन्हौ महा मथि नांव नृम्मल, राघो तज्यौ कृत काज मह्यौ॥२४९

टीका

इंदव छंद
राज महंत गयौ इक देखन, वोलि कह्यौ यह साखि बिचारौ।
ऊठि चले नग जात पबै जुग[2], बैठि गुफा हरि नांव उचारौ।
नाइक आइ चढ़ावत संपति, और दई सुखपाल निहारौ।
आइ परचौ पगि भाव न जांनत, भाव भयौ इन कौनहि सारौ॥३८८

---

१. रजौ। २. जुम।

सोभूरामजी कौ—मूल

मनहर छंद
मिलत कमाल प्रतिपाल भये पायो भेद,
पल में सकल सांसौ मेट्यौ सोभूरांम कौ।
रोम रोम लागी धुनि यौं भयौ थकित मुनि,
ऐसौ प्यालौ दयौ उन ऐंन आंठौं जांम कौ।
गगन मगन चित पायौ हैं बिग्यांन बित,
ऐसैं भयौ निपट करतार जी के कांम कौ।
राघो कहै ऐसे रंग लागि गयौ जाकै अंग,
ह्वै गयौ पटल दूरि चक्षनं सूं चांम कौ॥२५०

छपै
चतरौ नागौ निस दिवस, भक्ति करत पन पेम सौं॥
मथुरा मंडल अटन, भक्त धांमन कै दरसन।
दे तन धन घर बांम, कीये गुरदेवहि परसन।
म्रिष्ट-वचन सुठ सील, संत महंतन कौं सेवत।
उत्म धर्म आराध, जुक्ति करि हरि गुन लेवत।
महिमां साध सबै करै, मगन भयो निति नेम सौं।
चतुरौ नागौ निसि दिवस, भक्ति करत पन प्रेम सौं॥२५१

इंदव छंद
बृजभूमि सूं नेह रमै निहचै, चतरौ नग रूप अनूप है नागौ।
सनकादिक भाव चुकै नहि दाव भक्ति की नांव रहै चढ़ियौं सुख स्यंध समागौ।
हरि सार अपार जपै रसनां दिन-राति अखंड रहै लिव लागौ।
राघो कहै घर आदि गह्यौ जिनि, छाड्यौ नहीं अति ही बड़भागौ॥२५२

टीका

इंदव छंद
ग्रेह पधार रहें गुरदेवहि, सेव करै अति साच दिखावै।
रूपवती तिय टैल लगावत, स्वांमि कहै स करौ हु सिखावै।
देखि सनेह र भोग लख्यौ निति, देत बधू घर संपति भावै।
धांम चढाय प्रणाम करी सुख, पाय चले बृजकूं उर चावै॥३८३
गोबिंदचंद प्रभात नवै पुनि, केसव भोग समै नंद ग्रांमैं।
गोवरधन्न प्रियादह ह्वै करि, आत बृंदावन चातुर जांमैं।
पांवन कुण्ड रहे दिन तींन स, भूख सही पय ल्यावत स्यांमैं।
मांगत है जल पात नहि पल, राति कही यह मैं करि कांमैं॥३८४

काम नहीं जल दूध पिवौ भल, ल्यौ बृज मैं प्रभु आइस दीनी।
ये बृज के जन लेव न देत न, तौ बरजै नहि यौं सुनि लीन्ही।
ल्यावत धांमन धांमन सौं फिरि, स्यांम कही परितीतहु चीन्हीं।
जाइ छिपावत हेरहि ल्यावत, बात सबै जन की रसभींनीं ॥३८५

मूल

छपै सोभा सोभूरांम का, भ्रातां की सुनि यौं सबै॥
माधौदास महंत, भक्ति जग सक्ति दिखाई।
आइस सूं संबादि, अग्नि पैं चदरि मगाई।
संतदास सुठ सील, साच सुमरण कौ सागर।
साध सेव करि निपुन, कर्म भ्रम छेके कागर।
भगवत भजन बधांवनै, आलस नांहि कीयौ कबै।
सोभा सोभूरांम का, भ्रातां की सुनियौं सबै ॥२५२
आतमांरांम कन्ह र दयाल, बूड़े बिपुल बिराजहीं॥
रहत सहनता गहर, मिहर गुन सुभ के आगर।
अडिग भजन गोपाल, धारि दुजकुल मै नागर।
संत प्रभू मैं सकल मांनि, उर प्रीति हुलासै।
बसतर भोजन पांन, मांन दे सब आस्वासै।
सिष सुठ सोभूरांम का[1], आप बन्या पुनि पाजहीं।
आत्मांरांम कन्ह र दयाल, बूड़े बिपुल बिराजहीं ॥२५३
वृंदावन बसि बसि कीयौ जिन, जिन जन मन आपणौं॥
सोई सर्ब संत बखांणि, आंणि अंतरगत मन कौं।
सम दम सोधि सरीर, गिरा पूछहु गुरजन कौं।
आचारिज मुनि मिश्र, भटहु हरिबंस ब्यास भणि।
गंगल गदाधर चत्रभुज, अवर संतन सर्बस गिणि।
राघो रटि बिरकत गृही, उर हरि भक्ति उद्यापणौं।
बृंदाबन बसि बसि कीयो जिन, जिन जन मन आपणौं ॥२५४
यौं भक्ति सीर सकृत कौउ, जांनत हित-हरिबंस की॥
राखत चरण प्रधान, आप श्रीराधाजी के।
स्यांमा स्यांम ब्यहार, कुंज मध साधे[2] नीके।

---
१. कौं। २. सोधे।

सेवत महाप्रसाद, सदा ब्रत तप नहीं मांनैं।
बिधि निषेध भ्रम सकल, छाड़ि उत्म धर्म ठांनैं।
राघो ब्यास बिचित्र सुत करनो पालत हंस की।
भक्ति सीर सकृत कोउ, जांनत हितहरिबंस की॥२५५

टीका हरिबंसजी की

इंदव छंद
आत भये तजि धांम भजे जुग, बिप्र भलै हरि आइस दीनी।
तेरि सुता जुग दै हरिबंसहि, नांम कहौ मम बंस अधीनी।
संतन सेव बनै इनकै घर, दुष्ट न ह्वै गति यौं सुनि लीनो।
मांनि गह्यौ ग्रह आप लह्यौ सुख, जाइ कही किम सो रस भींनीं॥३८६
लाल कही मम पूजन धारहु, कुंज बिलास कहौं रस नीकौ।
सो बिसतारत नैन लख्यौ सुख, बाम लयौ पक्षि जीवनि जी कौ।
गांन[1] करै रसपांन बरै उर, ध्यांन धरै सु सदा प्रिया पी कौ।
है गुन बौत सरूप कहै किम, मोद लहै मन और नहीं कौ॥३८७
रीति लहै हितजू कि बड़ौ पट, कृष्ण पछैरू कहै मुखि राधा।
भाव विकट्ट सुभाव न होवत, आप दया करि देत अराधा।
दूरि करे बिधि और निषेधहि, दंपति है उर कै उह साधा।
दैंन सबै सुख दास चरित्रहु, जांनत है उनकै नहि बाधा॥३८८

मूल

छपै
यौं नांव न बिसरै नैंक हूं, हरिबंस गुसांईं हरि ह्रिदै॥
ता सुत ब्यास बिचित्र, बड़ौ परमारथ कीन्हौ।
भरम करम सूं रहत, भक्ति कौ स्वारथ लीन्हौं।
पद गावत पापी हसे, करमिष्टी छिरके कांन।
नांम कबीर रैदास कौं, ब्यास दीयौ तहां मांन।
जन राघो कारनि रांम कै, जन पन तजै न अपनौ ह्रिदै।
यौं नांव न बिसरै नैंक हूं, हरिबंस गुसांईं हरि ह्रिदै॥२५६
ब्यास गुसांईं विमल चित, बांनां सूं अतिसं बिनै॥
चौबीसौं अवतार, अधिक करि साध बिसेखे।
सपतदीप मधि संत, तिते सर्ब गुर करि लेखे।

---

१. ग्यांन।

बन्यौं महत-समाज, तहां नृषि नौं गुन तोरचौ।
नूंपर गुह्यौ[1] निसंक, कांन्ह कै चरन चहौरचौ।
इम राघो रीति बडे़न की, पन कैं तांईं दें थ्रिनैं।
ब्यास गुसांईं बिमलचित, बांनां सूं अतिसै बिनैं॥२५७

टीका ब्यास जू गुसांईं को

इंदव छंद
आत भये ग्रह छाड़ि बृन्दाबन, हेत इसौ रन त्यागत खीजै।
भूप चलावत आप न भावत, सेव किसोरहु मैं मन भीजै।
पाग जरीन रहै सिर चीकन, बांधन द्यौ नाहिं आप बधंजै।
कुंज गये उठि आत भई सुधि, मंजु रह्यौ बंधि क्यूं मम रीझै॥३८९
साधन साथि प्रसाद करै जन, घालत है सु तिया परबीनी।
पै बरताइ थरैं निज डारत, कोप करचौ पति पोषत चीनी।
दूरि करी तब रोइ मरी दिन, तीनहु भूख सही तन खीनी।
कत सबै भरि दंड अबै सब, भूख न देरि करी जु[2] अधीनी॥३९०
ब्याह सुताहि उछाह करचौ, पकवांन सबै बर आप कराये।
संतन यादि करे मति लावत, भाव सहेतहु भोग लगाये।
आत भये जन बेगि बुलावत, मोटन बांधि र कुंज पठाये।
बंसि दई द्विज भक्ति करी चिरि, यां धरि संपट साध बसाये॥३९१
रास रच्यौ सरदै पिय प्यारि ये, रंग बढ्यौ किम जात सुनायौ।
प्यारि लई गति दांमनि-सी दुति, ह्वै चकचौंधि रु मंडल छायौ।
नूपर टूटि गिरचौ[3] मन सोचत, तोरि जनेऊ करचौ उहि भायौ।
कैंत सबैं यह कांम सु आवत, बोझ सह्यौ निति सो फल पायौ॥३९२
भक्तन इष्ट सुन्यौं इक म्हंतहु, आवत पारख कौं जन भीरा।
भूख जनांवत ब्यास सुनावत, आप सुनी झट ल्यावत धीरा।
मांनत नांहि धरी मन संकहु, पात उठे मनु होवत पीरा।
पातरि लेवत सीत दयौ मम, और भजो पग ले द्रिग नीरा॥३९३
तीन भये सुत बांटित है बित. पूजन येकन धन्न धरचौ है।
छाप रु स्यांम धरी बिंदनी इक, रीति निहारि र सौच परचौ है।
येक किसोर लये इक नै बसु, दास किसोर तिलक्क करचौ है।
छाप दई हरिदास सु रास करचौ है, ललितादिक चित्त हरचौ है॥३९४

१. गुह। २. सु। ३. गिह्यौ।

मूल

छपै **दास गदाधर गिरधरन, गाये ग्यांनी बिसद गिर ॥**
लाल बिहारी स्यांम, सुमरि निसबासुर राजी।
पूजा प्रेम पियास, भक्ति सुख सागर सांजी।
संतन सेती हेत, देत तन मन धन सरबस।
उर अंतर अति गूझ, बदन बरनत निरमल जस।
इकतार ऐक हरि-भक्ति कौ, और नवावत नांहि सिर।
दास गदाधर गिरधरन, गाये ग्यांनी बिसद गिर ॥२५८

गदाधरदासजी की टीका

इंदव छंद बाग बुरहानपुरें ढिग बैठिक, त्यागि घरै हरि सूं अनुरागे।
जात नहीं पुर लोग निहौरत, मांनि लयौ सुख और न पागे।
मेह भयौ तन भीजि गये कफ, स्यांम कहैन स आय न लागे।
साहि कही प्रभु ल्याव उन्है इत, मन्दिर दे करवाय सभागे ॥३६५
ल्यावत नींठि कही हरि आइस, मन्दिर ऊँच कराय उदारै।
लाल बिहारिहु स्यांम सथापन, रूप मनौहर आप निहारै।
संतन सेवत प्रीति लगाय र, अंन न राखत पांन सवारै।
सामगरी कुछि राखि रसोयहु, आत भये जन ज्यांय पियारै ॥३६६
दास कहै प्रभु लोग[1] रख्यौ कछु, काढ़ करौ परभातिहि आवै।
सत जिमाइ दये करि भोजन, पाय सुखी सब वै जस गावै।
भूख लगी हरि जांम गई मुरि, कोप करै हम गैल छुटावै।
आय धरे सत दो रुपया किन, लै सिरि मारि कही गुर तावै ॥३६७
साह डरयौ मति मो परि कोपत, भक्त खुसी करि बात जनाई।
होइ मगन्न जितौ मन लागत, देत भयौ जन प्रीति बधाई।
जात भये मथुरा दिन रै करि, पीत रसै बृज माधुरताई।
लाल लड़ावत साध रिझावत, गाय कहे गुन बुधि लगाई ॥३६८

मूल

छपै **यौं हूवो हरिबंस प्रताप तैं, चहु दिसि परगट चतुरभुज ॥**
भिन भिन भक्ति प्रताप, भक्तबछल जस गायौ।

---

१. भोग।

खीर नीर निखारि, सुगम करि अब कौं पायौ।
अनन्य धर्म के कबित, अँन अमृत के प्याले।
मुरलीधर की छाप, छिपै नहीं अबत चाले।
जन राघव बल भजन के, गौंड देस कियौ धर्म-धुज।
यौं हूवो हरिबंस प्रताप तें, चहुं दिसि परगट चतुरभुज ॥२५६

टीका

इंदव छंद
गौंडहु देस भगत्ति नहीं अणु, माणस मारि र मात चढावै।
जाइ जहां[1] उन मंत्र सुनावत, दे सुपनौं सब गांव जगावै।
धाय करौ तुम चतुरभुजें गुर, नां करिहौ मरिहौ पुर आवें।
सिष्ष किये धरि स्वांग जिये उन, पाव लिये बहुतें सुख पावै ॥३६६
भोग लगावत साध लड़ावत, भागवतं कहि भक्ति बधावै।
लै धन चोर चल्यौ उन संगहि, आत धनी जन मैं छिपि जावै।
दक्षत दूसर जोनि भई सुनि, स्वांमिन पैं डरि कांन फुकावै।
आंनि गह्यौ कहि मैं न लयौ अब, हाथि दई दिबि नांहीं जरावै ॥४००
भूपति झूठ लखी कहि मारहु, संतन आय कलंक दयौ है।
मारन जात भये न सकै सहि, नीर बहै द्रिग कैत लयौ है।
भूप कहै तुम साच तजौ जिन[2], स्वांमिन कौ परताप भयौ है।
राज सुनी महिमां सु हुवो सिष, पेम-सन्यौ उर भीजि गयौ है ॥४०१
खेत पक्यौ लखि साध सु तोरत, सूकि मुखै रखवार पुकारै।
नांव कह्यौ सुनियौ सु हमारहि, आप सुनी जब होत सुखारे।
लै परसाद गये जन सांम्हन, मो अपनाइ र आज उधारे।
धांम सु भोजन भांतिन भांतिन, ज्यांत भये चरचा सु उचारे ॥४०२

मूल

छपै
लग्यौ[3] लटेरा लटिकि कैं, केसौ केवल रांम सौं॥
कबित सवैईया गीत, भाखि भगवंत रिझायौ।
सुरसुरानन्द परताप, आप हरि हिरदै आयौ।
जथा-जोगि जस गाय, लोक परलोक सुधारयौ।
परसरांम-सुत सरस, सकल घट ब्रह्म बिचारयौ।

---
१. तहां। २. जन। ३. लगौं, लयौ।

राति दिवस राघौ कहै, धरम न चूकौ धांम सूं।
लग्यौ लटेरा लटिकि कैं, केसौ केवल रांम सूं ॥२६०
गोपी कलि मनु अवतरी, प्रमानंद भयौ प्रेम पर ॥
बालि अवसथा तीन, गोपि गुण परगट गाये।
नहीं अचम्भा कोइ, आदि को सखा सुहाये।
राति दिवस सब रोम उठै, जल बहै द्रिगन तैं।
कृष्ण सोभि तन गलित गिरा, गद-गद सुमगन तैं।
संग्या सारंगी कहौ[1], सुनत कांन आवे सकर।
गोपि कलि मनु अवतरी, प्रमानंद भयो प्रेम पर ॥२६१

मनहर छंद
प्रेम कौ प्रवाह सुण[2] सागर गिरा कौ पुंज,
चोज कौं चतुर प्रमानंद प्रबीन है।
गावत गुनांनबाद गोबिंद गोपाल हरि,
रांम नांम हिरदै धरि भयौ लिवलीन है।
बीनती बिकट नट नृति करै राति-दिन,
नाचत निराट दीनांनाथ आगैं दीन है।
राघौ कहै बिरहै मिलाप सूं मिलाप कीन्हौं,
बिधनां सूं बेध्यौ प्रांन जैसे जल मींन है ॥२६२

छपै
सुणत सूर की काबि कबि, सिर धुनै र धनि धनि करै ॥
रांमांइण भागवत, भक्ति दसधा सुणि सारी।
परसताव को पुंज, चोज चुणि काढ़ी न्यारी।
सकल पराकृत संसकृत, सिंध सम मथ्यौ सवायौ।
करूणां प्रेम बिवोग, आदि अनुक्रम सौं गायौ।
बालमीक-कृत ब्यास-कृत, जन राघो पद पटतर धरै।
सुनत सूर की काबि कबि, सिर धुनै र धनि धनि करै ॥२६३

इंदव छंद
सागर सूर भई सलिता बुधि, बोध निरोध लीयो जिन पांणी।
प्रेम कौ प्रेम बढ्यौ उर अन्तर, यौं[3] उभली मुख ह्वै अति बाणी।
जैसें सुण्यौ समयौ तहां तैसौई, सोई निबाह कीयौ जहां जांणी।
राघो कहै सुरसति बर बारि ज्यूं, यौं सबं चोज सबद मैं आंणी ॥२६४

---

१. कहै। २. गुण। ३. र्खौं।

छपै बिलमंगल राघो कहै, स्यांम कृपा को परबिदत ॥
उक्ति जुक्ति पुनि चोज, कबित कीये करूणांमृत ।
संत जनन आधार उर, जहां रावल सुभ कृत ।
प्रभु कर स्वैकर देई, छाय धरि कैं छुटवाये ।
सबल गिणौंगौं तबैं, जबैं हिरदा तैं जाये ।
चिंतामनि उपदेस करि, गुर सोमगिरी धारे सदित ।
बिलमंगल राघो कहै, स्यांम कृपा को परबिदत ॥२६५

टीका

इंदव ब्राह्मन बुद्ध रहै कृसनां-तटि, पाइ चिंतामनि बुद्धि बही है ।
छंद लाज तजी हिय राज भयौ उस, रैंनि दिनैं उत जात सही है ।
तात कनागत साधि रह्यौ चित, सेस रहैं दिन चालत ही है ।
नीर चढ्यौ सलिता निसि नाव न, हेत घणौ दुःख पाइ कही है ॥४०३
तार परा नहि देह रहै परि, मित्र मिलै यह बात भली है ।
जकि परचौ कछू नांहि डर्‌यौ मन, बाहि कर्‌यौ कित आत[1] चली है ।
पार न पावत डूबत जावत, आतमड़ा चढि नांवड़ली है ।
जाइ लग्यौ तटि पाय चल्यौ झटि, पाट जड़े लखि आँखि खुली है ॥४०४
सांप लटक्कि रह्यौ लखि लाव सूं, मूंठिनि सू छति जाइ चढ्यौ जू ।
ऊपर के[2] पट लागि रहे फिरि, कूदि परचौ ग्रत मांहि गड्यौ जू ।
जागि उठी करि दीपक देखत, है बिलमंगल नांहि पड्यौ जू ।
नीर नहावत चीर उठावत, हा किम आवत तोइ बढ्यौ जू ॥४०५
नाव पठावत लाव भुलावत, सो मन मैं हम जांनि लई है ।
चालि दिखाइ भई कछु स्वांनिहि, देखि भवंगम आहि दई है ।
ज्यूं मन मांस र चांम लग्यौ मम, यौं हरि लाइ सयांनपई है ।
प्रात भयें हम तौ भजि हैं प्रभु, तो मन की अब तू जनई है ॥४०६
नैंन खुले हरि रूपहि चाहत, रंग उमंग सु अंग न मावै ।
बीन बजावत स्यांम रिझावत, कोटि बिषै सुख चित्त न आवै ।
बीति गई निसि ओउ भये रसि, मारग आपन आपन जावै ।
सोमगिरी अभिरांम करे गुर, कौंन कहै उपमां उर भावै ॥ ४०७

१. आंन । २. को ।

येक वरस्स रहे रस-सागर, लीन भये सु सिलोक पढे हैं।
जात बृंदाबन देखन कूं मन, मारग मैं इक ठौर रढे हैं।
सोर सुन्यौ बड़ आप गये सर, न्हात तिया लखि नैंन गड़े हैं।
ऊठि चली वह लार लगे यह, खैर धसी घर द्वार खड़े है ॥४०८
आत भयो पति देखि बड़े जन, क्यूं र खड़े तिरिया सु जनाई।
आप कही घर पांवन कीजिय, लै चरणांमृत यौं मन आई।
मांहि गये मन आरति मेटन, गांवन रीति जु देत चिताई।
अंग बनाइ कही तिय सुं पति, संत रिझाइ हरी सुखदाई ॥४०९
अंग बनाइ चली कर थारहु, ऊँच अटा जित है अनुरागी।
झंझन जाइ खरी कर जोरि रु, देखत ही मति नूंन दु भागी।
सूइ मंगावत वै फिरि ल्यावत, फेरि[1] दई अखियां यह लागी।
आंनि कही पति सूँ सब बातन, जाइ परचौ पगि सो बड़भागी ॥४१०
पाप करचौ हम संत दुखावत, हौ तुम संत हमैं अपराधी।
ब्याज रहौ हम सेव करैं तुम, सेव करी सबही बिधि साधी।
ऊठि चले द्विग भूत छुड़ाइ र, खेम भयौ उर आंखि न लाधी।
जाइ बसे बनि भूख लगी पनि, आप जिमावत जांनि अराधी ॥४११
हाथ गहाइ चले तर कै तरि, जोर छुड़ात न छोड़त नीकौ।
जोर करै नहि वोउ हरै कर, लेत छुड़ाइ न छूटत ही कौ।
यौं करि आइ लयौ सु बृंदाबन, पीतर सौं जग लागत फीकौ।
लाल बिहारिहु आइ मिले, मुरली बजई यह भावत जी कौ ॥४११
नैंन खुले रवि ऊगत अंबुज, देखि सरूपहि चाहि भई है।
बंसि सुनि रस मिष्ट सुरैं मद, कांन भरचौ मुख भास लई है।
जांनि प्रताप चितामनि कौ मन, जैति[2] चिंतामनि आदि दई है।
ग्रंथ करचौ करुणांमृत पंथज, जुगल्ल कह्यौ रसरासि-मई है ॥४१२
लाल मिले बन मांहि सुनी चलि, आत चिंतामनि हेत जनायौ।
मांन दयो उठि दूध रु भातहि, देत भयो हरि ताहि पठायौ।
लेत नहीं तुम कौं पठयौ प्रभु, नांथ हमैं कर दे तब भायौ।
पात नहीं जुग देखत कौतुग, स्यांम जबैं इक और खिनायौ[3] ॥४१३

इति नींबादति संप्रदा संपूरण

---

१. फौरि। २. जौति। ३. सिनायौ।

अथ षट-दरसन बरनन

प्रथम सन्यासी बरनन

छपै   थम दत्तात्रे मत धारि उर, संक्राचार्य अति दिये ॥
तिनकै सिष भये चतुर, सरूपा पद्माचारय।
निरा टोटका सुमरि, गाइ पुनि[1] उदरा आरय।
इनतै है दस नांम, तीरथ आश्रम बन आरन।
सागर परबत गिरी, सरस्वती भारथ कारन।
पुरी जती अर जोति गणि, जन राघव कतहु न छिपे।
दत्तात्रे मत धारि उर, संक्राचार्य अति दिये ॥२६६

इंदव छंद   मोह न द्रोह मम्मत न माया रम्मत सुभाया,
जु असे भये दत्त-देव दिगंबर।
अजोनी असंग नहीं तन भंगन,
प्रांन तरंग जु सोभत है तप तेज कौ संवर।
लीयो तत छांणि महाजन जांणि,
धाये परवांणि जु धारे पचीस गुरू धर अंबर।
राघो कहै जद आइ मिले जदि,
यौं बदि छाड़ि है ग्यांन कयंबर ॥२६७

छपै   उतम धर्म सथापनैं, संक्राचारय परगटे ॥
पाखंडी अनीसुरी, अरू जैंन कुतरकी।
वोधमती उद-सृंखली, बिमुखी नर नरकी।
अमरादिक सर्व जीति[2] कैं, सति-मारग लाये।
ईस्वर कौ औतार जांनि हरि जन हरखाये।
राघो भक्ति उदै किरणि, अग्यांनी तम भ्रम घटे।
उतम धरम सथापनैं, संक्राचारय परगटे ॥२६८

इंदव छंद   रुद्र को रूप अनूप महा जनम्यौं, गुजरात मैं संकराचारिय।
दत्त सूं मिलि कैं मत्त ले इत्त नौं, नृप प्रमोधि कीये कुलि आरय।
जैंन सौं जीते हैं बैंन बिजै भइ, रांम भगत्ति थपी बिसतारय।
राघो कहै तत तारिग मंत्र सूं, दूरि कीयौ सब कौ भ्रम भारय ॥२६९

---

१. युति उदरी। २. जातिकैं।

टीका संकराचार्य जू की

रांम समुख्य किये विमुखी नर, लै जग मैं प्रभुता बिसतारी।
जैंन-जती सब फैलि रहे जग, हाथि न ग्रावत वात बिचारी।
देह तजी नृप कै तन पैसत, ग्रंथ दयौ करि मोह निवारी।
सिष्यन सूं कही देह ग्रवेसहि, देखि सुंनावहु ग्रात तयारी ॥४१४

जांनि ग्रवेसहि सिख्य गये महि, मोहमुदग्गर ग्रंथ उचारयौ।
कांन परयौ तन त्यागि बरे निज, दास नये ग्रपनौ पन पारयौ।
जीति जती नृप पैं चढ़ि जावत, बैठि कनै च जमायक डारयौ।
नीर चढ्यौ वहु नाव दिखावत, बेगि चढ़ौ नहीं बूड़त धारयौ ॥४१५

संकर कैत चढाइ जती इन, भूप चढ़ात गिरे स मरे हैं।
पाइ परयौ नृप होत खुसी मन, जौउ कहे भ्रम सोउ भरे हैं।
भक्ति सथापि र ज्ञांन प्रकासत, तदै निरबेद हि भाव भरे हैं।
रीति भली करि साध लही उर, हेत हरी गुन रूप करे हैं ॥४१६

मूल

छप्पै **उतकष्ट-धर्म्म भागवत मैं, श्रीधर नै बरनन करयौ ॥**
ग्रज्ञांनी तृय कांड मिले, सब कोई भाखै।
ज्ञांनी ग्रर करमिष्ट, ग्ररथ को ग्रनरथ दाखै।
राखी भक्ति प्रधांन, करी टीका बिसतीरन।
ग्रगम निगम ग्रबिरूद्ध, बहुरि भारत की सीरन।
किरपा परमांनंद की, माधोजी ऊपरि धरयौ।
उतकष्ट-धरम भागवत मै, श्रीधर नै बरनन करयौ ॥२७०

श्रीधरजू की टीका

इंदव छंद पंडित ब्ग्राज रहे सु बड़े बड़, भागवतं करि टिप्पण रीजै।
होत बिचार पुरी हु बनारस, जो सबकै मन भाइ लिखीजै।
तो परमांन करै बिंद्र माधव, बात भली धरि मंदिर दीजे।
जाइ धरे हरि हाथन सूं करि, दै सरबोपर चालत धीजे ॥४१७

मूल

छप्पै **ये भक्त भागवत धरम रत, इते सन्यासी सर्व सिरं ॥**
रांमचंद्रिका सृष्ट, १दमोदर तीरथ गाई।
२चितसुख टीका करी, भक्ति प्रधांन दिखाई।

३नरस्यंघ आरन चंद्रोदय, हरि भक्ति वखांनी।
४माधव ५मदसूदन-सरस्वती गीता गांनी।
६जगदानंद ७प्रबोधानंद, ८रांमभद्र भवजल तिरे।
ये भक्त भागवत धरम रत, इते सन्यासी सब सिरै ॥२७१

ये सरल सिरोमनि सुधर्मी, इते सन्यासी भक्ति पखि ॥
माधौ मोह बबेक कीयो, भिन भिन करि न्यारौ।
मधुसूदनसरस्वती, मांनं मद तज्यौ पसारौ।
प्रबोधानन्द रत ब्रह्म, रामभद्र रांम रच्यौ है।
जगदानंद जगदीस भजि, जे जनम मरणादि बच्यौ है।
श्रीधर बिष्णपुरी बिचित्र, जन राघौ अन तजि दुगध भखि।
ये सरल सिरोमनि सुधरमी, इते सन्यासी भगति पखि ॥२७२

इन मन वच क्रम राघौ कहै, परगट परमातम भजे ॥
१नृस्यंघभारती ग्यांन, ध्यांन धुंनि भलौ विचारी।
२मुकंदभारथी भक्ति करी, बड़ परचाधारी।
है ३सुमेरगिर साच, सील मैं वाहरवांनी[1]।
४प्रमानंद गिर गिरा, संपूर्ण पूरौ ग्यांनी।
५रामाश्रम जग-जोति ६बन, मन जीयो माया लजे।
इन मन बच क्रम राघौ कहै, परगट परमातम भजे ॥२७३

॥ इति सन्यासी दरसन ॥

अथ जोगी दरसन

मनहर छंद

ॐकारे आदिनाथ उदैनाथ उतपति,
ऊंमांपति स्यंभू सति तन मन जित है।
संतनाथ बिरंचि संतोषनाथ बिष्णुजी,
जगंनाथ गणपति गिरा कौ दाता नित है।
अचल अचंभेनाथ मगन मछिद्रनाथ,
गोरख अनंत ग्यांन मूरति सु बित है।
राघो रक्षपाल नऊं नाथ रटि राति दिन,
जिनकौ अजीत अविनासी मधि चित है ॥२७४

---

१. बारहवांनी।

छपै छंद अब १आदिनाथ २मांछिद्र (नाथ), ३गोरख ४चरपढ़[1] नाथय।
५धर्मनाथ ६बुद्धिनाथ, ७सिद्धजी कंथड़ ८साथय।
९बिंदनाथ १चौरंग, २जलंध्री ३सतीकरणेरी।
४भडंग ५मींडकीपाव, ६धूँधलीमल धर फेरी।
७घोड़ाचोली ८बानगुदाई, सबकौं नाऊं माथ।
पहल कबित सिध अष्ट है, प्रथम जांनि नव नाथ ॥२७५

१चूणकर २नेतीनाथ, ३बिप्र ४हाली ५हरताली।
६बालनाथ ७औघड़, ८आई ९नरवै कौं न्हाली।
१०सुरतिनाथ ११भरथरी, १२गोपीचंद १३आजू १४बाजू।
१५कान्हिपाव १६अजैपाल, कियो सब काजू।
१७सिधगरीब १८देवलबैराग, १९चत्रनाथ २०प्रथीनाथ अब।
२१सुकलहंस २२रावल २३पगल, राघव के सिरताज सब ॥२७६

महादेव मन जीत तैं, नाथ मछिंदर अवतरे॥
अष्टांग जोग अधपत्ति, प्रथम जम-नियमन साधे।
आसन प्राणांयांम प्रत्याहार, धारणा ध्यांन समाधि।
षष्टचक्र वेधिया, अष्ट कुंभक सौ कीया।
मुद्रा दसम लगाइ, बंध त्रिय ता मधि दीया।
भक्ति सहित हठजोग करि, जन राघौ यौं निसतरे।
महादेव मन जीत तैं, नाथ मछिंदर अवतरे ॥२७७

यम जोग जलंध्री को सिरै, गुफा कूप करि मांनियौ॥
दक्षा लेणै काज, मात गोपीचंद मेल्यौ।
गुर कही बिप्र जै साखि, समझि बिन कूपहि ठेल्यौ।
उहां ही लगी समाधि, अलख अभिअंतर ध्यायो।
सपत धात फूतला भसम करि बाहरे आयौ।
जन राघौ गोपीचन्द कौं, अमर कीयो सिख रांनियौ।
यम जोग जलध्री कौ सिरै, गुफा कूप करि मांनियौं ॥२७८

संसार अध्व निसतारनै, करनधार गोरख-जती॥
भूप भरथरी आदि, कोड़ि तेती तीउ धारा।
सबद श्रवण जा धर्यौ, प्रजा का अंत न पारा।

---

१. चरपट।

परमारथ कै काज, आप ग्यारह बर बीका।
सिध कीये पाषांण, तीर गोदार नदी का।
नाद बजाये बिद्रपुर, परचा दीया बरकती।
ससार अबध निसतारनै, करनधार गोरख-जती ॥२७९

इंदव छंद इंद ज्यूं जिंद की जीवनि गोरख ग्यांन-घटा वरख्यौ घट धारी।
नृप निन्याणवै कोड़ि कीये सिध, आतम[1] और अनंतन तारी।
बिचरै तिहुंलोक नहीं कहूं रोक हो, माया कहा बपुरी पचिहारी।
स्वादन सप्रस यौं रह्यौ अपरस, राघो कहै मनसा मन जारी ॥२८०

छपै छंद धर्म सील सत राख तें, चौरंगी कारिज सरे॥
अदभुत रूप निहारि, दौर कर मांई पकरयौ।
दांवण लीयो फारि, जोरि करि बाहरि निकरयौ।
रांणी करी पुकार, पुत्र अच्छ्या ही जाया।
राजा मन पछिताइ, हाथ पग दूरि कराया।
राघो प्रगटे परमगुर, कर पद ज्यूं के त्यूं करे।
धर्म सील सत राख तें, चौरंगी कारिज सरे ॥२८१
धुनि ध्यांन सहित मल धूंधली, पुर पट्टण परबत रहे॥
आप पासि इक सिष, सु तौ अति आग्याकारी।
भिक्षा मांगन काज, फिरत सो नगरी सारी।
करै मसकरी लोग, खेचरी भीख न पावै।
माथै लकरी ढ़ोइ, बेचि रोटी करि ल्यावै।
राघो चांदी बूझि सिर, पट्टण सव दट्टण कहे।
धुनि ध्यांन सहित मल धुंधली, पुर पट्टण प्रबत रहे ॥२८२
भोगराज भ्रम जांनिकैं, भक्ति करि है भरथरी॥
तर तीबर-बैराग, त्रिलोकी त्रिणकर लेखी।
गरक भजन कै मांहि, ग्यान सम आत्म देखी।
कंचन आधारित तिजारै रहि करि कीया।
सूली देणै लग्यां, हरचा अंकूर सु लीया।
गुर गोरख किरपा करी, अमर जहाँ लौ धरत री।
भोगराज भ्रम जांनि कैं, भक्ति करी है भरथरी ॥२८३

---

१. आतमां।

इंदव छंद भर भार तज्यौ भ्रथरी सगरौ, अगरौ पिछरौ बनहीं कछु सांसौ।
गह्यौ अनुराग दुती न सभाग जु, क्षीन सरीर स लोही न मासौ।
मनसा मन जोति करी हरि प्रीति, बैराग की रीति सु मांगि भिक्षा करही कीयौ कांसौ
राघो कहै गुर गोरख सुं मिलि, यौं कीयों माया मोह कौ नासौ ॥२८४

छपै गोपीचंद मा ग्यान सूं, त्यागौ देस बंगाल ॥
रांणी सोला-सत्त, बहुरि बारा-सै कंन्या।
हय गय नर कुल बंध, जात कापै सो गंन्या।
हीरा कंचन लाल, जड़ित मांणिक अर मोती।
सिंघासहनं हर्म्यादि दिपत, बोलत धुनि सोती।
पाव जलंध्री परस तैं, राघो जांनि जंजाल।
गोपीचंद मा ग्यांन सूँ, त्यागौ देस बंगाल ॥२८५

मनहर छंद मात देखि गात अश्रु गात उर फाटि रोइ,
सूरति सहारी न परत गोपीचंद को।
आकुत करत जल बूंद परी पीठ परि,
मात आई रोवती निजरि वा नरचंद[1] की।
हाइ हाइ करत हजूरि गयौ हाथ जोरि,
कौंन चूक मात मेरी बात कहौ ज्यंद की।
बात यह तात तेरौ गात अैसौ हौ तौ सुनि,
राघो कहै रांम बिन देही भई गंद्द की ॥२८६

छपै छंद चरपट कै चरचा रहै, येक निरंजन नाथ की ॥
अलख आदि अनादि भजत, सौ सुख के[2] आलै।
कांम क्रोध अर लोभ, मोह दुबध्या निरवालै।
जत सत ग्यांन बबेक, जोग समाधि परांइन।
कुंभक अष्ट ही साधि, भिदिया षट-चकरांइन।
गुर गोरख सिर धारिकैं, सभा सुधारी साध की।
चरपट कै चरचा रहै, येक निरंजन नाथ की ॥२८७

इंदव छंद ग्यांन कौ पुंज मिल्यौ गुर गोरख, यौं प्रिथीनाथ त्रिलोकी तिरे हैं।
अैंड अकब्बर सूं भइ आगरैं, दे अजमत्ति यौं साहि डरे हैं।

---
१. निरंद की। २. को।

सोत सिरै भभक्यौ ब्रह्म-वांणी कौ, ग्रंथ विधांत अनेक करे हैं।
राघौ कहै रत राति द्यौ राम सौं, संगति और घणे उधरे हैं ॥२८८

इति जोगी दरसण

अथ जंगम दरसन

छपै　यम जंगम दरसन गोपगुर, तिन संग्या वरनन करूं ॥
छंद　सदानंद खुस्याल, लिंग सिधपाल देवरू।
जल का तूंबा दूध कीया, यह जांनि भेवरू।
सील मूल गंग लिंग, सील के भये कन्ह रे।
मूलहु के देवरू लिंगावति लिंग चिन्ह रे।
गंगहु के भाठी, स नखा नारी मठ बांध्यौ।
गोदावरि बद्रिका, बोखी जोसी आराध्यौ।
लिंगेसुर कांमेसुरा, राघो सबकूं उर धरूं।
यम जंगम दरसन गोपिगुर, तिन संग्या बरनन करूं ॥२८९

इति जंगम दरसन

अथ समदाई बरनन

छपै　प्रेम मुक्ष कलिजुग बिषै, संत सकल यह जांन है ॥
छंद　ब्यास ज्यानकी-हरन, नृपति कै श्रवन सुनायौ।
चढ्यो बीजल[1] खड़ग, उदधि कै माहि चलायौ।
लीला[2] मनहर होइ, हिरनाकुस फाड्यौ।
दूजें दसरथ भयौ रांम, चलतै उर फाट्यौ।
बाम स्यांम सुनियें बंधेता, छिन दीये प्रांन है।
प्रेम मुक्ष कलिजुग बिषै, साध सकल यह जांन है ॥२९०

टीका-भक्तदास भूप नांम कुल सेष[3] की

इंदव　प्रेम बड़ौ कलि साखि कहै जन, वैहु असाध सु भक्ति न भावै।
छंद　ब्राह्मनां कें दुख पुत्र पठायत, कैसु दयो बिन जांनि घुमावै ॥४१८

---

१. बाज लै। २. लीला में नरहरि। ३. सेखर।

भूप हुतौ इक रांम ततप्पर, रांम सुनै गुन है उर भावै।
ब्यास वडौ दै ताहर नौ नृप, नाहि कहै उन जाणि मु भावै ॥

काढि लयो खग मारन ऊठत, ागर बाज दयो सुभ्र वेसा।
रावन मारि बिहाल करौं खल, सीत ह्रै ल्याइ धरौ द्दग पेंसा।
रांम र ज्यांनकि आय मिले कहि, नीचहि मारि पठ्यौ दिबि देसा।
सोच गयो सुनि खेम भयो मनि, रूप निहारन फेरि निवेसा[1] ॥४१६

लीला अनुकरन तथा रनवंतबाई की टीका

इंदव छंद
नीलचलं सु भयो अनुकरन हु, ह्वै नरस्यंघ हिनांकुस मारचौ।
दोष कहै जन कैत अवेसहि, सौ दसरत्थ करचौ पन पारचौ।
बांम हुंती इक स्यांम लगी मति, आप सुन्यौ न कह्यौ सुत धारचौ।
दांम जसोमति वांधि दये सुनि, प्रांन तज्यौ मनु ऊपरि वारचौ ।।४२०

छपै छंद
प्रसाद अवगि इक भूप नैं, सू हस्त काटि पठयो चरन ॥टे०
टेर सुनी सिलपिले, प्रीति लगी प्रभूजी आयो।
संत रखे दिन च्यारि, मात सुत कूं बिष पायो।
क मा केरौ खीच लयौ, हरि आइ सवारे।
साह श्रीधर बचे, धनुष धर दै रखबारे।
रघवा जै जै जगत गुर, भक्तबछल असरन-सरनं।
प्रसाद अवगि इक भूपनैं, सू हस्त काटि पठयो चरन ॥२६१

पुरषोतमपुरबासी राजा की टीका

इंदव छंद
जाजि[2] अवज्ञ सु भूप प्रसाद हि, हाथ कटावत यौं जू भई है।
चौपरि खेलत हौ हरि भुक्तहु[3], दै जन लै कर बांम छई है[4]।
जात रिसाइ र लै परसादहि, भूप गयो गृह देखि नई है।
पात नहीं अन काटि डरौ इन, पंडित बोलि र बूझि लई है ।।४२१
हाथ सु काटत कौंन अबैं मम, पूछत है सचिवैं दुख को जू।
भूत डरावत मोहि झरोखन, दै कर सौर करै निसि सो जू।
मैं ढिग सोवत आपन गौवत, पांनिहि दूरि करौ न डरो जू।
भूप कहै भल चौकस राखत, ऊंघ तज[5] नृप काढ़ि करो जू ।।४२२
काटि डरचौ कर सो पछितावत, भूप कही वृत यौंह बिगारी।
भेज दये जगनाथ पुजारिन, हाथहि ल्याइ बुवो गुलक्यारी।

---

१. जिवेसा। २. जानि। ३. भक्तिहु। ४. छुई है। ५. बिज़ा।

दौरि गये नृप सांम्हन आवत, पांनि भयौ फिरि भौ सुख भारी ।
दोनुं प्रसाद भयौ कर को चढि, है निति रांम सुगंध पियारी ।।४२३

श्री करमाबाई को टीका

ही करमां इक बांम भली, खिचरी बिन रीतिहि भोग लगावै ।
भौजन श्री जगनाथ करै निति, भोग जिते तिन मैं वह भावै ।
संत गयौ इक सोच करै लखि, स्वास भरै र अचार सिखावै ।
साधत बेर लगी पट खोलत, खीच ग्यौ[1] मुख हाथ दिखावै ।।४२४
साच कहौ प्रभु यौं कत पावत, चित्त भमैं हम देखि नई है ।
है करमां मम खीच जिमावत, ह्वै[2] निति जावत प्रीति लई है ।
साध गयौ सु अचार सिखायहु, मो मत और न जांनि भई है ।
नाथ कहै जन सूं वहि साधहु, जाइ कही फिरि मांनि गई है ।।४२५

सिलपिल्ले प्रभु को भक्त उभैबाई---तिनकौ टीका

सिल्लपिले जुग बांम भगत्ति सु, भूप सुता इक है जमिदारै ।
सेव करै गुर बै ढिग वैठत, पूजन द्यौ हम कों[3] सुकुमारै ।
टूक दये सिल नांव कह्यौ वह, हेत लगात करै भव पारै ।
सेव करै अनुराग बढ्यौ अति, रीति भली यहैं जग सारै ।।४२६
पूरब बात कही मिलवां जुग, रीति अबै सुनि लेहु जुदी है ।
आत उभै जमिदार सुता उन, बैर लुट्यौ पुर आइ मुदी है ।
पूजन जात भयो दुख पावत, खात नहीं कुछ जाई गुदी है ।
सै समझावत वाहि न भावत, जा करि ल्यावहु आत सुदी है ।।४२७
गांव गई वह भ्रात बड़ौ जित, हौत सभा मधि बात जनाई ।
लै अपने इक ठौर बिराजत, बोलि सु आवत प्रीति बसाई ।
लाल भये दग फाटत है उर, पीर पुकार कही तन जाई ।
आइ लगे उर दूरि गयो दुख, लै घर आवत अंग न माई ।।४२८
बात सुनौं नृप भक्ति सुता अब, नांहि बिषै रति पूजन लागी ।
साखत कै घर ब्याहि दई उह, लेनहि आवत या प्रभु रागी ।
संगि दई करि रंगि छई हरि, नांहि सखि ढिग पै लहु त्यागी ।
आत कनैं पति चाहत है रति, बोलि कही जु बिथा मम पागी ।।४२९

---

१. लग्यौ । २. ह्वां । ३. कं ।

दें हम कौं कहि कौन बिथा उहि, बेगि इलाज करै सुख कीजै।
चाहत हौ सुख भक्ति करो मुख, भक्ति बिनां मम देह न छीजै।
क्रोध भयो मन मांहि बिचारि, पिटारिहु मैं कछ दूरि करीजै।
वैह करी मुसि नोर धरी तन, आगि बरी मन मैं बहु खीजै ॥४३०

त्यागो दयौ जल अंनु खुसी हुंन, चाहत खुसी नहि ह्वै सब लीयौ।
आइ लयो पुर बात कही धुर, क्षीन लख्यौ तन क्यूं हठ कीयौ।
सास कहैं सब नांहि चहैं अब, बात सुहात न कंपत हीयौ।
कैस करै तब पाइ परैं कहि, ल्याइ धरैं बह ह्वै तब जोयौ ॥४३१

आत भये उहि ठौर परी लखि, नीर बहै द्रग ऊंच पुकारी।
स्यांम सुन्यौ धुर भक्तन कै बसि, आइ लगै उर सैत पिटारी।
सास धणी जन देखि भये खुसि, वादि गए दिन आपन धारी।
भक्त करे सब सेवत संतन, भाग बड़े घर मैं अस नारी ॥४३२

भक्तन हित सुत विष दीयौ, येहु उभै बाई

संतन कै हित झैर दयो सुत, बांम उभै यह बात जितावै।
भक्त भलौ नृप आन धणे जन, आइ रहे इक म्हंत सुभावैं।
ऊठत है निति जांन न दे नृप, बीति गयो व्रष भोर खिनांवै।
टूटत आस लख्यौ तन छूटत, बूझत है तिय बात जनांवैं ॥४३३

भूप न जीवहि झैर दयो सुत, साध सुं तंतर क्यूं करि राखैं।
भौर भयें विन रोई उठी तिय, रावल के जन संतन भाखैं।
खौलि दयी कटि मांहि गये झटि, बाल पिख्यौ वप नीलक दाखैं।
बूझत भूपति या कहि साचहि, चालत हे हमरै अभिलाखै ॥४३४

रोइ उठें सुनि महंत न बोलत, भक्तिहु की कछु रीति नियारी।
जाति न पाति बिचार कहा रस, सागर लीन भये सुखकारी।
गाय हरी गुन साखि कही जन, बाल जिवाई र ठौर सुधारी।
सीख दई सब साधन कौं र, ह्रियें वह सो जन प्रीति पियारी ॥४३५

दूसर बात सुनौं मन लाइ र, जीवत लौं सतसंग करीजै।
भूप सुता हरि-भक्त[1] दई घर, साख तकै जन नांव न लीजै।
सीत पल्यौं तन रूपहि ले द्रग, जीभ चरणांमृत स्वादहि भीजै।
सौ अकुलाइ रह्यौ नहि जाइ, वसाइ नहीं सुत कौं विष दीजै ॥४३६

---

१. भक्ति।

साध पधारि रहे पुर मैं तब, चेरि कही सुत कौं बिष दीयौ।
छूटि गयो तन रोइ उठी पन, आइ परे सब फाटत हीयौ।
जीबन को सु उपाइ कहै तिय, जोबन[1] आत पिता मम कीयौ।
सो करि हैं घरि संतन ल्यावहु, संत किसे सखि नांम सु लीयौ ॥४३७

संगि लये सब कै न सिखांबत, देखि परौ धर पाव गहीजै।
रीत करी वह नीर बहै द्रग, धांम पधारि रु पावन कीजै।
साध चले चलि चेरि जनावत, पौरि रही दुरि देखि र रीझै।
बात कही हरवै मम पित्रउ, जांनत हौ वह रीति सधीजै ॥४३८

साध मगन्न भये पन देखि र, होत उही नृप तैं जु कही है।
जांनि लयो सिसु देत भई बिसु, ज्याय दयौ सुख भौत लही है।
साखत पाय परे सबही लखि, सिष्य करे अर सेब कही है।
भूप तिया पति राखि दई जुग, साखि सबै जन मांनि मही है ॥४३९

मूल

छपै छंद

[†]बलभबाई हरि सरणि, देखो ज्यन्य कैसी करी॥
नृपत्य दीनी आड़, साध कोइ रहण न पावै।
लुकि दुरि पूजै कोइ, तास कै हाथ कटावै।
दैऊं न ग्रसैं काढ़ि, बित वाको स्व लीजै।
दुरे दसों-दसि भक्त, कहौ अब कैसै कीजै।
जन राघो वाई तबै, तन मन की संका धरी।
बलभबाई हरि सरणि, देखो जन कैसी करी ॥१

साध न आवै नगर मै, तब बाई अन-जल तज्या॥
दिन भयेउ भैरु च्यारि, तबै सुसरै सुधि पाई।
कही बहु अन खाई, पुनि तीरथ करि जाई।
चर्णामृत लौ सीत, प्रकंमा देखाऊं।
तबही रि कीयौं बिचार, बिड़द मेरा लजवाऊं।
जन राघो हरि संत ह्वै, बलभ कै मो जन भज्या।
साध न आवै नग्र मै, तब बाई अन-जल तज्या ॥२

---

१. जोबनि।

[†]यहाँ से लेकर मूल छपै नं० २९२ के बीच के इतने पद्य नं० '१' और '२' प्रति में नहीं हैं।

दूहा कर कटे अरु धन लुट्यौ, छटे सद्गुरु को बास।
बलभबाई यौं कहै, राम तुम्हारी आस ॥१

छपै कर काटत सारे भये, जगन राघो अचिरज कथा ॥
सुत मांग्यौ जब नीर, तबै सरवर दिस्य धाई।
कर मुँहेड़ा दिसि कीयो, हाथ ज्यूं के त्यूं भाई।
पड्यौ नग्र मैं सोर, बृतांत नृपतिही सुनायो।
राजा नागे पाई, दोरि चरनौं सि[र]नायो।
महमां भगत भगवंत की, नर-नारी नांवैं माथा।
कर काटत सारे भये, जन राघौ अचरज कथा ॥३

प्रभु प्रष्ण ह्वै भक्त मन, गोपि मतौ को जांनि है ॥टे०
श्रीरंगनाथ को धांम बनें सौ करै उपावं।
भयो सेव राजा इंद, रबि हित सिर कटवावं।
बधिक भेष धरि चले, हंस या बिधि करि आवै।
पति बांनां की रखौ, समझि दोऊ बंधवावैं।
पुत्र हत्यो जन जांनिकैं, पुत्री दै बहु मांनि है।
प्रभु प्रष्ण ह्वै भक्त मन, गोपि मतौ कौ जांनि है ॥२६२

मांमां भानेज की टीका

गोपि मतौ अति मांम भानेजहु, ताष दयौ हरि कौं चित धारौ।
दौउ चले घर तैं बन मैं इक, मूरति देवल रैत निहारै।
रंग सुनाथ बिराजत दक्षन, धांम बनांवहि कांम निवारौ।
वै धन कौं फिरि हैं नहि पावत, हेरि थके सुनि यौ सुबिचारौ ॥४४०
देवल जैंन सु मूरति पारस, आरस नैं श्रुति नून बतायौ।
होइ सुखी हरि तौ न्रक तैं किम, नांहि डरैं इक कांन फुकायौ।
सेव करी मन लाइ हरी मति, जैंन-समाज सबैहि रिझायौ।
सौंपि दयौ सबलैं अब क्यूं करि, भेद सिलावट पैं भल पायौ ॥४४१
भीतर मांम भनेज स ऊपरि, भौंर कली कल साह फिरायौ।
मूरति बांधत खैंचि लई उन, दूसर बेर उहू चढ़ि आयौ।

फूलि गयौ तन छेद रह्यौ फसि, होइ खुसी अति बैंन सुनायौ।
लै सिर काटि जु स्वांगन निंदत, कांम भयौ सिधि यौं समझायौ ॥४४२
काटि लयो सिर ज्यौं प्रभु भावत, जीवत नैं परिचाहि पगी है।
देह तजौं मम आस न पूजत, जात उहां हरि नीव लगी है।
सोच भयौ लखि और बनावत, देखि लयो वह चिंत भगी है।
दोउ मिले हरि धाम करावत, हौत सुखी भल बुधि जगी है ॥४४३

हंस प्रसंग की टोका

कोट भयो नृप कै नहि जावत, काहु कह्यौ तुम हंस मंगावौ।
वेगि बुलाइ बधिक्कन सूं कहि, होइ जहां फिरि ढूंढ र ल्यावौ।
ल्यांवहि क्यूं करि मान-सरौवर, छूटहूगे जब च्यारि खिनावौ।
जाति पिछांनत देखि उड़ै उह, साधन धीजत भेष बनावौ ॥४४४
स्वांग बनाइ गये जित हंसहि, देखि बंधे नृप पासिहु आये।
सार लख्यौ मत बैद भये हरि, पूछन रै नृप कै ढ़िग ल्याये।
पंखिन कूं[1] पकड़ाइ लये हम, दूरि करैं दुख छोड़ि[2] मंगाये।
वोषदि पीसि लगाइ दई तन, कौढ़ गुमाय र हंस छुडाये ॥४४५
लौ[3] तुम भूंमि र गांव दयाल जु, भाग बड़े उनके घर आवौ।
पाइ लयो सब संतन सेवहु, दे[ह]धरी नर रांम रिझावौ।
मांनि लई पुर देस भगत्ति सु, लै बिसतारत हंस प्रभावौं।
भेष भलौ प्रभु पंखिहु मांनत, नांहि उतारत नाच[4] नचावौ ॥४४६

माहाजन सदाव्रती स्यार[5] सेठ की टोका

इंदव छंद

सेठ सदाव्रति भक्तन कौ पन, सेव करौं मन लाइ बिचारी।
संत अनंत पधारत हैं जिम, आइ परै तिम लेत सुधारी।
साध रह्यौ घरि मांनि घणौं सुख, पुत्र सनेह सु संगि खिलारी।
ईस इच्छा मुखि लालच गौंनहु, मारि धरचौ धरनी पछितारी ॥४४७
मात निहारत पुत्र कहां मम, बीति गयो दिन भौंन न आयौ।
डौंडि दिवावत दंपति संत रु, ढेरि कहैं सुत कौ बिरमायौ।
देइ बताइ उनै सब आभ्रन, साध बध्यौ सु सन्यासि जनायौ।
देह दिखावत वाप करावत, पुत्र हत्यौ हम रोई न पायौ ॥४४८

---

१ क्यों। २. ढूंडि। ३. ल्यौ। ४. नीच। ५. सार।

मैं स बताइ दयो न बिगारत[1], मोहि छुड़ावहु भूठ न भाख्यौ।
नांव न लै जन जौ सुख चाहत, जा अनतैं भल छोड़ न दाख्यौ।
संत उदास बिचारत दंपति, दै पुतरी जन कौं घरि राख्यौ।
पाइ परचौ तिय कै पति बोलत, है पन मैं सुत कौ दुख नाख्यौ ॥४४९
साध बुलाइ कही तुम ल्यौ बरि, मोर सुता नहि साखत ब्याहै।
मैं हतियौ सुत रोइ कही जन, नांव न ल्यौ मम जीवन क्या है।
साध पनौं सुनि यौं धरि है सिर, नांहि रती मल मेर कह्यौ[2] है।
ब्याहि दई पुतरी उर दाहन, जीवत लौं घर मांहि रह्यौ[3] है ॥४५०
आत भये गुर है प्रचै सिध, संतन सेवइ नांहि बताई।
पुत्र कहां तव पाय गयौ सब, भांति किसी जग मींच लगाई।
पारस लै हरि मोहि कही खुलि[4], ले चलिये जित देह जराई।
ठौर गये उहि ध्यांन करचौं हरि, जीत भयो जग कीरति गाई ॥४५१

मूल

छपै छंद

सर्ब जुग मांहीं रांमजी, संत-बचन साचौ करै ॥
भवन काठ तरवारि, सारकी काढ़ि दिखाई।
बाल स्वेत हरि करे, दास देवो सरनाई।
काष्ट कंमधुज काज, च्यारि कपि चिता संवारी।
जैमल ह्वै जुध कीयौ, भक्त की बिपति निवारी।
भैंसि चतुरगुन घृत लीयें, संगि श्रीधर धनुधरै।
सर्ब जुग मांहीं रांमजी, संत-बचन साचौ करै ॥२९४

मनहर छंद

रानां जू कै कांन लागि काहू नै कही पुकारि,
भवन की कमरि देख्यौ खांडौ बांध्यौ कांठ कौ।
अब के बहानै सिरि मांगि लयो हाथि करि,
पलटि ह्वै गयौ सार रुपैया सै आठ कौ।
भवनन[5] पवन खैंचि अंतर आराध कीनौं,
रांम रांम रांम धुनि पार नहीं पाठ कौ।
राघौ कहै रांणै दौरि पाव गहे हाथ जोरि,
साचौ खांडौं तेरौ भवन औरि भूठ-माठ कौ ॥२९५

---

१. बिगारस। २. कह्या। ३. रह्या। ४. पुलि। ५. मन।

भवन चौहान की टीका

इंदव बात सुनूं कलि के जन की, चहवांण भवन सु रांनहि कौ है।
छंद लाख उभै सु पटा रुजगारहु, संतन सेत सिकार चढौ है।
लार लगे मिरगी हुत ग्याभनि, टूक[1] करे सु उदास वड़ौ है।
भक्त कहै मम कांम करौं यह, दारहु कौ करवात खंगौ है ॥४५२
भ्रात लख्यौ खग काठहि कौ चुगली, नृप पैं करतौ न सकाई।
भूप न मानत सौंह करै वहु, जानत भक्तन बात चलाई।
बीति गयो अब लागत नै कछु, मारि नख्यौ मम भूठ लखाई।
गोठि करी सरजाइ भलें नृप, ले अपनी तरवार दिखाई ॥४५३
देखत देखत ल्याव भवन्न जु, दार कहै मुख सार कही है।
काढि दई बिजुरी सिखिई मनु, मारि नखौ इन भूठ नहीं[2] है।
भक्त बचावत[3] साच कह्यौ यह, दारहु की हरि पक्ष लही है।
दूंण पटा मुजरौ मति आवहु, मैं तन आवत मानि सही है ॥४५४

रूप-चत्रभुजजू कौ देवा पंडा को टीका

इंदव रूप चतुर्भुज रांनहुं आवत, पौटि रहे प्रभु माल सु सीसा।
छंद काढ़ि दयौ नृप केस लख्यौ सित, आय गये कहि आवत ईसा।
भूठ कही डरप्यौ नृप मारहि, ध्यात भयौ पद सौ जगदीसा।
केस करौ सित हौ प्रभुजी मम, कारनि भक्त नहीं परिभेसा ॥४४५
भूपति त्रास समुद्र बुड्यौ जन, बैंन मिठास सुनें फिरि जीयौ।
बार पिषे सित मांनि दया अति, नैंन भरे नहि साधन कीयौ।
भक्तन की प्रतिपाल करै निति, मैं स अभक्त सु कच्चत हीयो।
आप बिचारत नांम लजै मम, हैं हमरौ पुनि यौ सुख दीयौ ॥४४५
भूपति भोर निहारित है कच, सेत कही डरि पंडहि लाये।
खैंचि लयौ इक बारहु जाइ र, धार चली रत भूप भिजाये।
भूप[4] पर्‍यौ मुरछा तंन सुद्धि न, ऊठत भौ अपराध सुनाये।
बैठत राज इहां नहि आवहुं, दंड यहै अजहूं नहि आये ॥४५७

कमधज की टीका

भ्रात सु च्यारि उदैपुर चाकर, है इक भक्त बसै बन मांही।
आइ प्रसाद करै उठि जावत, नैंक चलौ खरची तव आंहीं।

---
१. टेक। २. गही। ३. बतावत। ४. भूमि।

चाकर हैं जिनके उन सेवत, जारत कौंन ब वौह जरांही।
देह छुटी हनु रांम पठावत, दाहत धूंम सु भूत तिरांही ॥४५८

जैमलजी की टीका

जैमल मेरत पैल हुतौ नृप, पूजन सूं हित और न भावै।
है घटिका दस कौ वृत बोलन, आइ कहै कछु ठौर मरावै।
भ्रात मंडोवर कै यह भेद, लह्यौ चढ़ि आवत मात सुनावै।
स्यांम करै भल बाज चढ़े हरि, मारि दयौ दल सैं सुख पावै ॥४५९
हाफि रह्यौ हय आय र देखत, वाहरि देखहि भ्रात पर्‌यौ है।
कौ तुम्हरै इक स्यांम सिरोमनि, मारि दयौ दल चित्त हर्‌यौ है।
तौहि मिल्ने हमतौ अति तरसत, जांनि लयो प्रभु आप ढर्‌यौ है।
बूझि खिनांवत वै पन धारत, कष्ट दयौ कहि सोच कर्‌यौ है ॥४६०

ग्वाल-भक्त की टीका

ग्वाल भयौ इक संतन सेवत, हाथि चढै सब साधन देवै।
आय गयौ पकवान धयो बन, ढील लगी इक भैंसि न लेवै।
जांनि लइ घरि मात कही फिरि, है घृत लै करि ब्राह्मन सेवैं।
द्यौं स दिवारिहु हांस धरे गरि, जांम लये घर आतह सेवै ॥४६१

श्रीधर-स्वांमी की टीका. अवसथा बरनन

टिप्पण भागवतं करि है वह, जांनिहुं श्रीधर हे बिवहारी।
जात चले मग चौर लगे कहि, कौंन सहाइक, औधिबिहारी।
कोइ नहीं बन मारि डरौ इन, है कर आयुध आत खरारो।
आय कही घर स्यांम स को हुत, हे प्रभू त्यागि दई बिधि सारी ॥४६२

मूल

छपै छंद

भगवंत भक्त पीछैं फिरै, ज्यौं बच्छा संग गाइ है॥
दरबि रहत इक भक्त, तास कै संत पधारे।
प्रभु बटाऊ होइ, खुसे हरिजन पैं हारे।
भरन साखि गोपाल, साथि खुरदहा सिधाये।
रांमदास कै धांम, द्वारिकानाथ लुभाये।
छेक सेल कौ अनुगतन, बलि बंधन बपु खाइ है।
भगवंत भक्त पीछै फिरै, ज्यूं बच्छा संगि गाइ है ॥२६४

निहकंचन की टीका

इंदव छंद
भक्तन लार[1] फिरै भगवंतहि, ज्यौं बछ संगि फिरै निति गाई।
है हरिपाल सु ब्रांह्मंन नांमहि, संतन हेत सिरीस लगाई।
कैइ हजार बजार खुवावत, नांहि मिले जब चोर न जाई।
साखत ल्यात न दास दुखावत, आवत साध तिया बतलाई ॥४६३
कृष्ण रुक्मनि मंदिर हे जुग, सोच परचौ हरि साह वने हैं।
आप चले कित भक्त समो जित, मैं हूं चलूं कहि आव ठने हैं।
पूछत माग चलै उतपातहि, लै रुपया पहुचाय सने हैं।
साध जिमावहु संगि चल्यौ बन, देखि लये रुपया स घने हैं ॥४६४
स्वांग नहीं सदचार न देखत, है धनबौ इतनौं इत ल्यायो।
द्यौ रुपया गहनौ नहीं मारत, देत सबै छगुनी छल छायो।
काढि लयो छगुनि सु मरोरि र, दुष्ट बड़ौ जन जीमत पायौ।
रूप दिखावत जो अपनौं हुत, भक्त सराहि र कंठि लगायो ॥४६५

साखोगोपाल जू की टीका

गौंडहु के दिज दोइ सुनौं गति, जाति बड़ौ बयहू इक छोटो।
धांम फिरे सब आये रहे बन, जैंमति आवत जांनहु मोटो।
सेव करी लबु [घु] रीझि कही बृध, दीन्ह सुता तव लेवत ओटो।
साखिगुपाल करै प्रतिपालहि, गाँव गयें तिय पूछत टोटो ॥४६६
बिप्र कही लघु द्यौं तुम्ह दीन्ही सु, पुत्र तिया पुतरी नहि देवै।
बृध कहै अब नांहि करौं किम, ही जु बिथा नहीं जानत भेवै।
होत पंचाइत साखि भरावहु, साखिगुपाल भरै बन जेवे।
ल्यौ लिखावइ जु साखि भरावहि, दै परनाई सुता मुख लेवै ॥४६७
आवन मैं सु गुपाल जनांवत, साखि भरौ चलि कै जु लिखाई।
बीति गयो दिनि बोल कही हरि, मूरति चालत क्यूं स कहाई।
संगि चलै उठि भोग मंगावत, पाठ[2] चलैं छिम छिम्म कराई।
कांन सुनैं छिम पीछ न देखहु, देखत हो रहि हूँ उन ठाई ॥४६८
गांव निजोक रह्यौ फिरि देखत, होत खरै वहि ठौर हसे हैं।
ल्याव इहां कहि आत चलौ हरि, गाँव चल्यौ सुनि देखि लसे हैं।

---

१. संगि। २. पात।

पूछत साखि भरी सुख पावत, व्याहि दई उन गाँव बसे हैं।
मूरत राखि लई नृप आत न, है अजहूं उत प्रीति फसे हैं ॥४६९

रामदासजी की टीका

गांव डकोर बसै दुज[1] भक्त सु, रांम सु दास भगत्ति पियारी।
ग्यारसि जाग्रन ह्वै रणछोड़हि, जाइ सदा वृध देह निहारी।
आप कही इत आव मतैं घरि, चालि रहों रथ ल्यावउ चारी।
आनि धरौ खिरकी पिछवारहि, बाथ धरौ भरि हांकि सवारी ॥४७०
जाग्रन आत भयौ चढ़िकै रथ, जांनि सबै गति पाव थकी है।
बारसि रैनि अरद्ध चल्यौ धरि, भूषन ले तन प्रीति पकी है।
मंदिर खोलिरू देखत नां प्रभु, गैल लगे चढि जाइ हकी है।
बाइ धरौ मम बेगि टरौं तुम, पौंचि र मारत चौंट जकी है ॥४७१
ढूँढ लयो रथ पाइ नहीं हरि, सोच करचौ जन भूमि[2] लगाई।
येक कही इन वोर पयोहुंत[3], बाइ निहारत हैं रकताई।
सेल दयो जन धारि लयो हम, नांहि चलौं बिज रूप बताई।
मो सम कंचन ल्यौ धरि तोलहु, नांह मरे तिय कान जिताई ॥४७२
तोलत बारिहु डारि पछै हरि, नांहि उठै पलरौ जित बारी।
हौइ उदास चले घर कौं सुख, होत किमे मन नांहि[4] मुरारी।
धाम बिराजत है दिज कै प्रभु, भक्ति करै सुख दैंन तयारी।
बांधि लयों बलि यौं बलि बंधन, आयुध कौ छिन चोट बिचारी ॥४७३

मूल

छपै छंद

अब राजा परिजा थकित ह्वै, हरि-जस सुनि हरिदास कौं ॥
जसू-स्वांमि कौ जस बढ्यौ, बृषभ हरि आप बनाये।
ता पीछैं चलि चोर, लै गये सो पुनि ल्याये।
नंददास निज धेन, जिवाई नांमा पीछै।
श्रीरंगनाथजी सीस, [illegible]नयो वेस्यां कै इछैं।
यम आसाजित आसू सुवन, जन राघो रटि गुन जास कौ।
अब राजा परिजा थकित ह्वै, हरि-जस सुनि हरिदास कौ ॥२९५

१. हरि। २. भूलि। ३. गयो। ४. मनेजि।

जसू-स्वामी की टीका

इंदव　अंतरबेद रहै जसु स्वांमिन, संतन सेवन खेत बुहावै।
छंद　बैल हरे इन कौं कछु ठीक न, स्यांम वसे हलकै जुतवावै।
आत भये बृज के नर पैठहि, देखि गयो[1] घरि जाइ र आवै।
बार फिरे छय ठीक भई उन, पूछि र आनि दये नहि पावै ॥४७६

देखि प्रतापहि भाव भयौ उरि, बैल दये हरि पाय परे हैं।
दीन कहै मुख आय लही रुख, दीनदयालहि दास करे हैं।
छाडि दयो हर नो सुध होतस, संतन सेवन माग परे हैं।
धांन खिनांवहि दूध दही पुनि, आवहि साध लड़ात खरे हैं ॥४७५

नंददासजी वैष्णु की टीका

गांव बरेलि नजीक हवेलिहु, नंद सुदास दिजै जन सेवै।
दोष करै दिज लै बछिया सव, खेतहि डारत गारि न देवै।
साधन सूँ लरि है स हत्यारहि, आवत हौ नहि जांनत भेवै।
जाइ जिवाई दई जन खेतहि, साखत भक्त भये पग लेवै ॥४७६

मूल

मनहर　**राघो रँगनाथजी कौ सीस आयौ सनमुख,**
छंद　　**बारमुखी बारंबार लेत अति वाँरणां।**
मैं हूँ महा मधिम अछोप मन बच क्रम,
तुम प्रभू प्राणनाथ पतित उधारणां।
मुकट चढ़ावत मगन भई मातंग ज्यूं,
जै जै कार पुर महि गृह-गृह वारणां।
गनिका मुक्ति[2] भई भई च्यार्यूं जुग मधि,
च्यार्यूं जीति गई जन्म नांहीं जौग धारणा ॥२९६

बारमुखी की टीका

इंदव　बारमुखी अतिहास सुनौं घर, माल भरचौ नहिं आवत कांमैं।
छंद　संत बरे पुर धांम लख्यौ सुछ, खोलि दई कटि चाहि न दामैं।
वाहरि आइ निहारत हंसनि, भाग जगे नहि जांनत नांमैं।
थार भरचौ महुरैं धरि मुंतन, पाक करौ अरु भूषन स्यांमैं ॥४७७

---

१. गये। २. मुक्त।

पूछत कौ तुम जाति बतावहु, मौंन करी सुनि चित्त धरी है।
साच कहौ मन संक धरो मति, बारमुखी कहि पाय परी है।
कौस भरचौ धन ल्यौ किरपा करि नांहि करै तब तौ संमरी है।
रंग सु नाथ मुकट्ट घराइ, इसौ लखि कै सुख पाई हरी है ॥४७८
विप्र न छूवत ले किम संग[1], जु दै हम बांह रहै इत कीजै।
द्रिव्य लगाइ सबै करवावत, लै कर चालत थाल धरीजै।
मंदर मांहि गई जन आइस, ससंकि फिरीस तिया भ्रम भीजै।
आपु बुलात हमैं पहरायहु, सीस नयौं पहराय र रीजै ॥४७९

मूल

छपै छंद **यम भक्ति पैज कलिकाल मैं, तिहुं जुग सूं राखी अधिक ॥**
ठग ठाकुर दै बीचि, भक्त सूं सौगंध कीन्ही।
बहुरि हत्यौ बन मांहि, लूटि गहि नारी लीन्ही।
घरनी करी पुकार, त्राहि बाबा बिसटारी[2]।
चोर न कीन्हौं जौर, रांमजी रजा तुम्हारी।
राघौ रांम रतीक मधि, भृति जिवाइ मारे बधिक।
यम भक्ति पैज कलिकाल मैं, तिहुँ जुग सूं राखी अधिक ॥२९७

बिप्र हरि भक्त की टीका

इंदव छंद आंह्मन लै मुकलाव[3] चल्यौ तिय, है भगती जुग वात जनावैं।
मारग मैं ठग भेटत पूछहि, जात कहां ज्यतही तुम जावैं।
वाग छुडावत लै बन जावत, है अति सूधि हु चित्त न आवै।
रांम दये बिचि तौहु डरै मन, भांम कहै हरि नांम सुनावै ॥४८०
संग चले मन भीत[4] करौ अव, भक्ति सचो पतनी मम जांनो।
जां बन मैं दिज क्षिप्रहि मारत, भाग चले सु बधू बिलखांनी।
पीछहु देख तबै समुंवौ चलि, देखत हू बिचि सो वह प्रांनी।
आइ र राम सबै ठग मारत, ज्याय लयो जन रीति बखांनी ॥४८१

मूल

छपै छंद **गाथ सुनत नृप भक्त की, हरिजी सूं हित होइ है ॥**
स्वांग संत को धरै, तास जानैं गोबिंद गुर।

---

१. रंग। २. बिसठारी। ३ मुकलाइ। ४. भात।

दरसन षट को भाव, कदै नांहीं आवै उर।
साध रूप धरि भांड, राव पैं पाव दुहावै।
भूप भेट करि कही, भेष पलट्यां दुख पावै।
भक्त भांड साचौ भयो, जगत जाति नहीं जोइ है।
गाथ सुनत नृप भक्त की, हरिजी सौं हित होइ है॥२६८

भक्त भूप की टीका

इंदव छंद
भूप भगत्त स भांड न पावत, है प्रभु कौं धन आंन न दीजै।
स्वांग धर्‌यौ जन को सु पुजावत, नाचत भूप कहै इम कीजै।
भौजन कौं करवाई धर्‌यौ बसु, जोरि कहै कर यौं सब लीजै।
भक्ति भई दिढ़वास न भावत, हाथ गहै कछु ल्यौ नहि छीजै॥४८२

मूल

छपै
निष्टां अंतर भूप कै, उतकष्ट-धर्म धुजता नहीं॥
स्यांम ध्यांन हरि भजन, और कौं नांहि लखावै।
निसि दिन अैसैं रहै, अर्धंगी[1] भेद न आवै।
सुपन मांहि नहीं सुद्धि, नांम आंनन तैं निकस्यौ।
वांम नांम सुनि प्रष्ण, दरबि बहु पति परि बकस्यौ।
कजी भई मो भक्ति मैं, सुनि रांनी बातैं महीं।
निष्टा अंतर भूप कै, उतकष्ट-धर्म धुजता नहीं॥२६६

अंतरनेष्टो नृप की टीका

इंदव छंद
भक्त तिया कहि भक्त नहीं पति, यौं मुरझाइ र सोचत भारी।
भेद न जांनत रैंनि पिछानत, नांम रट्यौ मुखतैं सु बिहारी।
नांम सुन्यौं पतनी सुख पावत, भोर भयो पति पैं धन वारी।
पूछत है नृप देखि उत्साहहि, नांव कह्यौ जिव जात बिचारी॥४८३
भूप तज्यौ तन सोच तिया मन, प्रीति इसी उर भेद न पायो।
दीरघ सोक भयो सुधि नांहि न, नैंक लखीं न इसौ हित छायौ।
प्रेम अतित भयो तिय कै तन, देह तजी इन हीं यह भायो।
ह्वै जिनकै यह सो लहिहैं वह, दूरि करै सब साच दिखायो॥४८४

---

१. अधंगी।

मूल

छपै माथुर बिठुलदास बर, मांन देत परमांन नैं॥
छंद स्वांग संत सूं प्यार, साधु कौ गुणही लेवै।
उत्यम मानैं भक्त, धांम तन मन धन देवै।
संतोषी सुध ह्रदै, बहुत परमारथ कीन्हौं।
दुसह करम को करै, पुत्र उत्सव मैं दीन्हौं।
जै जै गोव्यंद हरि नांम, पण राघो बांणी आंननैं।
माथुर बिठलदास बर, मान देत परमान नैं॥३००

टीका

इंदव माथुर भ्रात उभै गुर रांनहि, आप मुये लरि त्यां इक जीयो।
छंद जा सुत वीठलदास बड़ौ जन, वै लघु सेवन स्यांम सु लीयौ।
भूप कही दिज कौ सुत आत न, ल्यांन गये कहि चाह न बीयौ।
फेरि बुलात करौ इत जाग्रन, नाचत प्रेम सु कै इक दीयौ॥४८५
संग गये जन रंग रचे हरि, आदर दै उठिकैं सु बठाये।
तीन खणां परि नृत्य करावत, प्रेम छके गिरिये तरि आये।
स्वेत भयो नृप दुष्टन खीजत, बाथ भरें जन ता घरि ल्याये।
भेट करी बहु देह परी सब, सुद्धि भई दिन तीसर गाये॥४८६
मात जनांबत बात सबै निसि, कौनि कसे तजिये सुबिचारी।
आत छटी कर मैं गरुड़ेस्वर, सेवत है प्रतिमां अति प्यारी।
भूपति के चर हेरि थके, तिरिया अरु मातहु आइ पुकारी।
चालि कही बहु मांनत नांहि न, बैठि रही उतही कहि हारी॥४८७
कष्ट लख्यौ तब राति कही हरि, जा मथुरा बर तीनक भाख्यौ।
जाति र पांति मिले पुर आवत, साध लख्यौ बढही अभिलाख्यौ।
गर्भवती जुवती घर खोदत, मूरति वोधन पावत दाख्यौ।
बौलि कह्यौ बढहीस न लै तब, वै सु कही तव रूपहि राख्यौ॥४८८
सेवत है हरि भक्ति गई भरि, सिष्य भये बहु है उर भावैं।
होत समाज बड़े अति आवत, राग बिबद्धि गुनी जन गावैं।
आत नटी गुन रूप जटी इक, गात इसी उर बांन लगावैं।
देत भये पट भूखन भूखहु, दीखत औरन पुत्र गहावै॥४८९

राय रंगि सिष भूप सुता दुख, देखि भयो जलहूं नहीं पीजै।
वाहि कह्यौ धन चाहि सु लै तव, दे हमरौ प्रभु तो तव जीजै।
द्रव्य न चाहत रीझि चहैं तन, दै धन फेरि समाज करीजै।
और गुनीजन कौं धन दे बहु, आप कर्‌यौ[1] नृति देत न लीजै ॥४६०
डोलहि मैं फिरि ल्याइ रंगी जन, कैत भई वरियां तव आई।
नृत्य कर्‌यौ अति बो धन वारत, अंक भरे फिरि दै हुलसाई।
मोहि दयो हरि की नवछावरि, ले मति नै सिष लेत रमाइ।
त्यागि दयो तन पात कहाँ वह, यौं बरनी जन को रसिकाई ॥४६१

मूल

छपै छंद
हरिरांम हठीलै भजन से ज[2], रांनां कौ[3] समझाइयौं ॥
बडे चतुर दातार, भक्ति प्रेनां जिन जांनीं।
रस-सागर गुन गंज, कंठ मैं गदगद बांनीं।
संतन कूं दुख देत, तास को यह फल भाख्यौ।
हरिनकस्यप हति नखन, दास प्रह्लादहि राख्यौ।
स्फुटबक्ता सभा बिचि, काहू सौं न हराइयो।
हरिरांम हठीलै भजन से ज, रांनां कौ समझाइयो ॥३०१

टीका

इंदव छंद
रांनहि हेत खिलावत च्यौपरि, न्यासि इसौ जन भूमि छिनाई।
साथ[4] पुकारत झारि दयो उन, है विमुखी वसि साच झुठाई।
सौ हरिरांमहि वात जनावत, चालि अगैं हम आवत भाई।
पैल गयौ हरिरांम पधारत, झारत भूपहि भूंमि दिवाई ॥४६२

मूल

छपै छंद
पादप येह जन जगत मैं, भक्ति सुमन निरबेद फल ॥
सीहा खोजी संत स्यांम, दल्हा पुनि रांका।
जती रांम रावल, मनोरथ धौगू वांका।
जीहा चाचा गरू, सवाई जाडा चांदा।
कीता नापा लोकनाथ, सब मेड्या दांदा।
धीधांगश्रम राघो निपुनि, मति सुंदर पीय रांम जल।
पादप यह जन जगत मैं, भक्ति सु मन निरबेद फल ॥३०२

---
१. कह्यौ। २. तेज। ३. नैं। ४. साध।

श्री राकापति बांका जू की टीका

रांकपति पतनी पुनि बांकाहि, रैपुर पंडर रीति सु न्यारी।
ल्या लकरी गुदरांन करै उर, नांव धरै वह जांनि जिवारी।
नाम कहै प्रभुसौं इन द्यौ कछु, लेत नहीं कहि आप मुरारी।
चालि दिखांवहु तौ तव भांवहु, मारग मैं सलका हिम डारी ।।४६३
आगय है पति पीछय कौं तिय, आवत सो सलका सु निहारी।
जांनि तिया मन मांहि भयो भ्रम, धूरि पगां करि ता परि डारी।
बूझत भूमि निहारि कह्यौ[1] किम, कैत भये अजहूं लछिधारी।
रांक कहै मम बाका भई तुब, आप कही हरि साच हमारी ।।४६४

मूल

इंदव छंद
एक समै रजनी जन जागत, चोरन आइ चहूँ दिस ढूंढा।
माया नहीं सल री तप रेख, लगा रिदै बारह नीकसै मूढा।
आगै परचौ मुख ज्यूं भरचौ भंजन, खोलि र देखै तौ नाग फफूढ़ा।
राघौ कहै खिज राँका कै डारत, सरप थै ह्वै गयौ सोनि को कूढा।
लागे मतौ करनैं कहा कीजिये, धीजिये नैंक न माया बुरी है।
रांका कहै काहू रंकहि दीजिये, ताही के काज कौं आय जुरी है।
बांका कहै बवरे भये हो, देहुगे किसकौं विष काल छुरी है।
राघो कहै तुछ जांनि गये तजि, रांकै रु बांका यौ टेक परी है ॥३०३[†]

टीका

नांमहि सौं हरिदैव कहै उर, तौ चलिये लकरीहु सकेरौ।
आत भये जुग वीनन कौं जन, है इकठी कर सूँ नहि छेरै।
हौइ चतुर्भुज ल्यात भये घरि, रे मुडफोर प्रभु बन फेरै।
दौउ कहै कर जोरि धरौं पट, भार पर्‌यौ इक चोरहि हेरै ।।४६५

मूल

इंदव छंद
धुनि ध्यांन र प्रांन भये परचै, निहचै निराकार कै सेवग रांका।
कली-काल मैं चालह माइ ज्यूं, छाइ महाबितपन्न सबै बिधि बाका।

---

१. करचौ।

[†]यह इंदव छंद प्रति नं० १ और २ में नहीं है।

अन के कन बीन अहार कियौ जिन, पायौ है भेद भक्ति कौ नांका।
राघौ कहै गलतांन गरीबी सूं, यौं मिले जोति मैं जोति जहां का ॥३०४

मूल

इंदव छंद
अैसौ लग्यौ रंग रांम मन बीसरै, भूलि गयो दुख देह कौ द्योगू।
संतन के दल द्वार सदा रहैं, भाव सूं भोजन देत अन्यौगू।
टेक यह उर जो ब कही गुर, लेनि बह्यौ निति धरम की तेगू।
राघो कहै धनि धीरज सूं पर, परचौ प्रचंड मिले हरि बेगू ॥३०५

मूल

छप्पै
यम हठ करि हरिजी कूं मिले, सोझा सोझी सदन तजि ॥
बालक उभै उजाडि, समझि करि सूते छाड़े।
इनकौं करता रांम, दीये परमेसुर आड़े।
महा मोह बसि कीयौ, लोभ कौ लसकर मार्‌यौ।
क्रोध बोध करि हयो, रांम भजि कांम संघार्‌यौ।
राघो इक टग राति दिन, भै मेट्यौ भगवंत भजि।
यम हठ करि हरिजी कौं मिले, सोझा सोझी सदन तजि ॥३०६

इंदव छंद
चढ़ि खेत खड़्यो न पड़्यौ पछवो पग,यौं जग जीति गयौ जन सोझौ।
कलप्यौ झलप्यौ नकल्यौ कलि मैं, मन मूठिं भली द्रिढ ज्ञान कौ गोझौ।
मनसा मनि घेरि चढ़ाये सुमेरिह, कांमदुधा करणी करि दोझौ।
राघो सुबास छिपै नहीं साध की, चंदन कै बन बोचि ज्यूं बोझौ ॥३०७
अैसी लगी टग नैंक टरै नहीं, रांम की कीरति गावत कीता।
आतम येक मुरै न दक्षा देहु, खाट तलैं ब्रष द्वादस बीता।
रांमजी आइ कही समझाइ करौ, सिष याहि ज्यूं होइ पुनीता।
राघौ कहै उपदेस दियो पंच, तत कौ सत ले आदि अद्वीता ॥३०

मूल

छपै
कांमधेनु कलिकाल मैं, येते जन परमारथी ॥
सूरज लक्षमन लड्डू, बिमानी खेम उदासी।
भावन कुंभनदास, संत लफरा गुन-रासी।
हरीदास हरि केस, लुटेरा भरतरु बिरही।
नफर अजोध्या चक्रपांनि, जाइ सरजू तटि परही।

तिलोक त्यागी जोधपुर, उधव बिज्वली प्रारथी।
कांमधेनु कलिकाल मैं, येते जन परमारथी ॥३०६

श्री लड्डू भक्त की टीका

इंदव छंद
साखत देस भगत्त लड्डू हुत, लेस भगत्ति न पापहि पागे।
तोषत है दुरगा नर मारि रु, ले सु गये इन मारन लागे।
मूरति तैं निकसी धरि रूपहि, काटत हैं सबके सिर भागे।
नाचि रही जन के मुख आगर, राखि लये हरि यौं अनुरागे ॥४९६

श्री संत भक्त की टीका

संतन सेव लग्यौ मन संतहि, ल्यावत भीखहु गावन गावै।
साधु पधारि घरां तिय पूछत, संत कहां खिजि चूल्हहि आवैं।
साध चले उठि माग मिले जन, हे जु कहां बह बात सुनावै।
साचि कही तिय आंच वही हिय, ल्याइ घरां उन खूब जिमांवै ॥४९७

तिलोक सुनार की टीका

पूरब माहि सुनार तिलोक सु, संतन सेवन की उर धारी।
व्याहत है पुतरी नृप तेहरि, दी घरि बे करि ल्याव सुहारी।
साध पधारत है बहु सेवत, द्यौंस रहे जुग भूप चितारी।
बेगि बुलावत ताहि डरावत, ल्यावति हूं कलि नाहि उजारी ॥४९८
आप[1] गयो दिन नांहि घरी जन, भै उपज्यौ बन जाइ छिप्यौ है।
च्यारि रु पांचस आत भये चर, स्याम लयौ घरि भक्ति लिप्यौ है।
जाइ दई नृप देखि भयो चुप, धापत नैनन खूब दिप्यौ है।
मौज दई अति चूक तजी पति, राय लह्यौ हरि धांम थप्यौ है ॥४९९
प्रीत महौच्छव ठांनि जिमावत, संतन कं वहु भांति मिठाई।
साध सरूप धरचौ सिरनी करि, जाइ कही सु तिलौकहि पाई।
कौंन तिलोक नहीं हुत दूसर, होइ सुखी निसि कूं घर जाई।
देखि भरचौ घर है धन भोजन, जांनि लई हरि होत सहाई ॥५००

मूल

छपै छंद
चिंतामनि सम दास ये, मन-बंछा-पूरन करन॥
पुष्कर दी सोमनाथ, भीम बीकौ बी साखा।

---

१. आइ।

सोम मुकंद गनेस, महदा रघु झाझू लाखा।
लक्षमन छीतर बालमीक, त्रिविक्रम लाला।
बृद्ध ब्यास करपूर, बह बल हरिभूभाला।
वीठल राघो हरीदास, घूरी घाटम उधव जगन।
चिंतामनि सम दास ये, मन-बंछा-पूरन करन ॥३१०

ये सूर धीर थाणांपती, भक्ति करत दिग्गज भगत ॥टे०
छीतम देवानंद, द्वारिकादास महीपति।
माधव हरीयानंद, खेम बीदा बाजू सुत।
बिष्णानंद श्रीरंग, मुकंद माडन भल नरहर।
दामोदर भगवांन, बालरूपा केसो अरु कान्हर।
संतरांम तंबोरी प्रागदास गुपाल, लुहंग नागू सुगत।
ये सूर धीर थाणांपती, भक्ति करत दिग्गज भगत ॥३११

प्रचुर सुजस जगदीस कौ, करन भक्त संसार ये ॥
प्रिय दयाल गोबिंद, विद्यापति बहुरन प्यारे।
चतुरबिहारी ब्रह्मदास, लाल बरसांना-वारे।
पूरन गंगा रांम नृपति, भीषम भगवत रत।
आसकरन परसरांम, भगत भाई खाटी बत।
जनदयाल केसौ कबित, बृजराज-कुवर की छाप दे।
प्रचुर सुजस जगदीस कौ, करन भक्त संसार ये ॥३१२

श्रीगोविंदस्वामी की टीका

इंदव छंद
गोवरधन्न सुनाथ सखावत[१], खेलत संग सु गौबिंद नामैं।
स्वांमि बिख्यात सुनों उन बात, उनैं मन[२] रीति भली अति रांमैं।
खेमत हे गिहि लाल गये भगि, दाव हुतौ सु गिली दइ स्यामैं।
संत लखी सुध का धरि काढ़त, जानत नैंमत है यह बामैं ॥५०१
कुंड रहे लगि आवहिगो बन, लाइ दये फल सौ भुगतावैं।
सोच परचौ प्रभू जाइ अरचौ वह, भोग धरचौ सु परचौ नहि पावैं।
मोहि न भावत कैंत गुसाईन, चाहि खुवांवनं वाहि मनावैं।
मो परि दाव हुतौ जन कौ उन, आइ दई नहि जांनत भावैं ॥५०२

---

१. सखाहुत। २. नन।

मों बन मैं बिन खेल बनैं नहिं, काढ़त गारिन चोट हु दैगो।
चित भई मम ढूंढि र ल्यावहु, आत कनैं तब चैंन पगैगो।
भोजन भात न ताहि बिना कछु, वा रिस जातहि भोग फबैगो।
बेगि गये उन नीठि मनावत, ज्याइ कही अब कंठ लगैगो ॥५०३

बाहरि भूंमि गयो हरि आवत, आकन डोडन मार मचाई।
देख उठे इनहूं वहि मारत, भाव सखा सुख सार कहाई।
बेर लगी बहु मातहु आवत, चालि घरां तजि ये अटपाई।
सौच करयौ सदचार धरयौ मन, प्रेम मढ्यौ सुबिचारि कराई ॥५०४

भोग लगांवन मंदिर ल्यावत, मांगत है पहिलैं मम दीजै।
थारहि डारत जाइ पुकारत, कोप करयौ यह सेवन लीजै।
आइ कही जन कौंन बिचारत, खोलि सुनांवत कांन धरीजै।
जीम रु पैलहि जावत है बन, मोहि न पावत यौं सुनि भीजै ॥५०५

मूल

छप्पै छंद

मधुपुरी देस जे जन भये, मम कृपा कटाक्ष ही राखियो ॥
रांमभद्र रघुनाथ मरहट, बीठल पुनि बेणी।
दासू स्वांमी चित उत्म, के सौं दंडोतां देणी।
गुंजामाली जदुनंद, रामानंद मुरली।
गोविंद गोपीनाथ मुकंद, भगवांना सु धुरली।
हरिदास मिश्र चत्रभुज चरित्र, रघुनाथ विष्ण-रस चाखियो।
मधुपुरी देस जे जन भये, मम कृपा कटाक्ष ही राखियो ॥३१३

श्री गुंजामाली को टीका

इंदव छंद

संतन कौ परताप बडौ ब्रज, मैं बसि है उन सौभ अपारा।
गुंजनमाल धरी जिम नांम सु, बास करयौ सु लहौर मझारा।
पुत्रवधु बिधवाहि सुनावत, लै धन ग्रेकि गुपाल भ्रतारा।
द्यौ हरि सेवन मांगत है तिय, यां परि वारतहूं जगसारा ॥५०६

पूजन वाहि दयौ धन ग्रे तिय, बास करयौ व्रज रीति सुनीजै।
ठाकुर पैं सुत औरन के भरि, डारत खोरहि सौ अति खीजै।
तारि दयो वह भोग न पावत, क्यूंस सिग्रावहि तौ कछु जीजै।
कोपि कही भरि है तब प्रातहि, हा अब खावहु ल्यावत लीजै ॥५०७

मूल

छपै ये त्रिया कठिन कलिकाल महि, भक्ति करी जग जांनि है ॥
छंद सीता झाली कलाकृत, गढां सोभां लाखां।
प्रभुतां मांनमती सुमति, गोरां गंगा ये दाखां।
ऊमां उबिठा सतभामां, कुवरी गोपाली।
रामां जमनां देवकी, मृगां मग चाली।
कमलां होरा हरिचेरी, कोली कीकी जुग जेवां गनेसदे रानि है।
ये त्रिया कठिन कलि काल महि, भक्ति करी जग जांनि है ॥३१४

गनेसदे रांनो को टीका

इंदव भूप मधुक्करसाह सु औड़छ, नारि गनेसदे खुब करी है।
छंद साध पधारिहि सेवहिबो विधि, संत रह्यौ सुख देत खरी है।
देखि इकंत कही धन है कित, होइ बतावहु आंनि परी[1] है।
जांघ छुरी पहराय गयो भगि, सोचत है नृप जांनि बुरी है ॥५०८
बांधि रु सोइ रही न कही किन, आवत भूप कही तन मैंलौ।
तीन गये दिन राय लखी अनि, खोलि कहौ मम नां दुख दैलौ।
पूछत है नृप बोलि कही तिय, संभ्रम छाड़हु है कछु सैलौ।
दे परिदक्षण भूमि परचौ नृप, भक्ति करी तजि दंपति गैलौ ॥५०९

मूल

छपै प्रभु कें संमत संत जे, तिनकै मैं सेवक रहूं ॥
छंद मयांनंद गोब्यंद, जयंत गंभीरे अरजन।
जापू नरबाहन गदा, ईस्वर सो गरजन।
अनभई धारा रूप, जनार्दन बरीस जीता।
जैमल वीदावत ऊदा, रावत सु बिनीता।
हेम दमोदर सांपलै, गुढलै तुलसी कौं कहूं।
प्रभु के संमत संत जे, तिनकै मैं सेवक रहूं ॥३१५

नरबाहनजू की टीका

इंदव गांव रहै भय है नरबाहन, नाव लई लूटि रोकि स दीयो।
छंद भोजन देवन आवत दासिहु, आइ दया सु उपायु जु कीयौ।

---

१. अरी है।

जै हरिबंसहि राधिहु बल्लभ, नांव कहौ सिष पूछत लीयौ।
देत भये सब बात कहौ मति, जाइ हुवो सिष छाड़त बीयो ।।५१०

मूल

छपै छंद साधन की सेवा सरस, श्रीमुख आपन सौं कहै ॥
बूंदी बनियां रांम, गांव रीदास विराजै।
भाऊ जटियां नैं, मंडौतै मेह[1] न छाजै।
मांडोठी जगदीस, दास पुनि दाऊ बारी।
लक्षमन चढि थाबलि, गोपाल सलखांन उधारी।
सुनि पति मैं भगवानदास, जोबनेरि गोपाल रहे।
साधन की सेवा सरस, श्रीमुख आपन सौं कहै ॥३१६

गुपालभक्त की टीका

इंदव छंद जोबहिनेरि गुपाल रहैं जन, संतन इष्ट निबाह करचौ है।
बृक्कत होइ गयो कुल मैं, परक्षा करनैं घर-द्वारि परचौ है।
आइ कही जन मांहि पधारहु, सुंदरि देखु न नेम धरचौ है।
दूरि करौं तिय जाइ छिपावत, नैंन लखी मुख कौं स जरचौ है ।।५११
येक दई इक मांनत है रिस, देहु कपोलहि दूसर प्यारी।
नैंन भरे सुनि जाइ लये पग, भक्तन की कछु रीति नियारी।
संतन इष्ट सुन्यौ चलि आवत, पारिख लेत भई सिष भारी।
आप कही जन भाव कहां हुत, संत सराहत सो मम ज्यारी ।।५१२

मूल

छपै छंद जन राघौ रांमहि मिले, येते बिग भये बांदरा ॥
इम गरीबदास गुर गोबिंद गायो, दीन भयो नहीं और सूं।
मानदास जोरचो मन-बच-क्रम, हित चित जुगलकिसौर सूं।
स्यांमदास कै हरिनारांइण, स्यांमदीन सर्बंगि भयौ।
खेम रिसकजन हरिया हरि भजि, सर्व संतन कौ मत लयौ।
तजि बृखलीपति कुलकरतव्यता, कीयौ भगवत घरि सांदरा।
जन राघौ रांमहि मिले, येते बिग भये बांदरा ॥३१६

---

[1] मोह।

भगतन की पंकति बिषै, लाखै भाग बंटाइयौं॥
बंस बानरै भयौ, देस मारू कौ बसिया।
नरपति आग्यां मांहि, संत-अंघ्री-रज-रसिया।
रांम नांम सूं मगन, सुमरनी अधिक बनाई।
नीलाचल जगनाथ, दंडौता करतौ जाई।
राघौ प्रभु प्रष्ण भये, हूंडी देरु चलाइयौ।
भक्तन की पंकत बिषै, लाखै भाग बटाइयौ॥३१८

लाखा-भक्त की टीका

इंदव छंद
बांनर बंस कह्यौ जन[1] लाखहि, डौंम भयौ सबकै सिर मौरा।
संतन सेव करै बिधि भोजन, पावत है सुख सांझ र भौरा।
काल परचौ धरि स्वांग न आवत, होइ निबाह न ताकत औरा।
राति कही हरि गौहुर भैंसिहु, ल्यावत हैं करिये जन गौरा॥५१३
कोठि धरौ अन खूटत नाहि न, काढि पिसाइ र रोट बनावौ।
दूध जमाइ वीलोइ रि चौपरि, छाछि करौ फिरि यौ र जिमावौ।
नैंन गये खुलि सो तिय भाखत, आइ स देत भये प्रभु गावौ।
प्रातहि आवत गाड़ि र भैंसिहुं, रीति करी वह सन्त न भावौ॥५१४
क्यूं करि आवत गेहुर भैंसिहि, प्रीति कहौं ऊनकी नर धारै।
गांव हुतौ ढिग होत सभा उत, टूटि गये भइया सु बिचारै।
भक्त कही इक दंड चुक्यौ ग्रह, ल्यौ खबरें जन लाखहि तारैं।
गेहु पचास दये मन भैंसिहु, संग चले सबही सिरदारै॥५१५
मुरधर तैं चलियौ सुं दंडौतन, श्रीजगनाथ इसै पन जावै।
वारि दयो तन हेत घनौं मन, देह धरैं अनि तौ मुरझावै।
जाइ नजीक लगे सुखपालहि, भेजि दई हरि लाखहि नांवै।
देत बताइ गह्यौ कर जाइ, चलौ प्रभु पाइ सु बेग बुलावै॥५१६
नांहि चढौं सुखपाल लयो पन, यौं करिये इन भांति निहारौं।
स्यांम कही पहराइ सुमर्रनिहि, ल्यात बनाइ गरै महि धारौं।
बैठि चले सुखपाल लखी मन, आप बढावत है जन तारौं।
जाइ निहारत श्रीजगनाथहि, जांनत सो द्रिग तैं नहि टारौं॥५१७

---

१. अब।

व्याहत नांहि सुता सु कुवारिहु, है हरि सन्तन कौ धन भाई।
श्रीजगनाथ कही परनाइहु, मैं बसुदेवत नाम न आई।
होत बिदा नहि आत भरे द्रिग, भूप भगत्त लये अटकाई।
सुप्न दयो प्रभु नांहि करौ हठ, हूंडि लिखाइ दई सुखदाई ॥५१८
हुंडि हजार लिखे घर ल्यावत, सो क ल गाय र नाइ दई है।
साध बुलाइ खुवाइ दये सब, नेम सध्यौ सुख रासि भई है।
वाहि निमंत लई लक्षमी बहु, भक्तन कौं भुगतात नई है।
कीरति सत अपार अनंतहि, मैं बुधि मांहि बिचारि लई है ॥५१६

मूल

मनहर छंद

छाड़ि कैं निषध कुल नृगुण उपास्यौ नांव,
साधन की संगति भये[1] है बिग बांदरौ।
त्याग कैं जगत आस जाच्यौ है जगतपति,
सांई संमर्थ घरि जाइ कीन्हौं सांदरौ।
प्रानन कें नाथ आगैं हाथ जोरि गाये गुन,
भक्ति भंडार उन दयो मंडि मांदरौ।
राघौ कहै नीच भये ऊंच रटि रांम नांम,
वैसे भये मोक्ष तौ काहै कौं कोई कांदरौ ॥३१६

मूल

छपै छंद

दिवदास दान दयो बंस कौ, हरि सूं हठ करि भक्ति कौ ॥
सुत उपज्यौ सिरदार, जसौधरि हरि उर गरजै।
पाटि बैठि पद कीये, धरचो रांमांइण नरजै।
ता सुत निज नंददास, निगमचारी कवि हारी।
टकसाली पद प्रिय सकल गावै नरनारी।
तीन साखि त्रियलोक मधि, जन राघौ मघ गह्यौ मुक्ति कौ।
दिवदास दांन दयो बंस कौ, हरि सूं हठ करि भक्ति कौ ॥३२०

माधो प्रेमी भूंमि परि, लोटत नीकै प्रेम करि ॥
जांनत सब को आहि, परचौ ऊंचै तैं हरिजन।
गांवगढ़ागढ़ प्रचुर कीयो, साहिब साचौ पन।

---

१. भयो।

वहि भक्ति की रीति, पुत्र पोतां चलि आई।
संतन सूं अत प्रीति, नीति कबहू नं घटाई।
सुधि सरीरहू ना रहै, नृति-करत है ध्यांन धरि।
माधौ प्रेमी भूमि परि, लौटत नीकै प्रेम करि ॥३२१

माधौ[1] प्रेमी की टीका

इंदव छंद
माधव है पुर नांम गढ़ा गढ़, नृत्य करै बढ़ि प्रेम गिरै है।
साखत भूपति पारिख लैनहि, तीसर छाति नचात फिरै है।
घूघर साजि दिखावत साचहि, आयक राह बिचैस परै है।
त्रास भयौ नृपदास बढ्यौ हित, प्रीति लखो हद भाव धरै है ॥५२०

मूल

छपै छंद
इच्छा अंगद भक्त की, श्रीजगन्नाथ पूरी करी॥
हीरा आयौ हाथि, ताहि राजा मंगवावै।
सांम दांम दंड भेद कहै, मन मैं नहि आवै।
चल्यौ चढावन काज, आंनि मग मैं सो लीयौ।
नग नाराइन लेहु, डारि जल मांही दीयो।
कोस सात सत आइकैं, राघो धारि लीयौं हरी।
इच्छा अंगद भक्त की, श्रीजगन्नाथ पूरी करी॥३२२

अंगद-भक्त की टीका

इंदव छंद
भूप सलाहिदि-जू गढराय सु, सेनक कारह अंगद पापी।
नारि भगत्त सुं संतन सेवत, आइ कहै गुर गाथ अद्यापी।
देखि इकंत न मौंन रही कहि हे, जुवती इन क्यौं रति थापी।
ऊठि गये गुर नारि तज्यौ अन, आइ परचौ पग कांम कलापी ॥५२१
आंनन नाहि दिखावत है तिय, कौस करौं मुख नैंक दिखावौ।
मैं जु तज्यौ अन क्यूं करि खावहु, जीवन तौ कछ जौ तुम पावौ।
कैत तिया जिन बोलहु मो सन, प्रांन तज्यौ जब क्यूं न समावौ।
कौसु करौं जब जात रही बुधि, आइ दया कहि जां उन ल्यावौ ॥५२२
बेगि गयो परि कैं पग ल्यावत, कैत करौ गुर सिष्य भयो है।
माल धरी गर सीस तिलक्कहि, सीतल यो उर भाव नयो है।

---

1 माधौदास।

फौज चढ़ी तब आप चढ्यौ पुर, लूटत हीरन टोप लयौ है।
सौ लघु बेचि दये यक राखत, श्रीजगनाथ अरप्पि दयौ है ।।५२३
बात भई पुर भूप लई सुनि, जौ इक दे अनि माफ करे है।
आइ सबै समझाइ न मानत, जाइ कही उन नां अदरे हैं।
अंगद की भगनी नृप कैवत, दे विषि तौ तब पाइ परे हैं।
भोजन मै विष डारि दयो उन, भोग लगाई बुलाइ धरे हैं ।।५२४
ताहि सुता निति संगि जिमावत, वा कित जीमहु ऊठि गई है।
खाइ नहीं कछु बौत कही उन, रोइ लगी गरि कैस दई है।
रांड जिमाइ दये हरि काढ़त, पात भंये जरि वोप नई है।
सोक रह्यौ वह काहि सुनांवत, भूप सुनि जिम होत भई है ।।५२५
आप चले जगनाथ चढांवन, आई लये नृप फौज चढ़ाई।
द्यौ हमकूं नग कै अब झेलहु, चाकर हैं नृप के न बसाई।
नांहि बिगारहु न्हांइ र देबत, डारि दयो जल मांहि दिखाई।
ल्यौ प्रभुजी यह है तुम्हरौ नग, भक्त गिरा सुनि धारत आई ।।५२६
ये ग्रह आव तवै जल थाहत, ढूंढ रहे कहु खोज न पायो।
भूप गयो सुनि नीर कढावत, पाइ नहीं उर बौ दुख छायो।
श्रीजगनाथ कही उन द्यौं सुधि, आइ कह्यौ जन देह भूलायो।
जाइ लख्यौ हरि कंठ लस्यौ अति, नैंन भयौं सुख जाइ न गायौ ।।५२७
भूप भयो दुख छोड़ि दयो अन, अंगद ल्यावन बिप्र पठाये।
दे धरनौं नृप वैंन कहे सब, आइ दया चलि कैं पुर आये।
सांमुहि आंनि परयौ नृप पांइन, लाइ लयो उर पेम समाये।
भूप दयो सव भक्त करी तब, जीवत लौं हरि के गुन गाये ।।५२८

मूल

छपै छंद

भूप चत्रभुज भक्ति की, कौ नृप करै बरोबरी ॥
सुनैं आवतैं संत कौस, चहूं साम्हैं जावत।
हरमि आंनि सुख देत, प्रभु सम जांनि लड़ावत।
धोवत दंपति चरन, वही चरनांमृत लेवत।
स्यंघासन पधराइ, नृत्य करि है यौं सेवत।
गात रहि करौलीनाथ की, तन माया आगैं धरी।
भूप चत्रभुज भक्ति की, को नृप करै बरोबरी ॥३३

राजा चत्रभुज की टीका

इंद्व छंद
सैर चहुं दिसि जोजन चौकिहु, आत सुनै जन जाइ र ल्यावै।
दास पधारत है जब धांमहि, रीति करै सु छपै मधि गावै।
भूप सुनी इक बात अनूपम, खोलि खजांन सबैहि रिझावै।
पात्र कुपात्र बिचार नहीं उर, यौं कहि कैं नृप सीस धुनावै ॥५२६

भागवती दिज भूप कनैं हुत, भक्त कही इम चित्त न धारौं।
आसय पाइ सु कौं नय सौं पढि, हैं हिरिदै महि हेत अपारौ।
पारष लेवन भाट पठावत, भेष करचौ कहि दास द्रवारौ।
भूलि गयो कुल जाइ बखांनत, जांनि लये जिन माहि पधारौ ॥५३०

मासक जात रह्यो चित आवत, दास खरौ दरि जाइ सुनावौ।
जाहु निसंक गयौ नृप आवत, वै घर रीति करी उर भावौ।
साध भगत्ति सुलक्षन नांहिन, पारिख लै न पठ्यौ कि नचावौ।
कोस दिखाइ दयौ द्रबि निर्तत, कौड़ि जरी लपटाइ चलावौ ॥५३१

आइ कही नृप पर्षत मैं सब, द्रब दिखाइ र वैं हु दिखायौ।
खोलि जरी लखि है मधि कौड़िहु, भूप बिचारत नां चित आयौ।
पंडित भागवती स महापट, रैंनि अलोकि र आइ सुनायौ।
भेष भगत्ते जरी यह मांनहु, संपट मांहि सरीर लखायौ ॥५३२

पाव लये नृप आप पधारहु, आसय ल्याय भलैं समझावौ।
जात भये दिज पाइ परचौ भुज, पेम भयौ अति ग्यांन सुनावौ।
सीख मगैं नहि चालन देवत, कोस खुलावत लैत न दावौ।
सारहु कीर उभै इक द्यौ मम, देत लई दिज कै मन चावौ ॥५३३

आत सभा नृप बात चलैं बहु, रांम कहै सब ही खग झारे।
भूप सु बूझत बात कहौ सुनि, ल्यौ इन पंक्षिन हैं हरि प्यारे।
कोटि जिभ्या सु बखांन करौं तउ, पार न भक्ति पगैं सिर धारे।
ल्यौ खग कौं मन स्यांम रह्यौ लगि, रीति भली मिलि ये सु पधारे ॥५३४

मूल

छपै
संतन कौ सनमांन बहु, भूपति-कुल मैं इन करचौ ॥
सूरजमल अरु रांमचंद, टोडै पूजे जन।
साधु सेये मेरतै, जैमल साचै मन।

नीबौ नेमी अभैरांम, कांन्हर जनभक्ता।
ईस्वर बीरम करमसी, सुरतांन सुरक्ता।
भगवांन राइमल अखैराज, मधुकर संतन बसि परचौ।
साधन कौ सनमांन बहु, भूपति-कुल मैं इन करचौ॥३३४

जैमल की टीका

इंदव छंद जैमल भूप रहै पुर मेरतै, जांनत भक्ति कथा कहि आये।
संतन सेव करि अति प्रीतिहि, हेत सुनौं हरि फेरि लड़ाये।
मंदिर कौं तलि जांनि छतां परि, बंगलहुं चित रांम कराये।
सुंदर सेज पिछांवन वोढ़न, पांन जरी परदा लगवाये॥५३५
नीसरनी धरि जाइ सुधारत, दूरि करै फिरि चौकस राखै।
यौं मन धारत स्यांम पधारत, पांन उगारत पौढन भाखै।
जांन तनै तिय जाय चढ़ी धरि, सोत किसौर लखे पति दाखै।
होत सुखी सुनि वाहि डरावत, भाग बड़े तिय के हम पाखै॥५३६

मधुकर साह की टीका

इंदव छंद साह मधुक्कर नांव करचौ सिधि, स्वांग गहै गुन छाड़ि असारैं।
भूप भयौ सुख रूप सु ओंड़छ, लेत बड़ौ पन नांहि बिसारैं।
माल धरै उनकें पग पीवत, भ्रात दुखी खरकै गरि डारैं।
धोइ पिये पग न्ह्याल करचौ मम, दुष्ट परे पग है द्रिग धारैं॥५३७

मूल

छपै **भक्ति उजागर करन कौं, खैमाल रतन राठौर हुव॥**
निज दासन कौ दास, सरस सुत रांमट राजै।
सेवा सुमर्न ध्यांन, भक्ति दसधा धरि गाजै।
नांती नृमलकिसोर, जेण जस नीकौ गायौ।
छाजन भोजन अरपि, समझि साधन सिर नायौ।
इम करी जैति जैतारण्यां, जन राघो जिम प्रह्लाद ध्रुव।
भक्ति उजागर करन कौं, खेमाल रतन राठौर हुव॥३३५
जक्त भक्ति बांकीक सीस, रांमरैंनि रजु करि दई॥
दुसह कर्म उर धरचौ, जहर ज्यूं पर हित संकर।
का जांनै अनिराइ, भक्ति महिमां निंदाकर।

प्रगट गांध्रबी ब्याह सु, ताकौ कीयौ रास मैं।
सकुंतला दुसकंत, पुत्र भरतादि जास मैं।
आंन नृपति सुनि कुमन ह्वै, यह काहूपैं नां भई।
जक्त भक्ति बांकीक सीस, रांमरैंनि रजु करि दई ॥३३५

रांमरैंनि की टीका

इंदव पूनिव सर्द समाजहि निर्तत, रास-बिलास करचौ अति भारी।
छंद भीजि रहे जुग रांम कही तिय, दैंहि कहा दिज जो तुम प्यारी।
सोधि बिचारत है पुतरी प्रिय, रूपवती अनुरूप निहारी।
सोचि परे सब जांइ रु ल्यावत, कान्ह बने उन देत कुमारी ॥५३८

मूल

छपै **गुर गोबिंद संतांन सूं, रांम बांम साचै मतै॥**
साधां कह्यौ सु सबद, तांहि आछैं उर आंन्यौ।
नवमां प्रेमां प्यार, दूसरौ धरम न जांन्यौं।
यह पको पन आहि, गोत्र अच्युत प्रिय लागै।
खीर-नीर सुबिचार, आंन कहूं मनहुं न पागै।
भक्त सबै राजां कहैं, राघो नारांइन नतै।
गुर गोबिंद संतांन सूं, रांम बांम साचै मतै ॥३३६

राजांबाई की टीका

इंदव राजां रु रांम मधुब्बन आवत, दांम रखे नहि संत जिमाये।
छंद मारग कौं खरची न उदार सु, हाथनि मांहि करा दिठ आये।
मोल हुते रुपया सत पांचक, नाभा गये तिन कौं पहराये।
बोलि कही पति कौं लखि रीझत, ब्याज लये घरि आइ खिनाये ॥५३९

मूल

छपै **जुगल बात खेमाल की, ते किसौर आदर करी॥**
पगनि घूघरू साजि बाजि, नग धरपैं निरत्यौ।
कृष्ण कलस धरि सीस, ल्याय आपन जल बरत्यौ।
नृमल गिरा उद्यौत, भक्ति की रीति उचारन।
सील सुद्ध रस रासि, साध पदरज सिर धारन।

बय छोटी गुन है बड़े, जग मैं महिमा बिसतरी।
जुगल बात खेमाल की, ते किसौर आदर करी ॥३३७

किसौर की टीका

इंदव छंद
छाड़त देह खिमाल भरे द्रिग, पूछत है सुत खोलि कहीजे।
देंन कहौ जु भरचौ घर संपति, बात रही जुग सो सुनि लीजे।
मांनि बड़ाइ समाइ रही बुधि, नांहि बनी मन पैं अब खीजे।
सीस धरचौ कलसा जल नावत, नूपर साजि न निर्तत भीजे ।।५४०
होत सबै कुप कांम सु डीलहि, नाति किसौर कह्यौ मम दीजे।
बाल करौं जुग जोंलग जीवत, ऊठि मिलै निहचै यह कीजे।
धांम चले सुख पाइ लयो पन, साधत है निति भाव सु भीजे।
बै लघु भक्ति बड़ी बिसतारत, साधन सेवत है सब रीझे ।।५४१

मूल

छपै
फलत बेलि खेमाल की, मधुर महा अति पोंन फल ॥
पग्यौ प्रेम परपक्क, पथक पंक्षी जन पावत।
हरीदास हद करी, हंस हरि-भक्त लड़ावत।
रांम रीति वह प्रीति, अनन्य मन बाचक कायक।
हरि प्यारे गुर रांम, तिनूं कूं पूजन लाइक।
राघो साध निहारि कैं, प्रफुलत ह्वै हिरदौ कवल।
फलत बेलि खेमाल की, मधुर महा अति पोंन फल ॥३३७
अति उदार कलिकाल मैं, निर्मल नीबा खेतसी ॥
निति ह्वै कथा निकेत, दरस संतन को पावैं।
गगन मगन गलतांन, उभै भ्राता जस गावैं।
छाजन भोजन देइ, भक्ति दसधा के आगर।
रांमहि रटि राठौर भये, तिहुं लोक उजागर।
जन राघो बढ्यौ अंकूर उर, हाथि चढ़ी निधि हेतसी।
अति उदार कलिकाल मैं, निर्मल नीबा खेतसी ॥३३८
प्रेम मगन कात्याइनी, देत वारि तन के बसन ॥
गोपिन ज्यौं आबेस, हो गदगद सुर ग्रीवां।
जगत अजा परपंच, रहत बैरागहु सींवां।

चली जात मग आप, गात ऊंचै सुर भगवत।
झींझ मजीरा मृदंग, जांनि ये पादप बजवत।
राघो द्रुम-दल पात लगी, बोलत सुनि होवै प्रसन।
प्रेम मगन कात्यायनी, देत वारि तन के बसन॥३३९
गोपाल बिरहि गोपी जरी, ज्युं मुरारि देही तजी॥
मरुत देस मै गांव, बिलूंदा परगट होई।
साध सभा परमांण, महौछ्व उत्म सोइ।
अंघ्री नूंपर साजि, स्यांम-सुंदरहि रिझायौ।
प्रांन पयांनौं कीयो, देसी जगदीस दिखायौ।
राघो अैसी को करै, प्रीति मांहि नांहीं कजी।
गोपाल बिरही गोपी जरत, ज्यौं मुरारि देही तजी॥३४०

मुरारिदासजी को टीका

इंदव छंद
दास मुरारि जु भूपति के गुर, न्हाइ र आवत कांन परीजे।
पूजन येक चमार करै कहि, पात्र चर्नांमृत कौ जन लीजे।
जात भये घरि कांपि उठ्यौ वह, दै हमकौं अब पांन करीजे।
नींच कहै हम तैं अति ऊंचहि, जानत नैं तव यौं कहि भीजे॥५४२
नैंन बहै जल मो बड़ है दुख, हौ तुम धीर सु मोहि न छाजै।
लेत भये हठ सौं जनता पट, जाति न ले हरिभक्तिहि काजै।
बात भई सब गांव स निंदत, भूप सुनी यह वान सुहाजै।
देखन आत भयौ प्रभु जी वह, भाव नहीं लखि यौं उन राजै॥५४३
पूजन सू अति हेत गये तजि, भूप दुखी सुनिकै यह बातैं।
होत समाज समंत्सर मैं निति, दीखत नांहि लख्यौ उतपातैं।
ल्यांन चले जित दास मुरारिहु, दंडवतं करि है असु-पातैं।
देखत नां मुख फेरि दई पिठि, लोग कहै गुरहू सिष ख्यातैं॥५४४
जोरि खरौ कर दीन कहै अति, दंड करौ सिर यौं मुख भाखी।
नां घटती मम आप कही घटि, भांति करी बढती तुछ राखी।
होत खुसी सुनि दै दिसटांतहि, लै बलमींक कही बहु साखी।
आत भये सुनि संत पधारत, होत समाज उसौ सब दाखी॥५४५
भौत गुनी जन नांचत गांवत, साधन कै चित स्वांमि न देखैं।
आप उठे पग घूंघरु साजि र, सप्त सुरैं त्रिय ग्रांम बसेखैं।

आरन जान समैं रघुनाथहि, गात चले तन जीवन लेखैं।
होत सबै दुख दास मुरारि न, पासि गये हरि कै अबरेखैं ॥५४६

चतुरपंथ बिगति बरनन—मूल

छपै वै च्यारि महंत ज्यूँ चतुर ब्यूह, त्युं चतुर महंत नृगुनी प्रगट ॥
सगुन रूप गुन नाम, ध्यांन उन बिबिधि बतायौ।
इन इक अगुन अरूप, अकल जग सकल जितायौ।
नूर तेज भरपूरि, जोति तहां बुद्धि समाई।
निराकार पद अमिल, अमित आत्मां लगाई।
निरलेप निरंजन भजन कौं, संप्रदाइ थापी सुघट।
वै च्यारि महंत ज्यूँ चतुर ब्यूं, त्यूं चतुर महंत त्रिगुनी प्रगट ॥३४१
नानक कबीर दादू जगन, राघो परमात्म जपे ॥
नानक सूरज रूप, भूप सारै परकासे।
मघवा दास कबीर, ऊसर सूसर बरखा-से।
दादू चंद सरूप, अमी करि सब कौं पोषे।
†बरन निरंजनी मनौं, त्रिषा हरि जीव संतोषे।
ये च्यारि महंत चहुं चक्क मैं, च्यारि पंथ निरगुन थपे।
नानक कबीर दादू जगन, राघो परमात्म जपे ॥३४२
इन च्यारि महंत त्रिगुनीन की, पधित सूं निरंजन मिली ॥
रांमांनुज की पधित, चली लक्ष्मी सूँ आई।
बिष्णुस्वांमि की पधित, सु तौ संकर तैं गाई।
मध्वाचार्य पधित, ग्यांन ब्रह्मा सुबिचारा।
नींबादित की पधित, च्यारि सनकादि कुमारा।
च्यारि संप्रदा की पधित, अवतारन सूं ह्वै चली।
इन च्यारि महंत त्रिगुनीन की, पधित निरंजन सूं मिली ॥३४३
जन नानक दादूदयाल, राघो रवि ससि ज्यूं दिपै ॥
मध्वाचार्य कै मत ब्रह्मा, बिष्णस्वांमि कै पति उंमा।
नीबादित कै सनकादिक मत, रांमांनुज कै मत रंमा।
कलपबृक्ष पुनि मध्वाचार्य, बिष्णस्वांमि पारस तक्ष।
नीबादित चिंतामनि चहुंदिस, रामानुज कलि कांमदुघा लक्ष।

†टिप्पणी—बूंद

ये च्यारि संप्रदा च्यारि मत, क्षत ऊपरि कतहुं न छिपै।
जन नानक दादूदयाल, राघो रवि ससि ज्यूं दिपै ॥३४४

श्री नानकजी को पंथ बरनन

उत्तर दिस उत्म भयो, नृगुन भक्त नानक गुरू॥
क्षत्रीकुल उतपत्ति, ताहि सबही जग जांनैं।
मिले आइ प्रब्रह्म, चरावत पाडी तांनै।
कह्यौ पाइ रे दूध, कही ये छोटी पाडी।
दूहण कौ तौ बैठि, दूही तब आई आडी।
सीस हाथ धरि यौं कह्यौ, नृगुन भक्ति बिसतार कुरू।
उत्तर दिस उत्म भयौ, नृगुन भक्त नानक गुरू॥३४५

इंदव चित की बृत्ति जोति करि हरि प्रीति सु,नांव सूं रत्त भयो असैं नानक।
ज्ञांन करै मुख आंनन उच्चरै, रांम भजै रस प्रेम कौ पांनक।
केवल येक अद्वीत अदभ्भत, उत्तर देस मैं ऊपजै मांनक।
राघो करारौ महाकरणी जित, काल करम्म कैं दै गयौ चानक ॥३४६

छपै श्रीनानक गुरतैं ऊपजै, उभै भ्रात हरि भक्त ये॥
लक्ष्मीदास ग्रह बास तास के साहिबजादा।
श्रीचंद कै बैराग, उदासी जा परसादा।
श्रीचंद के चतुर सिष, चहुं दिसा पुजाये।
उत्तर पूरब दखिन पछिम, असथांन बनाये।
अलमस्त फूल साहिब भगत, भगवंत हसन बालू प्रिये।
श्रीनानक गुर तैं ऊपजे, उभै भ्रात हरि भक्त ये॥३४७
श्रीनानक गुर पद्धित चली, ताकौ करौं बखांन जू॥
निराकार निरलेप निरंजन, नानक मिलिया।
उनकै अंगद भये, रांम भजि रांमहि रलिया।
अनंद के पुनि अमरदास, अमरापद पायौ।
रांमदास ता पाटि, रांम कै अर्जुन भायौ।
हरि गोबिंद हरिराइ जन, हरि कृष्ण तजी हद आंन जू।
श्रीनानक गुर पद्धित चली, ताकौ करौं बखांन जू॥३४८

इति नानक पंथ

अथ श्रीकबीरजी साहिब कौ पंथ बरनन—मूल

छप्पै ¹पूरब महि प्रगट भये, जन कबीर निरगुन भगत ॥
कासी बाहरि निकसि, कहूं कौ जात जुलाहौ।
बृक्ष तरैं इक बाल परचौ, सो बोल-बुलाहौ।
ताकौ लै घर गयौ, सौंपि तिरिया कूं दीनौं।
ग्याती सकल बुलाइ, बहुत उछब तिन कीन्हौं।
बड़े भये रांमहि भजै, काहू सूं नांहीं सकत।
पूरब महि प्रगट भये, जन कबीर निरगुन भगत ॥३४९
जगत भगत षटदरस सूं, रहे कबीर निसंक मन ॥
परब्रह्म गुर धारि, भरम सब द्वैत त्यागियो।
पंडो जरत उबारि, राजगृह प्रेम पागियो।
बालिध द्वै बर पाइ, भक्त षटदरसन पोषे।
ब्राह्मण झूठहि न्यौत्या ये, वह महंत संतोषे।
स्याह सिकंदर जीतियौ, सभा बीचि नरस्यंघ बन।
जगत भगत षटदरस सूं, रहे कबीर निसंक मन ॥३५०
अथाह थाह पांऊं नहीं, क्यूं जस कहूं कबीर कौ ॥
श्री रांम निरंजन रूप, जाति जग कहै जुलाहौ।
कासी करि बिश्रांम, लीयौ हरि भक्ति सु लाहौ।
हींदू तुरक प्रमोधि, कीये अग्यांन तें ग्यांनी।
सबद रमैंणी साखि, सत्य सगला करि मांनी[1]।
प्रमांनंद प्रभु कारणै, सुख सब तज्यौ सरी (र) कौ।
अथाह थाह पांऊं नहीं, क्यौं जस कहूं कबीर कौ ॥३५१

---

१. जांनि।

---

¹'स' प्रति का अतिरिक्त पद—

मोटो भगत कबीर, भगत सब मांहे सीरोमन।
जामन इमृत भाव, पीय रस भगत करौ मन।
इक रांम रांम रस रांम, जप मुख इम इमृत रस।
भगतिन हिंत बैराग, कथ नीत हरि जस।
कुल नीचौ करणी बडी, कब लग बात बखांनिये।
भगतन के सिर सेहरो, असै कबीर जांनिये ॥

मनहर छंद

अजर जराइ कैं बजाइ कैं बिग्यांन तेग,
कलि मै कबीर अैसे धीर भये धर्म के।
मारचौ मन मदन से लदन सरीर सुख,
काटे माया फंदन से बंधन भ्रम के।
निडर निसंक राव रंक सम तुल्य जाकै,
सुभ न असुभ मानै भै न काल-कर्म के।
जीति लीयो जनम जिहांन मैं न छाड़ी देह,
राघो कहै रांम मिलि कीन्हे कांम मर्म के ॥३५२

मूल

छपै

ज्यूं नारांइन नव निरमये, त्यूं श्री कबीर कीये सिष नव ॥
प्रथमहि दास कमाल, दुतीय है दास कमाली।
पद्मनाभ पुनि त्रितीय, चतुरथय रांम कृपाली।
पंचम षष्ठम नीर खीर, सप्तम सुनि ग्यांनी।
अष्टम है ध्रमदास, नवम हरदास प्रमांनी।
नवका नव नर तिरन कौं, जन राघो कहचौ पयोध भव।
ज्यूं नारांइन नव निरमये, त्यूं श्री कबीर कीये सिष नव ॥३५३
कबीर कृपा तैं ऊपजी, भक्ति कमाली प्रेम पर ॥
सदा रही लैलीन, सील की अवधि अपारा।
क्षमां दया सतकार, झूठ जांन्यौं संसारा।
श्री गोरख मन भई, कमाली पारिख लीजै।
अलख जगायो आइ, हमारौ पत्र भरीजै।
राघौ डारचौ येक बर, उमंगि पत्र परियौ सु घर।
कबीर कृपा तैं ऊपजी, भक्ति कमाली प्रेम पर ॥३५४
श्री कबीर साहिब्ब पैं, ज्ञांनी पायो ज्ञान कौं ॥
पछिम दिसि उपदेस, कीयौ परमारथ काजै।
भक्ति ज्ञांन बैराग, सहित अबोपर राजै।
कांम क्रोध मद मोह, लोभ मछर नहीं काई।
धर्म सील संतोष, दया दीनता सुहाई।

राघो रोस रती न उर, दूरि कीयो अभिमांन कौं[1] ।
श्री कबीर साहिब्ब पैं, ज्ञांनी पायो ज्ञांन कौं ॥३५५

श्री कबीर कृपा करी, धर्मदास परि धर्म की ॥
करता सति साहिब्ब, और दूसर नहीं जानैं ।
भक्ति धरी अति गूढ़, देखिकैं सब हैरांनैं ।
चौको अरु आरती, पान परवानां दीजै ।
बंदी छोड़िहि संत, सेव मन बच क्रम कीजै ।
गढ़ै मंडलै धांम भल, राघो कही सु मरम की ।
श्री कबीर कृपा करी, धर्मदास परि धर्म की ॥३५६

गुर धर्मदास कौ धर्म धनि, नींकैं धारचौ सिष इन ॥
चूड़ामनि चित चतुर, पुत्र कुलपती बंस के ।
सर्बंगि साहिबदास, मूल दल्हण अंस के ।
जाग[2] जग सूं तरक, भक्ति भगता कौं प्यारी ।
मुर्ति[3] गुपाल श्रुति सांधि, सकल सत-संगति प्यारी ।
सिष पांच प्रसिध या कबित मैं, राघो नाती द्वै कहिन ।
गुर धरमदास कौ धर्म धनि, नींकैं धारचौ सिष इन ॥३५८

इति कबीर साहिब को पंथ

अथ श्री दादूदयालजी कौ पंथ बरनन

छपै दादू दीनदयाल के, जन राघो हरि कारिज करे ॥टे०
दल भये सांभरि सात, सवनि के भोजन पायौ ।
अकवर्या सूं मिले, तेजमय तखत दिखायौ ।
काजी कौ कर गल्यौ, रूई की रासि जराई ।
चौरी पलटे अंक, समद मैं भ्याज तिराई ।
साहिपुरैं साहज मिले, हरि प्रताप हाथी डरे ।
दादू दीनदयाल के, जन राघो हरि कारिज करे ॥३५९

दादू जन दिनकर दुती, बिमल बृष्टि बांणी करी ॥
ज्ञांन भक्ति बैराग, भाग भल सबद बतायौ ।
कोड़ि गृंथ को मंथ, पंथ संखेप लखायौ ।

---

१. कूं । २. जागू । ३. सुर्ति ।

बिसुद्ध बुद्ध अबिरुद्ध, सुद्ध सर्बग्य उजागर।
प्रमांनंद परकास, नास निगड़ांध महाधर।
बरन बूंद साखी सलिल, पद सरिता सागर[1] हरी।
दादू जन दिनकर दुती, बिमल बृष्टि बांणीं करी ॥३६०

टीका

मनहर छंद

सागर मैं टापू तामैं तीन सिध ध्यांन करैं,
येक कूं जु आग्या भई जीव निसतारिये।
नभबांनी भये ऐक सिध सो गुपत भये,
पीछैं दोइ रहे उन प्रभु उर धारिये।
धरा गुजरात तहां नदी बही जात येक,
ब्राह्मण सु न्हात सौंज पूजा की संवारिये।
पुत्र की चाहि अति बैठौ साग्रवंती जिति,
पींजरा आयौ तिरत याकौं तौ संभारिये ॥५४७

देख्यौ खोलि ताहि खेलै लरिका सो मांहि उन,
लयो गरिबांहि यह प्रभु मोहि दयो है।
भई नभबांनी केइ उधरैंगे प्रानी या सौं,
सति[2] सुनि जांनीं मन अचंभा जु भयो है।
लोदीरांम नाम नागर ब्राह्मण जांम,
लछि जाकै धांम बहु लैकै घर गयो है।
बांटत बधाई पुत्र हौ ज नहीं भाई मेरे,
माया यौं लुटाई धूरि जांनि कैं रुपैयो है ॥५४८

बड़े भये दादूजू बालकनि मांहि खेलै,
बृद्ध रूप धारि हरि पीसा आंनि मांग्यौ है।
देखि बिकराल रूप बांल सब भाजि गये,
रहे येक दादूजु माथै भाग जाग्यौ है।
कहै मैं जु ल्याऊं पीसा ठाढ़े रहौ इहां ईसा,
बेगि जाइ देख्यौ खीसा पीसा हाथ लाग्यौ है।
दौरि कैं सताब आयौ प्रभु लेहु पीसा ल्यायौ,
कीजिये जु मन भायो मेरौ डर भाग्यौ है ॥५४९

---

१. सागुर। २. संति।

सूधौ कर कीयौ जब प्रभु जांनि लीयौ तब,
नग्र मैं तू जाहु अब याके पांन लाइये।
सुनित सिताब गये तंबोली तैं पांन लये,
आंनि कैं हजूरि भये हाथ ले चबाइये।
रीझि कैं त्रिलोकनाथ सीस पैं जु धरचौ हाथ,
ऊमंगि चूंनां पांन काथ दादू कौं खवाइये।
अंतरध्यांन भये हरि दादूजू गये घरि,
मन मैं बिचारी फिरि ध्यांन लै धराइये ॥५५०

मिष्टबांनी करी तामैं गायो हरी प्रेम ते जु,
प्रगटे सांभरी दादू स्वांग नहीं धरचौ है।
दिवालै पद गावै असुरन कूं न भावै,
कोउ आइकैं संतावै तासूं रोसहु न करचौ है।
काजी आइ दीन्ही थाप मनमैं न ल्यायो आप,
ताही समैं चढ़ी ताप भुजा दूखि मरचौ है।
येक दिनां फिरि गाये पांच सात सुनि आये,
पकरि उठाये लै कैं भाखसी मैं जरचौ है ॥५५१

दिवालै भाकसी दोऊ जगां बैठे खुसि सब,
काजी रहे खसी कछु पार नहीं पायो है।
सुनी सिकदार सब दुनी की पुकार अति,
दादू डारौ मारि हाथी मत्वारौ झुकायो है।
नीरै हू न जाइ पीछे पीछे धरै पाइ बैठौ,
स्यंघ गरराइ देखि दूरि तैं नसायौ है।
छींत मंडवाई कोऊ दादू कै जु जाई दैगो,
सौं रुपैया भाई असौ बांचिकैं सुनायो है ॥५५२

येक साहूकार पनधारी द्रसन कौं गयो जब,
दादू असैं कह्यौ दंड छीत बांचि दीजिये।
पकरि लै जाई अंक छींत पलटाई कोऊ,
दादू कै न जाई दंड ताकै पासि लीजिये।
येक दिनां सात नौंते येकठे ही आये होते,
बुलाबे कौं आये जेते चालि करि जींजिये।

प्रभु सात देह धरि सबही कैं जैयें[1] घरि,
हरि येक रूप पीछै हूं रहीजिये ॥५५३

काजी फिरि कही दादू मारौंगो सही अब,
रूई घर महीं बहु बिनां आगि बरी है।
बैल बिन जारे उन सबही उधारे अजु,
पद सुनि धारे उर बासनां सु जरी है।
साहिपुरै[2] आये तहां रूप द्वै दिखाये हम,
भूले फैंटा छरी धरि भांवनां सु फरी है।
खादू[3] मैं झुकायौ हाथी दादू कै है साथी प्रभु,
चरन छवाइ सूंडि सीस परि धरी है ॥५५४

सातसै ही साह तामैं सात कोरि माल भरयौ,
गरयौ हैं गरब झ्याज सागर मैं अरी है।
अपने जो इष्टदेव सवही संभारे अजु,
पचि पचि हारे बहु बूड़े ते जु खरी है।
देसहु ढूंढार तहां मांनस्यंघ राज करै,
सहर आंवेर जहां गावै दादू हरी है।
ऊपर लेखन पैं जु चढ़ि येक साहूकार,
दादू दादू कह्यौ टेरि फेरि झ्याज तरी है ॥५५५

सागर के तटि देव नगर्निकटि जहां,
सातसै ही साह सेठ नंद आदि आये हैं।
दादू गुर आये जल बूडत जिवाये बहु,
कपरा बटाये अर्ध माल लै खुवाये हैं।
नांनां पकवांन गिरि मेवा मिष्टांन जामैं,
दिज अरु साध षट-दरसन जिमाये हैं।
राघो कहै संन्यासी हिंगोल जु कपिल मुनि,
आंबांवती आइ गुनी बचन सुनाये हैं ॥५५६

अकबर महिमां सुनि दादू जु बुलाइ लये,
गये बेगि गैल मांहि ढील नां लगाई है।

---

१. जैयें। २. साहिबपुरै। ३. खाटू।

अकबर बीरबल बुधि के आगर दोऊ,
दादू अनभय के घर चरचा चलाई है।
गोष्टि समझायौ गैबी तखत दिखायौ ताहि,
जाहि तेजवंत देखि करत बड़ाई है।
गऊ छुड़वाई कोउ जीव न संताई अरु,
सौगन कढाई अजू साहिब दुहाई है ॥५५७

जुगम[1]-मूल

छपै **दादूजी के पंथ मैं, ये बावन द्रिग सु महंत॥**
प्रथम ग्रीब मसकीन, बाई द्वै सुन्दरदासा।
रज्जब दयालदास, मोहन च्यारचूं प्रकाशा।
जगजीवन जगनाथ, तीन गोपाल बखांनूं।
गरीबजन दूजन, घड़सी जैमल द्वै जांनूं।
सादा तेजानंद, पुनि प्रमांनंद बनवारि द्वै।
साधूजन हरदासहू, कपिल चतुरभुज पार ह्वै॥३६१
चत्रदास द्वै चरण, प्राग द्वै चैंन प्रहलादा।
बखनौं जग्गोलाल, माखू टीला अरु चांदा।
हिंगोलगिर[2] हरिस्यंघ, निरांइण जसौ संकर।
झांझू बांझू संतदास, टीकूं स्यांम हि बर।
माधव सुदास नागर निजांम, जन राघो बरणि कहंत।
दादूजी के पंथ मैं, ये बांवन द्रिग सु महंत॥३६२

श्री स्वांमी गरीबदासजी कौ बरनन

छपै **दादू दीनदयाल की, गरीबदास गादी तपे॥**
भजन सील की अवधि, सेस सिभू सुत जांनूं।
बींन गांन परबीन, दूसरे अज सुत मांनौं।
रिवसुत सम दातार, संत पर्षत मिथलेसं[3]।
सिंध-सुता कर चढ़ी[4], सु तौ संची नहीं लेसं।
दिल्लीपति झ्यांगीर दत, देत ताहि नांहि न लिपे।
दादू दीनदयाल की, गरीबदास गादी तपे॥३६३

---

१. जगम। २. हिंगोपालगिर। ३. मथलेस। ४. लगी।

मनहर

दादूजी कै पाटि तप्यौ गाइये गरीबदास,
जाकै पासि रिधि सिधि अनबंधी आवई।
गोबिंद गुनांनबाद आदि ऊंकार-नाद,
छबिसौं छतीस राग ग्रंधब ज्यूं गावई।
नारद ज्यूं बींनकार जग मधि जै-जै-कार,
गुपत गुनचास तांन प्रगट बजावई।
राघो जांणी रांम रीति हरिदै हरिजी सूं प्रीति,
भगति को पुंज भगवंत जी कौं भावई॥३६४

दादूजी सुवन सूरबीर धीर सापुरस,
गरीबनिवाज यौं गरीबदास गाइये।
जाकौ जस कहत सुनत सुधि बुधि बढै,
रिजक फराक होत ग्यांन ध्यांन पाइये।
हिकमति हुंनर हकीम लुकमांन के से,
अति ज्ञांनी गाजी अद नितिही मनाइये।
तन मन धन अर्पि रांमजी रिझायो जिन,
राघो सोचै राति दिन सो' व क्यूं[1] रिझाइये॥३६५

दादूजी कै पाटि दीप गाइये गरीबदास,
जाकै पासि रिधि सिधि दै-दै-कार देखिये।
बक्ता जैसे व्यास मुनि भजन प्रहलाद पुनि,
नरन मैं नारद ज्यूं गुनकौं बसेखिये।
भक्ति कौ पुंज भगवंत रच्यौ भुव परि,
रहै तिकौ सारौ सनकादिक मैं लेखिये।
राघो धोरी ध्रम धुज प्रसिधि प्रवीण पुंज[2],
गुरकै पछोपै गरवाई अति पेखिये॥३६६

दादूजी कै पाट परि गाइये गरीबदास,
जाकै पासि दिल्लीपति द्रसन कौं आवई।
ग्रीषम की समैं महा तृषा जु तरल लगी,
सब ही को चित भगी घटा बरखावई।

---

१. सोबकूं। २. पूज।

अजमेरि सांभरी सहेत कछु द्रव्य लेहु,
साहिब कै नांइ तुम देहु अर खावई।
राघो कहे गैब के तुरंग दिखलाइ दीये,
झांगीर पाव लीये ग्रीब मन भावई ॥३६७

स्याह जहांगीर जब चले अजमेर पीर,
सुने हैं गरीबदास द्रसन कौं आयो है।
कूवा अरु बावरी तलाब सब सूके परे,
ग्रीषम की रुति सब कटक तिसायौ है।
गायो है मलार मेघ बीनां झुनकार करि,
सांवन की घटा जैसें घन बरखायो है।
दोऊ कर जोड़ि लीये सांभरि अजमेरि दीये,
स्वांमीं न कबूल कीये स्याम न भायो है ॥३६८

चेतन चिराक बंदा दादूजी दयाल नंदा,
प्रगट प्रचंड देग तेग दोऊ चढतौ।
तेजसी त्रिकाल-द्रंसि[1] प्रचाधारी गुर प्रसि,
नांवकौ लिहारी भारी रांम रांम रटतौ।
सीलहू संतोष ध्यांन ग्यांनवांन भागवांन,
क्षमां दया ध्रम जांन गुरबांणी पढ़तौ।
रघवा दैदीपमांन ब्रह्म मैं समाइ प्रांन,
लोक परलोक जस रह्यौ बोल बढ़तौ ॥३६९

अन्यत

मनहर छंद

भूपनि मैं महा भूप रूप तौ अनूप जाकौ,
चतुरन मै चतुर सु तौ गुनीयन मैं गुनी है।
बुधि कौ बाख्यांन ज्ञांन जांनिये बासिष्ट जैसौ,
संक्र सौ ध्यांन अटल सेस धुंनि सुनीं है।
भक्ति तौ नारदा सी, सारदा सौ शबद जाकौ,
जोग जुगति गोरख सौ मुनियनि मैं मुनी है।
गांऊं तौ गरीबदास और की न करौं आस,
कहत नरस्यंघ अैसौ दूसरौ न दुनीं है ॥३७०

---

१. द्रसि।

सुन्दरदासजो बड़ा कौ बरनन

इंदव छंद
दादू दयाल की साल सिरौमनि, असे घड़े घटवोपमां लाइक।
नारद ज्यौं निश्चै निरभै भये, ग्यांन परापरी बेहद बाइक।
भींव ज्यूं भ्रम उड़ायौ अकासकौं, असौ बली सिध साध सहाइक।
राघो कहै पुनि बृद्धि पछोपा की, येक सूं येक अनूप महाइक ॥३७१
इम रांम रजा रजबंसी बड़ौ, सति सुन्दरदासजी पंथ मैं पूरौ।
गौपि रह्यौ पसरचौ न पसारे मैं, न्यारे मैं ऊपज्यौ ग्यांन अंकूरौ।
निरबोध निरोध[1] कीयौ निश्चै, उतरचौ पट[2] मैं पट ह्वै गयौ दूरौ।
राघो कहै गुर दादू की दौलति, मोखि भयौ करि मंगल तूरौ ॥३७२
उत्तर देस नरेस कौ बालक, आइ मिल्यौ पतिसाहि कै तांई।
पेलि दयो मजबूत मवासैं मैं, जात ही रारि परी परचौ घांई।
चाकर लोग चम्मकि गये भजि, ठाकुर खेत रह्यौ उहि ठांई।
राघो कहैं सति सुंदरदासजि के रक्षपाल भये तहां सांई ॥३७३
देस कौ लोग मिल्यो मथुरा मधि, आइ कहे समचार सती के।
अब तो गृह जांऊं नहीं बृह उपज्यौ, जाइ परौं काहू पाइ जती के।
त्यागे हथ्यार तुरी चढ़िबौ सब, आयुध छाड़ि दीये गृहसती के।
राघो कहै सति सुंदरदासजि, चालि गये गुरज्ञांन पती के ॥३७४
परका ले मिठाई धरी जब आगैं, सु नागै कही सुनि बात रे भाई।
सांभरि मैं प्रगटें सुगुरू करि, दादू कै पाइ परौ तुम जाई।
मांनि प्रतीति चले अति आतुर, प्रांन की प्रीति मिले सुखदाई।
राघो कहै सति सुंदरदासजि, मिले ब्रष द्यौस हि मैं सुधि पाई ॥३७५
भगवौं करि भेष रहे ब्रष येकहू, जैसें रहै मनि-हींन भुजंगा।
काहू नै आइ पढे पद स्वांमी के, मांनौ सुमेर तैं ऊतरी गंगा।
ज्वू धर सूं सनकादिक अंबर, असैं चले जैसै हंस बिहंगा।
राघो कहै सति सुंदरदासजी, दादूदयाल के सोभित संगा ॥३७६

मनहर छंद
बीकानेरि राजा लघु भ्राता नांम सुंदर हौ,
बड़ौ सूर बीर महा धर्म तेग सारी है।
पातिसाहि फौज दई काबिल की महुमि भई,
सत्रुन सौं लरे आप घांऊं परे भारी है।

---

१. निजबोध नरोध। २. घट।

खेत मैं न पाये सोऊ लै गयो उठाइ कोऊ,
आयौ पुर मथुरा मैं सती सुनी नारी[1] है।
राजा मनि आंनी सब छाड़ी रजधानी कीजे,
गुर ब्रह्मग्यांनी मिले दादू मनि-धारी है ॥३७७

रजबजी कौ बरनन

छपै दादू कौ सिष सावधांन, रज्जब अज्जब कांम कौ ॥
निराकार निरलेप, निरंजन नृगुन भायौ।
सर्बंगी तत कथ्यौ, काबि सर्ब ही की ल्यायौ।
साखि सबद अर कबित, बिनां दिष्टांत न कोई।
जितने जग प्रसताव, रहे कर जोड़ें दोई।
दिन प्रति दूल्है ही रह्यौ, त्यागी सहो सु बांम कौ।
दादू कौ सिष सावधांन, रज्जब अज्जब कांम कौ ॥३७८

मनहर दादूजी के पंथ मैं महंत संत सूरबीर,
रजब अजब सोहै उनकै पटंतरे।
नारद कै ध्रू प्रहलाद रांमचंद्र कै हनवंत,
कासिब-सुवन जैसें अरक उगंत रे।
गोरख कै भर्थरी, रांमानंद के कबीर,
पीपा कै परस भयौ धर्म-धारी संत रे।
राघो कहै दत कै दिगंबर संकर सिष,
जासूं भये दस नांम वोपमां अनंत रे ॥३७९
रज्जब अजब राजथांन आंबानेरि आये,
गुर कै सबद त्रिया ब्याह संग त्याग्यौ है।
पायो नर देह प्रभु सेवा काज साज येह,
तांकौं भूलि गयौ सठ बिषै रस लाग्यौ है।
मौड़ खोलि डारचौ तन मन धन वारचौ सत,
सीलब्रत धारचौ मन मारचौं कांम भाग्यौ है।
भक्ति मौज दीनी गुर दादू दया कीन्ही उर,
लाइ प्रीति लीनी माथै बड़ौ भाग जाग्यौ है ॥३८०

---

१. भारी।

स्या भयांगीर पै लिखाइ परवांनौं ल्यायो,
कंचन को अंकुस घड़ायो मद पीजिये।
हारै कोऊ चरचा मैं पालकी कहार करौं,
जीतै सु तौ पंडित है ताकौं यह दीजिये।
बांवन अक्षर सुर सप्त छतीस भाषा,
यासूं उपरांति कथै कबि सो कहीजिये।
रजब सौं प्रष्ण करी है कबि चारण नैं,
दुरसा है नांव ताकौ उत्तर भनीजिये ॥३८१
मुख सूं अक्षर अरु मुख सूं सप्त सुर,
मुख सूं छतीस भाषा जग मैं बखांनियें।
ब्यापक पूरण उर बचन रहत सोई,
सिव अर ब्रह्मा जस लोकन मैं गांनियें।
दुरसा कौ भर्म भाग्यौ कहै मेरौ भाग जाग्यौ,
गुर उपदेस यही सिष मोहि जांनिये।
पालकी आंकुस भलें भेट कीये रजबकी,
मन बच काय सेवा प्रीति सौंज मांनिये ॥३८२

अन्यात

दंडक कड़खा छंद

तुरकां सिरताज पतिसाही दिली तणौ,
हिंदवां सीस सिरताज रांणौं।
राज सिरताज अधपत्ति जु आंबेर रो,
यौ पंथ दादू तणें रजब जांणौं।
अष्ट-कुल प्रबतां मेर सबरै[1] सिरै,
नवकुली नाग सिर सेस आंणौं।
नव[2] लखा तार मैं चंद सबरै सिरै,
यौं पंथ दादू तणौं[3] रज्जब मांणौ ॥[३८३]
हींदवां हद भई साखि गीता कही,
तुरक मुसफरां राड़ि मूंकी।
अनभै आतम जिती, भगत भाखा तिती,
तठै रजब रा सबद सौं आंट चूकी।

---

१. अबैरे। २. नव लख। ३. तणौं।

पाव पतिसाहि रा परसि चाकर थक्यौ,
अलि थक्यौ परसि परजात[1] फल चाड़।
आन रौ ग्यांन सुनि थिर न आत्म भई,
यौं रजब री कथा सुनि परी अनि आड़।
भूख भागी जबै भेटि अन सूं भई,
प्यास भागी तबै नीर पीयौ।
रजब री रहम सूं फहम लाधो सबै,
यौं अटल रटि मोह नौंर कजीयौ ॥३८४

साखी

रज्जब दोऊ राह बिच, करड़ी तुभझ कांण।
मनमथ राख्यौ मुरड़ि कैं, जुरड़ि न दीधो जांण ॥[३८५]

इंदव छंद ज्यूं बसि मंत्रक आवत बीर, जहां जस योग तहां तस मूंके।
ज्यूं धर्मराजक काज करै सब, दूत अनेक रहै ढिग ढूके।
ज्यूं नृप के तप तेजत कंपत, पास रहैं नर आइ कहूं के।
अैसहि भांति सबै द्दसटंत सु, आग खड़े रहि रज्जबजू के ॥३८६
संझ समैं जु सबै सु रही घरि, आत चली जस बछक रागैं।
भूपति कौ भय मांनि दुनी जु, अनीति बिसारी सुनीति सु लागैं।
मोहन ज्यूं बसि मंत्र क बीर, प्रभाति चटा-चट सार कु जागैं।
यौंहि कथाक समैं दिसटंतस, आइ रहै घिरि रज्जब आगैं ॥३८७

मोहनदास मेवाड़ा कौ बरनन

छपै दादू दीनदयाल कै, मोहन मेवाड़ौ भलौ ॥
कीयौ स्वरोदय ज्ञांन, सूर ससि कला बताई।
नाड़ी त्रिय तत पंच, रंग अंगुल मपबाई।
रोगी गरभ प्रदेस, जुद्ध पग बार गणाये।
लगन काल अकाल, असुभ सुभ काज लखायें।
हठ जोग निपुन राघो कहै, समाधिवंत गुण कौ गलौ।
दादू दीनदयाल कै, मोहन मेवाड़ौ भलौ ॥३८८

---

१. परिजात=कल्पवृक्ष।

मनहर छंद

दादूजी कै पंथ मैं दलेल जाकै आंठौं जांम,
अति ही उदार मन मोहन मेवारे कौं।
छाजन भोजन[1] पांणी वांणी प्रवाह जाकैं,
श्रवकौ संतोष दे जितावै मनहारे कौं।
बिद्या कौ वनारस पारस जैसें बेधै प्रांन,
अति मन ऊजलौ उजागर अखारे कौं।
राघो कहै जोग की जुगति करि गाये हरि,
पलटि सरीर तन रूप भरे बारे कौं ॥३८६
भांनगढ़ नगर मैं ब्राह्मण कौ बाल इक,
मृति पाइ गयो सोग भयो उर भारी ये।
मोहन कहत यह हम कौं चढाइ देहु,
सर्ब ही कह्यौ जु लेहु अब या जिवारिये।
बालक मैं स्वास भरि बेगिहि उठाइ लीयो,
जोग की जुगति तन नौतम बिचारिये।
मात पिता भईया र कुटंब मन और भयो,
कहै सब देहु अजु हमहि कु मारिये ॥३९०

जगजीवनदासजी कौ बरनन

दादू कौ सिष सरल चित, जगजीवन जन हरि भज्यौ॥
महा पंडित परबीन, ग्यांन गुन कहत[2] न आवै।
बांणी बहु बिसतरी, साखि दृष्टांत सुहावै।
सबद कबित मैं रांम रांम, हरि हरि यौं करणां।
गुर गोविंद जस गाइ, मिटायौ जामण मरणां।
दिवसा मैं दिल लाइ प्रभु, बर्णाश्रम कुल बल तज्यौ।
दादू कौं सिष सरल चित, जगजीवन जन हरि भज्यौ ॥३९१

इंदव छंद

दादू कै[3] पंथ दिप्यौ दिवसा जग, मैं जगजीवन यौं हरि गायौं।
कीयो बुद्धि बिवेक सूं ब्रह्म निरूपन, ऐसें अहोनिसि रांम रिझायौ।
प्रेम प्रवाह कथा उर अंमृत, आप पीयो रस औरन पायौ।
राघो कहै रसनां रणजीति ज्यूं, नांव निसांन निसंक बजायौ ॥३९२

---

१. भोजन। २. कहन। ३. कौ।

मनहर छंद
टहलड़ी सुथांन तहां मानसिंघ नृप आयौ,
थार भरि ल्यायौ पाक भोजन जिमाइये।
कोऊ भाव धारी ल्यायो रोटी तरकारी वह,
लागी अति प्यारी मन भारी सुख पाइये।
रजों गुनीं दांनौं मन राज सब ठानौं होइ,
बुद्धि ही कौ हांनौं ग्यांन ध्यांन जु गमाइये।
दोऊ मूंठी भर रुद्र दुगध की झरी नृप,
देखि चुप करी जगजीवन न खाइये ॥३९३

बाबा बनवारी हरदास कौ बरनन

छपै
बाबौ बनवारी हरदास धनि, जिन गुरद्वारै सर्बस दीयौ ॥
दादू गुर द्रिगपाल, तेज तिहूं लोक उजागर।
सिष चहुं दिसा चिराक, भजन सुमरन के सागर।
तिन मधि बरनौं दोइ, उत्म उतराधा भ्राता।
सब दिन अर सब रैंनि, रहैं हरि सुमरन माता।
राघो बलि बलि रहणि की, भजि भगवंत लाहौ लीयौ।
बाबौ बनवारी हरदास धनि, जिन गुर द्वारै सर्बस दीयौ ॥३९४

मनहर छंद
दादूजी के पंथ मैं मगन मन माया जीति,
बाबौ बनवारी भारी सर्ब ही कौ भावतौ।
प्रमोध्यौ उत्तरदेस धर्म कीन्हौ परवेस,
निरंजन निराकारजी कौ जस गावतौ।
रिधि सिधि लीयें लार भजन रटै दैकार,
दरसन कै कारनैं गुरू कै द्वारै आवतौ।
राघो बिधि सहित बिसेख पूजि गुर पाट,
छाजन भोजन सर्ब संतौं कौं चढावतौ ॥३९५
गुर चेला रांमति कौं निकसे सहस[1] भाइ,
दिन कै अस्ति[2] भये निसा सैंन कीयौ है।
निरभै निसंक बनवारी सिष प्रमांनंद,
आंनि कें उसीसा रैंनि प्रिथी मात दीयौ है।

---
१. सहज। २. अस्त।

प्रिथी अपतेज बाइ रक्षा करै आग्या पाइ,
तन मन धन अर्पि नांव जिन लीयो है।
राघो कहै अवनि प्रष्ण भई संत देखि,
मुलकत बदन सु हरखत हीयो है ॥३९६

चतुरभुजजी को बरनन

छपै
दादू दीनदयाल कौ, पूरब परसिधि चतुरभुज ॥
कीयौ रांम पुर धांम, भक्ति निरगुन बिसतारी।
गुरभक्ता हरि भक्त, संत भक्ता उपगारी।
तुलसीदास हुलास, तास भुज च्यारि दिखाई।
बटक बृक्ष के पात, रांम रटनां रटवाई।
राघो द्वादस सिष सरस, द्वारै दीसत सोम कुज।
दादू दीनदयाल कौ, पूरब परसिधि चतुर भुज ॥३९७

मनहर छंद
दादूजी के पंथ मैं बड़ो चिराक चतुरभुज,
भगति भजन पन्त कौ कीयौ प्रकास है।
भये हैं चिराक सूं चिराक सिख सूरबीर,
सदगति कीट भृंग सम ताकी त्रास है।
प्रचाधारी प्रसिद्धि प्रगट भयौ पूरब मैं,
जीव कौ जीवनि जगदीस जाकै पास है।
राघो कहै रांम जपि पायो है सुहाग भाग,
सौभा तीनै लोक जौ लौं धरनि अकास है ॥३९८
पोथी करि ल्याये तुलसीदासजी कै आये,
चत्रभुज कह्यौ भाये ब्रह्म चरचा कराइये।
गंगाजी कैं तीर चलैं चत्रभुज कही भलैं,
ग्यांन गली सोधैं वार पार कौं लैं जाइये।
चत्रभुज नांम तुम काहे सूं कहाये अजु,
चत्रभुज रूप प्रभु जग मैं कहाइये।
धारा मधि पैठि च्यारि भुजाहु दिखाइ दीन्हीं,
ऐसैं मन भई तुलसीदास समझाइये ॥३९९
बृक्ष येक बट कौ लगायौ निज हाथ सौं,
मेला कै समय पूजा करै संत चाइ कैं।

अचिरज की बात सुनी जात बहु संतन पैं,
पात पात होत धुनि रांम रांम बाइ कैं।
सिषहू बसंतदास संतदास रांमदास,
द्वादस महंत पुनि भये हरि गाइ कैं।
रांमपुरा ग्रांम जहां साधन कौ धांम तहां,
लहै विश्रांम जन बहु सुखदाइकैं ॥४००

प्रागदास बिहांणी कौ बरनन

छपै दादू दीनदयाल कै, सिष बिहांणीं प्राग जन ॥
कुल कलि करचौ बिख्यात, डीडपुर कीयौ उजागर।
सिष उपजे सिरदार, सील सुमरण के आगर।
सांभरि सर जल अधर, चले पद अंबुज नांई।
नांव लेण की माल, रही उर देह जरांई।
परमारथ हित भजन पन, राघव जीते प्रांन मन।
दादू दीनदयाल के, सिष बिहांणीं प्राग जन ॥४०१

मनहर छंद दादूजी के पंथ मै अतीत अरि इंद्रीजित,
बीहै न बिहांणीं प्रागदास परमारथी।
सांगोपांग संत सूरबीर धीर धारे तेग,
रांमजी के बैठो रथ ग्यांन जाकै सारथी।
कांम क्रोध लोभ मोह मारिया बजाइ लोह,
भरम करम जीतै भीम जेम भारथी।
राघो कहै रांम कांम सारे जिन आठौं जांम,
भजन की माला रही दगध कीयां रथी ॥४०२

दोऊ जैमलजी कौ बरनन

छपै दादू दीनदयाल के, भजन जुगत जैमल जुगल ॥
सूर धीर उदार, सार ग्राहक सतवादी।
दिढ़ गुर इष्ट उपास, भक्त हरि के मरजादी।
पदसाखी निरबांन, कथे निरगुन सनबंधी।
भक्ति ग्यांन बैराग, त्याग संतन श्रुति संधी।
रजबंसी राघो उभै, कूरम पुनि चौहांण कुल।
दादू दीनदयाल के, भजन जुगत जैमल जुगल ॥४०३

मनहर छंद

दादूजी के पंथ मैं प्रचंड जती जोगेस्वर,
जैमलजु हलाहल भजन पन कौ भलौ।
खालिक सूं खेल्यौ र भरम करम डारे पेलि,
च्यारयौं पन राख्यौ है चौहांण ऊजलौ पलौ।
कहणि रहणि धुनि ध्यांन ध्रम धारचौ नीकैं,
भजन भंडारे मैंचि राख्यौ भरि कैं गलौ।
राघो कीन्हीं रासि गुर गोबिंद उपासि करि,
बिधि सुं निपायौ नीकैं रिधि सिधि कौ खलौं ॥४०४

जैमल चौहांण संत रहै बौंली गांम जहां,
बसै भेषधारी इक अगनि चलाई है।
भरचौ है अग्यांन मूढ समझै न ग्यांन गूढ,
प्रभु भजै ताकै पर मूंठ अजमाई है।
जैसें प्रहलाद आप राखे करतार करी,
सासना अपार मारचौ दुष्ट नख ताई है।
भये है सहाई गुर मंत्र उचराई रांम,
रक्षा जु कराई हरि सदा ही सहाई है ॥४०५

दादूजी के पंथ मधि बड़ौ रजबंसी येक,
कह्यौ कछू हावौ जोगी जैमल जुगति सुं।
अनभै कै आगर उजागर गिरा को पुंज,
छाजू रुचि आतर बिख्यात र भगति सूं।
तास कै पछोपै सिष पूरण प्रसधि भयो,
निश्चैं निज नांव लीयौ लीयौ पांडू राखे पति सूं।
राघो कहै रांम भणि सदा रह्यो येक पणि,
मन वच क्रम करतार गायौ सत्य सूं ॥४०६

आदि कुल कूरम कह्यौ है जोगी जुगति सूं,
जैमल की माता धनि दाता सुत जायौ है।
म्हारि के पहार रहै भारथी मुकंद नांन,
कीयौ परनांम दक्षा देहु सुत आयौ है।
सिष नहीं करौं मात प्रगटे सुनांऊं बात,
दादूजी दयाल गुर याकौ यौं बतायौ है।

साढ़ा तीन कोड़ि जीव उधरैंगे ताकै लार,
ऐसौ परसंग ताहि बरनि सुनायौ है ॥४०७

अहमदाबाद छाड़ि आये जब सांभरि मैं,
परचै भये हैं तब माता सुधि पाई है।
जैमल कौ ल्याई गाथा आदि सो सुनाई सुत,
दिक्षा लै दिवाई सब संतन कौ[1] भाई है।
सुधि न रहाई प्रेम उमंगि चलाई आंखि,
नीर भरि आई श्रुति सुख मैं समाई है।
जैमल रमाई जाकी भगति लैकैं गाई जैसै,
सुनी सो सुनाई सीखै भनैं सुखदाई है ॥४०८

जनगोपालजी को बर्नन

छपै
जनगोपाल दादू तणैं, हरि भगतन जस बिसतर्‌यौ ॥
ध्रू पहलाद जड़भरथ, दत्त चौवीसौं गुर कौ।
मोह बबेक दल बरणि, दूरि भ्रम कीयौ उर कौ।
गुर की महिमा करी, जनम गुन परचै गाये।
टकसाली पद ग्रंथ, दयाल की छाप सुहाई[2]।
प्रेम भगति दुबिध्या रहत, करी बैसि-कुल निसतर्‌यौ।
जनगोपाल दादू तणैं, हरि भक्तन जस बिसतर्‌यौ ॥४०९

मनहर छंद
दादूजी के पंथ मैं चतुर बुधि बातन कौं,
जांनिये जनगोपाल सबंही कौ भावतौ।
नींकीं बांणी नृमल मिठास तुक तांनन मैं,
कांनन मैं होत सुख अर्थ सूं सुनावतौ।
मन बच क्रम हरि हारल की लाकरी ज्यूं,
कहनां सहित करुणा-निधांन गावतौ।
राघो भणि रांम नांम आदि ऊंकार करि,
सीस जगदीसजी कौं बारूंबार नावतौ ॥४१०

सन्यासी सरूप धारे फिरत जगत मांहि,
बिन ग्यांन पायें नहीं उर मैं प्रकास जू।

---

१ कूं। २. सुभाये।

सीकरी सहर मांहि मिले हैं जनगोपाल,
　　भये किरपाल गुरदेव दादू दास जू।
सीस परि हाथ दयौ दया परसाद नयौ,
　　देखि कैं मुदित भयौ नांव मैं निवास जू।
प्रहलाद चरित्र यथा ध्रुव जड़भर्थ कथा,
　　करुणां सूं गाये हरि भक्तन हुल्हास जू ॥४११

बखनांजी कौ बरनन

छपै　　दादू दीनदयाल कै, है बखनौं बानैत बड़ ॥
गुर-भक्ता जनदास, सील सुठ सुमरन सारौ।
बिरहै लपेटे सबद लगत, तिन करत सुमारौ।
हरिरस-मद पीय मत्त, रैंनि दिन रहै खुमारी।
परचै बांणी बिसद, सुनत प्रभु बहुत पियारी।
माया ममता मांन मद, राघो मन तन मारि छड़।
दादू दीनदयाल कै, है बखनौ बानैत बड़ ॥४१२

मनहर छंद　　दादूजी कै पंथ मैं है बखनौं बरैत कबि,
　　अतिहि चुटावो[1] ततबेता तुक तांन कौ।
जाकी बरल बांणी कौ बखांण बणि आवत न,
　　भारथ मैं बल जैसें पारथ के बांन कौ।
जाके पद साखी हद बेहद प्रवेस भये,
　　जहां लग आवा गछ होत ससि भांन कौं।
राघो कहै राति-दिन रांमजी रिझायौ जिन,
　　गावत न मांनी हारि गंधर्ब ही गांन कौं ॥४१३
बखनौं महंत हरि रातौ रस मातौ प्रेम,
　　बोलत सुहातौ मन मोहै जाकी बांनी है।
गंध्रव ज्यूं गावै टरि नैंन नीर आवै प्रभु,
　　प्रीति सूं लड़ावै सबंही कौं सुखदांनी है।
सुमरन सासो सास येक नांव कौ अभ्यास,
　　रहै जगसूं उदास असौ गलतांनी है।

---

१. चुटाहै।

दिल्लीपति आये तब काजी समझाये सब,
पंडित नवाये और संसै स्याह भांनी है ॥४१४

जगाजी कौ बरनन

छपै दादू दीनदयाल कै, जगो जोति जगदीस की ॥
भक्ति-भाव परपक्क, साध गुर सेवा बरती।
सहर सीकरी श्री र, बधायो जानि सु धरती।
गये सलेमाबाद, परस जु लई परक्षा।
भये रसोई खांन, सीरनी कीन्ही भक्षा।
राघो धाये दक्षन[1] दिस, भक्ति बधाई ईस की।
दादू दीनदयाल कै, जगो जोति जगदीस की ॥४१५

मनहर छंद दादूजी कै पंथ मांहि जगा जोति लागि रही,
जग सूं उदास जगो कहूं न लुभायो है।
परसरांम संप्रदाई खेचरी चलाई बहु,
सीरनी जीमाई तऊ खात न अंघायौ है।
कहै मुख सेती सर्ब दूंणी बस्त जेती यह,
होइ मन तेतौ कछु आयौ नहीं आयौ है।
कीयौ डील कौ बधाव गुर-सेवा माहै[2] चाव भलौ,
राघौ पायौ डाव करतार यूं रझायौ है ॥४१६

जगंनाथदासजी कौ बर्नन

छपै दादू कौ सिष जगन्नाथ, जुगति जतन जग मै रह्यौ ॥
प्रेमां भक्ति बसेख ग्यांन, गुन बुद्धि समझि अति।
सास्त्रग्य अरु तज्ञ, सील सतवादी मति गति।
गुण-गंज नांमौ कीयौ, कबिता सर्ब कीता मधि।
गीता बसिष्ठसार ग्रंथ, बहु अवर साध सिधि।
चित्रगुपत कुल मैं प्रगट, जो देख्यौ सोई कह्यौ।
दादू कौ सिष जगन्नाथ, जुगति जतन जग मै रह्यौ ॥४१७

मनहर छंद दादूजी कौ मिले हैं कायस्थ कुल निकसि कैं,
जगमग-जोति जगनाथ देखी गुर की।

---

१. भड़ौंच। २. मै है।

नख सख सकल पवित्र भयो तन मन,
मिटि गई तरंग तलाव की सी उर की।
सम दम सुरति सबद स्वासा पांचूं तत,
सुध कीन्हीं भूमिका सकल प्रांण पुर की।
राघो यौं रिझायौ रांम जासूं सिधि होत कांन,
आरति सौं पीवत पीऊख-धारा धुर की ॥४१८

†सुंदरदासजी बूसर कौ बरनन

छपै संक्राचारय दूसरौ, दादू कै सुंदर भयौ ॥
द्वैत-भाव करि दूरि, येक अद्वैत ही गायौ।
जगत भगत षट-दरस, सबनि कै चांणिक लायौ।
अपणौ मत मजबूत थप्यौ, अरु गुर पक्ष भारी।
आंन-धर्म करि खंड, अजा घट तैं निर वारी।
भक्ति ग्यांन हट सांखि लौं, सर्ब सास्त्र पारहि गयौ।
संक्राचारय दूसरौ, दादू कै सुंदर भयौ ॥४१९

मनहर छंद दादूजी के पंथ मै सुंदर सुखदाई संत,
खोजत न आवै अंत ग्यांनी गलतांन है।
चतुर निगम षट् षोडस अठार नव,
सर्ब कौ विचार मार धारचौ सुनि कांन है।
सांखिजोग क्रमजोग भगति भजन पन,
प्रख जांनै सकल अकलि कौ निधांन है।

---

†सी० प्रति का अतिरिक्त छंद है :

माधौदास बरनन

दादू कौ सिष गुन माधौ देव महामुनि,
द्विजवंस छाडि कुल संतन में आयौ है।
अवर समै सहर सीकरी मैं आयौ है,
त्रयोंबाद मुति कौ छोड़ि दूध-भात कौं पवायो है।
साहा अरु नृप देखै और लोक दुनी पेखै,
सिंघ के समीप बैठौ भेद न जनायौ है।
तुरसी हे सुसर जाकैं राघौ ठहै दास ताकैं,
सभा मधि कह्यौ इन पूरौ गुर पायौ है ॥

बैसिकुल जनम विचित्र बिग बांणी जाकी,
राघो कहे गृंथन के अर्थन कौ भांन है ॥४२०
दिवसाहै नग्र चोखा बूसर है साहूकार,
सुंदर जनम लीयौ ताही घरी आइ कैं।
पुत्र की चाहि पति दई है जनाइ तृया,
कह्यौ समझाइ स्वांमी कहौ सुखदाइ कैं।
स्वांमी मुख कही सुत जनमैगो सही पै,
बैराग लेगो वही घर रहै नहीं माइ कै।
ऐकादस बरष मै त्याग्यौ घर माल सब,
वेदांत पुरांन सुने बांनरसी जाइ कैं ॥४२१
आयौ है नबाब फतेपुर मै लग्यौ है पाइ,
अजमति देहु तुम गुसंई (यां) रिझायौ है।
पलौ जौ दुलीचा कौ उठाइ करि देख्यौ तब,
फतैपुर बसैं नीचै प्रगट दिखायौ है।
येक नीचै सर येक नीचै लसकर बड़,
येक नीचै गैर बन देखि भय आयौ है।
राघो घोरे रथि[1] लीये दबते नबाब केर[2],
सुंदर ग्यांनो कौ कोई पार नहीं पायो है ॥४२२

अन्यात

छपै
सतगुर सुंदरदास, जगत मै पर उपगारी।
धन्नि धन्नि अवतार, धन्नि सब कला तुम्हारी।
सदा येक रस रहे, दुख्य द्वंद-र को नांहीं।
उत्म गुन सो आहि, सकल दीसै तन मांहीं।
सांखिजोग अरु भक्ति, पुनि सबद ब्रह्म संजुक्ति है।
कहि बालकरांम बबेक, निधि देखे जीवन मुक्ति है ॥४२३
जल सुत प्रीत्म जांनि, तास सम प्रम प्रकासा।
अहि रिप स्वांमी मध्य, कीयौ जिनि निश्चल बासा।
गिरजापति ता तिलक, तास सम सीतल जांनूं।
हंस भखन तिस पिता, तेम गंभीर सु मांनूं।

---

१. रथि। २. के न।

उदधितनय बाहन सुनौं, तास सम तुल्य बखांनिये।
यौं सुंदर सदगुर गुण अकथ, कथत पार नहीं जांनिये ॥४२४

बुधि बिबेक चातुरी, ग्यांन गुरगमि गरवाई।
क्षमा सील सत्य, सुहृद संतन सुखदाई।
गाहा गीत कबित, छंद पिंगुल प्रवांनें।
सुंदर सौं सब सुगम, काब्य कोइ कला न छांनें।
बिद्या सु चतुरदस नाद निधि, भक्तिवंत भगवंत रत।
संयम जु समर गुणगण अमर, राज-रिद्धि नव-निद्धि यत ॥४२५

देवन मैं ज्यु विष्णु, कृष्ण अवतारन कहये।
जंग मांहि गंग[1]-पुत्र, गंग मै तीरथ मै लहिये।
रिखन मांहि नारद, जखिन कुमेर भंडारी।
जती कपी हनुमंत, सती हरिचंद बिचारी।
नागन मैं श्रीसेसजी, बागन सारद मांनियौ।
दादूजी कै सिषन मै, यौं सुंदर बूसर जांनियौं ॥४२६

तारन मै ज्यूं चंद, इंद देवन मै सोहै।
नरन मांहि नरपत्ति, सत्ति हरिचंद स जोहै।
भगतन मै ध्रुवदास, तास सम और स थोरे।
दांनिन मै बलि बरनि, सरनि सम सिवर न औरे।
जगत भगत बिक्षात वै, चातुरजन असैं कही।
सब कबियन सिरताज है, दादू सिष सुंदर मही ॥४२७

टीका

मनहर छंद

स्वांमी श्रीसुंदरजी बांणी यह रसाल करी,
भगत जगत बांचै सुणै सब प्रीति सौं।
साखी अर सबद सवइया अबांग जोग,
ग्यांन कौ सुमुद्र पंच इंद्रिया उ जीति सौं।
सुखहु समाधि स्वप्न बोध बेद कौ बिचार,
उकत अनूप अदभुत ग्रंथ नीति सौं।
पंच परभाव गुर संप्रदाइ उतिपति,
निसांनी गुरू की महिमां बांवनी सु रीति सौं ॥५४८

---

१. शिव।

षटपदी भरम-बिध्वंसन गुरू कृपा स गुर,
दया गुर मैमां सतोतर आंनिये।
रांमजी नामाष्टक आत्मा अचल भाखा,
पंजाबी सतोत्र ब्रह्म पीर औदु जानिये।
अष्टक अजब ख्याल ग्यांन भूलनां है आठ,
सैजानंद-ग्रे बैराग बोध परमांनिये।
हरि बोल तरक बिबेक चितवनि त्रिय,
पम-गम अडिल मडिल सुभ गांनिये ।।५४९
बारामासौ आयु भेद आत्मां बिचार येही,
त्रिबिधि अंत:करण-भेद उर धारिये।
बरवै पूरबी भाषा चौबोला गूढ़ा अरथ,
छपै छंद गण अरु अगन बिचारिये।
नव-निधि अष्ट-सिधि सात बारहू के नांम,
बारामास हो कै बारै रासि सो उचारिये।
छत्रबंध कमल मध्यक्षरा कंकण-बंध,
चौकी-बंध जोनपोस बंधऊ संभारिये ।।५५०
चौपड़ि बिरक्ष-बंध दोहा आदि अक्षरीस,
आदि-अंत-अक्षरी गोमुत्रि काज कीये हैं।
अंतर-बहरलापिका निमात हार-बंध,
जुगल निगड़-बंध नाग-बंध भी ये हैं।
सिंघा-अवलाकनी स प्रतिलोम अनुलोम,
दीरघ अक्षर पंच बिधांनी सुनीये हैं।
गजल सलोक और बिबिधि प्रकार भेद,
पंडित कबीर सुरनि मांनि सुख लीये हैं ।।५५१

बाजीदजी की मूल

मनहर छंद

छाड़ि कैं पठांण कुल रांम नांम कीनौ पाठ[1],
भजन प्रताप सौं बाजीद बाजी जीत्यौ है।
हिरणी हतत उर डर भयौ भय करि,
सील भाव उपज्यौ दुसील भाव बीत्यौ है।

१. पठ।

तोरे हैं कुबांण[1] तीर चांणक दीयौ सरीर,
दादूजी दयाल गुर अंतर उदीत्यौ है।
राघो रत राति-दिन देह दिल मालिक सूं,
खालिक सूं खेल्यौ जैसैं खेलण सी रीत्यौ है ॥४२८

अथ निरंजनी पंथ बरनन

छपै अब राखहि भाव कबीर कौ, इम येते महंत निरंजनी ॥
लपट्यौ जू १जगनाथ २स्यांम ३कान्हड़ ४अनरागी।
५ध्यांनदास अरु ६खेमनाथ, ७जगजीवन त्यागी।
८तुरसी पायौ तत, ९आंन सो भयो उदासा।
१०पूरण ११मोहनदास, जांनि १२हरिदास निरासा।
राघो संम्रथ रांम भजि, माया अंजन भंजनीं।
अब राखहि भाव कबीर कौ, इन येते महंत निरंजनी ॥४२९

मनहर छंद
लपट्यौ जगनाथदास स्यांमदास कान्हड़दास,
भये भजनीक अति भिक्षा मांगी पाई है।
पूरण प्रसिधि भयो हरिदास हरि रत,
तुरसीदास पायौ तत नीकी बनि आई है।
ध्यांनदास-नाथ[1] अरु आनंदास रांम कह्यौ,
जग सूं उदास ह्वै कै स्वासोस्वास लाई है।
जगजीवन खेमदास मोहन ह्रिदे प्रकास,
नृगुण निराट बृति राघो मनि भाई है ॥४३०

जगनाथजी लपट्या की टीका

इंदव छंद
नेम निरंतर नांव सूंनि ग्रह, यौं तरली तन मांझ उठी है।
भाड़ौ दियौ भक्षि आतम कौं गछि, पांनी मैं चून ले घेरयौ मुठी है।
स्वाद न साल न दूध न पाल न, संजम कूं सिरदार हठी है।
राघो सगाई सिरोमनि ब्रह्म सौं[2], यौं जग मैं जगनाथ सठी है ॥५५२

छपै राघो रहणि सराहिये, सुबित सिरोमनि दिपत वैं।
आनंदास सत सूर, सदन तजि कैं हरि परसे।
मन बच क्रम भजनीक, दास मोहन सिष सरसे।

---

१. ध्यांनदास। २. सूं।

स्यांमदास की मूंठि, मंडो निरगुण सूं न्यारी।
सिष उपजे सिरदार, भक्ति रसि आई भारी।
ये पचवारै प्रसिधि भये, बड़े महंत द्रिगपाल ह्वै[1]।
राघो रहणि सराहिये, सुबित सिरोमनि दिपत वै ॥४३१

मनहर छंद
आनंदास अनन्य अतीत अरि इंद्रीजित,
पायौ बित प्रगट प्रकास्यौं हिरदा मैं हरि।
पांच-तत तीन-गुण येक रस कीये जिन[2],
नृगुन उपास्यौ निराकार निहि क्रम करि।
निरबृति सूं नेह धरि देह असैं पारी टेक,
नृबाह्यौ बैराग ब्रत जीवत जनम भरि।
राघो कहै भयौ बर उर ऊंकार करि,
त्रिगुणी गयौ है तिरि आदि अबिगति घरि ॥४३२

स्यांमदास को मूल

मनहर छंद
सूरबीर महाधीर दिपत ह्रिदा मैं हीर,
ब्रिकत बैराग मैं सुभाव स्यांमदास कौ।
ऊंची दिसा रहणि कहणि ऊंची ऊंचौ मन,
गह्यौ मत मगन ह्वै अगम अकास कौ।
रटत रंकार बारंबार रत्त रोम रोम,
धारचौ जगि जोग यौं निरोध सासै-सास कौ।
राघो कहै रांम कांम स्यौंप्यौ तन धन धांम,
हरि हरि करत हजूरी भयौ पास कौ ॥४३३

कान्हड़दास को मूल

इंदव छंद
कान्हड़दास कला लीयें औतरचौ, पंथ निरंजन कै पग धारे।
मांगि भिक्षा र कीयौ भक्ष भोजन, असैं अतीत ह्वै स्वाद निवारे।
मांनि धणी पै मढी न बधाई जू, जांनि तजे क्रम बंधन सारे।
राघो कहै भजि रांम भली बिधि, संगति के सबही निसतारे ॥४३४

पूरणदासजी को मूल

मनहर छंद
पूरण प्रसिधि भयौ पिंड ब्रह्मंड खोजि,
कलि मै कबीर धीर धारचौ गुरम सत कौ।

---

१. है। २. उन।

गहत अरुढ़ मत आतमा परूढ़ भई,
जीती पर कीरति प्रकास भयौ बस्त कौं।
मन तज्यौ गवन पवन अस्थिर भयो,
भरम करम भाजे दै कैं हाथ दस्त कौ।
राघो कहै रांम आठौं जांम जपि जीति गयौ,
होतौ अंस आगिलौ दधीच मुनि अस्त कौ ॥४३५

हरीदास को मूल

मनहर छंद
जत सत रहिणि कहिणि करतूति बड़ौ,
हर ज्यूं-क हर हरिदास हरि गायौ है।
त्रिकत बैरागी अनरागी लिव लागी रहै,
अरस परस चित चेतन सूं लायौ है।
नृमल नृबांणी निराकार कौ उपासवांन
नृगुण उपासि कै निरंजनी कहायौ है।
राघो कहै रांम जपि गगन मगन भयौ,
मन बच क्रम करतार यौं रिझायौ है ॥४३६[1]

तुरसीदासजी को मूल

इंदव छंद
सीतल नैंन चवै बिग बैंन, महा मन जीत अतीत करारौ।
माया कौ त्याग नहीं अन राग, भिक्षा भिक्ष भोजन सांझ सवारौ।
ब्रह्म जग्यासी अभ्यासी है नांव कौ, जोग जुगत्ति सबै बुधि सारौ।
राघो कहै करणी जित सोभित, देखौ हो दास तुरसी कौ अखारौ ॥४३७

---

[1] 'सी' प्रति का अतिरिक्त छपै—

प्रथम पीपली प्रसिद्धि, सिला नागौर बिसेखो।
नयो गयद अजमेर फुनिग, टोडै पणि पेखौ।
गिर सूं गागरि गिरी, नीर राख्यौ घट सारौ।
देवी कौं सिष करी, ज्यायौ बिष बिञ उधारौ।
सिध प्रचो आंबेर, राव राजा सब जांणें।
अगंग बिप्र पंथ चल्यौ, साह सुत जीयौ सिधांणें।
सिर परि कर प्रियागदास कौ, गोरखनाथ कौ मत लयौ।
जन हरीदास निरंजनी, ठौर ठौर परचौ दीयौ ॥४२६

मोहनदास को मूल

है हिरदै सुध हेत सबनि सूं, मोहनदास महा सुखदाई।
जो सुख कासी कबीर कथ्यौ मुख, सो अनभै निति नेम सूं गाई।
आये कौं आदर आप मिलै उठि, ह्वै तन सीतल सोभ सवाई।
राघो करै हठ चालन दे नहीं, नांम कबीर की देत दुहाई ॥४३८

रांमदासजी ध्यांनदासजी को मूल

छपै रांमदास अरु ध्यांन की, म्हारि मध्य महिमां भई ॥
ग्यांन भक्ति बैराग, त्याग जिन नीकौं कीन्हौं।
भिक्षा खाई मांगि, जागि मन ईश्वर दीन्हौ।
बांणी नृगुण कथी, आंन की आस उठाई।
साखि कबित पद ग्रंथ, मांहि परब्रह्म सगाई।
अंजन छाड़ि निरंजनी, राघो ज्यौं की त्यूं कही।
रांमदास अरु ध्यांन की, म्हारि मध्य महिमां भई ॥४३९

खेमदासजी को मूल

इंदव छंद खेम खुस्याल भयौ कुल छाड़ि र, येक निरंजन सूं लिव लाई।
हींदू तुरक्क र ब्राह्मण अंतिज, साखत भक्तिहि नाव रटाई।
त्याग समागम संत सु राखत, चाखत प्रेम भगत्ति मिठाई।
राघवदास उपासि निरंजन, मांगि भिक्षा निति नेम सूं पाई ॥४४०

नाथजू को मूल

नाथ भज्यौ इन नाथ निरंजन, और न दूसर देवहि मांन्यौ।
ग्यांन र ध्यांन भगत्ति अखंडित, मन्न मगन्न बिरागहि सांन्यौ।
मांगि भिक्षा गुजरांन करचौ निति, कांम र क्रोध अहंकृत भान्यौ।
राघवदास उदास रह्यौ तजि, यौं जग-जाल निराल पिछांन्यौ ॥४४१

जगजीवनदासजी को मूल

भादव के जगजीवन दासहु, पंचम बर्न तज्यौ हरि गायौ।
सील संतोष सुभाव दया उर, ता हित ईश्वर[1] कै मन भायौ।
त्यांग बिराग रु ग्यांन भलैं मत, तात भयौ गुर तैं जु सवायौ।
राघव सोलहि ग्यांन गुरू करि, असौ भयौ फिर पंथ चलायौ ॥४४२

---

१. यीश्वर।

सोभावती को मूल

छपै मन बच क्रम सोभावती, संतन कौं सर्वस दयौ ॥
गुपत कसोटी करी, कहि न काहू सूं भाखी।
हरि जांणराइ जगदीस, पैज परमेस्वर राखी।
अन-पांणी बस्त्रादि, बस्त जो चहै जरेर्यौ।
इक रांणीं कै घटि प्रगटि, रांमजी रिजक परेर्यौ।
जन राघो रुचि अंतक समैं, जो बांछित ही सो भयौ।
मन बच क्रम सोभावती, संतन कौं सर्वस दयौ ॥४४३

मनहर छंद थरोली मैं जगनाथ स्यांमदास दत्त वास,
कान्हड़जु चाटसू मैं नीकैं हरि ध्याये हैं।
आंनदास दास-लिवाली मोहन देवपुर,
सेरपुर तुरसीजु बांणी नीकैं ल्याये हैं।
पूरण भंभोर रहे खेमदास सिव-हाड़,
टोडा मधि[1] आदिनाथजू परम पद पाये हैं।
ध्यांनदास म्हारि भये डीडवाणैं हरिदास,
दास जगजीवन सु भादवैं लुभाये हैं ॥४४४
द्वादश निरंजन्यां के नांम गांम गाये हैं।

इति निरंजनी पंथ

माधौ कांणी को मूल

छपै माधौ कांणी मगन ह्वै, मन बच क्रम हरि ध्याइयौ ॥
पांवन कीयौ टौंक, प्रभु की भक्ति बधाई।
आसा बंध सु डरत, तहां इक बाई आई।
देवा कौं आस्वास, हमारौ नांव कहीज्यौ।
ग्रभ न जांई होइ, भजन मैं गारक[2] रहीज्यौ।
राघो खर चढ़ि पुर गयो, परचौ परगट दिखाइयौ।
माधौ कांणी मगन ह्वै, मन बच क्रम हरि ध्याइयौ ॥४४५
ततवेता तिहूंलोक को, ततसार संग्रह कीयौ ॥
पंडित प्रम प्रबीण, सुर्ति सुम्रित पौरांनन।
भारतादि पुनि और ग्रंथ, सब कथत सु आंनन।

---

१. मधिनाथ। २. गरक।

कीये कबित षटपदी, बहुत की संख्या ल्याही।
प्रिथी कोड़ी पचास, जीव चौरासी गांही।
उत्म मध्य कनिष्ट द्रुम, राघो मधुमखि ज्यूं लीयौ।
ततबेता तिहूंलोक कौ, ततसार संग्रह कीयौ॥४४६
ततबेता के सिषन नैं, दोऊ देस चिताइयौ॥
रांम दमोदरदास, धांम[1] थौलाई कीन्हौं।
आंबावति के भूप, तास कौं परचौ दीन्हौं।
रांमदास बड़ महंत, जैतारणि मुरधरं मांहीं।
ऊदावत सिष करे, दुनी सुभ मारग लांहीं।
राघो भक्ति करी इसी, तातैं हरि मन भाइया।
ततबेता के सिषन नैं, दोऊ देस चिताइया॥४४७
जगंनाथ जगदीस की, अनन्य भक्ति राखी ह्रिदै॥टे०
निरबेद ग्यांन मैं निपुन, नांव सर्बोपर जांण्यौ।
जप तप साधन सकल, भजन बिन तुछ बखांण्यौं।
छपै कबित सूं हेत, तिना मैं संख्या आंणी।
मनुख देह के स्वास, गणे अक्षर पौरांणी।
अवर चीज नौखां घणी, राघो हरी भाखे त्रिदै।
जगंनाथ जगदीस की, अनन्य भक्ति राखी ह्रिदै॥४४८
राघो सिरजनहार सौं, कीयौ मलूक सलूक सति॥
क्षत्रीकुल उतपत्ति, बसे माणिकपुर मांहीं।
अगुनी निरगुनी भक्त, काहू सूं अंतर नांहीं।
हींदू तुरक समांन, येक ही आत्म देखै।
तन मन धन सर्बस, भक्त भगवत कै लेखै।
साहिब सांई रांम हरि, नहीं विषमता नांम प्रति
राघो सिरजनहार सूं, कीयौ मलूक सलूक सति॥४४९
राघव जो रत रांम सूं, सो मम मस्तक-मंडनं॥
इम मांनदास मो मगन, कीयौ अति कृतनयौ है।
जपि नैंन्हादास निसि-दिवस, गिरा कौ पुंज भयौ है।

---

१. संतधाम।

चव चतुरदास अहवास-रु मोहन-जू मड़े ।
ये च्यारचौ चतुर महंत, डांग रुधि मुखि बड़े ।
बरनत हूं जो मैं सुनें, अवर करूं नहीं खंडनं ।
राघव जो रत रांम सूं, सों मम मस्तक मंडनं ॥४५०
ये चारण घरि घरि काबि, घणां इतना तौ हरि कबि हूवा ॥
१कर्मानंद अरु २अलू ३चौरा, ४चंड ५ईस्वर ६केसौ ।
७दूदौ ८जीवद ९नरो, १०नरांइण ११मांडण बिसौ ।
१२कौल्ह र १३माधौदास, बहुत जिन बांणी सोहन ।
१४अचलदास चौमुख १५अचल सीकां हरि १६मोहन ।
जन राघो उधारे रांम भणि, गुर प्रसाद जग सूं जुवा ।
ये चारण घरि घरि कबि, घणां इतनां तौ हरि कबि हुवा ॥४५१

करमांनंद की टीका

इंदव छंद
चारन सो करमानंद की गिर, दारन हूं हिरदौ पघलावै ।
छाड़ि दयो घर पूजन सौं हित, कंठ रहै छरियां पधरावै ।
गाड़ि दई कित ऊार राखत, भूलि चले उर ल्यात न पावै ।
चाहि भई तव श्याम सुनावत, ल्याइ दये जब प्रेम भिजावै ॥५५३

कौल्ह अलूजो को टीका

भ्रात रहै जुग कौल्ह अलू, बड़, गाथ सुनौं मद मास न खाई ।
गावत है प्रभु के गुन रूपहि, भक्ति करै उन बात जनाई ।
हौ लघु दूसर खात सबै कछु, भूप बखांनि कबै हरि गाई ।
ईस्वर मांनत है बड़ भ्रातहिं, कै सु करै अपनैं लघुनाई ॥५५४
कौल्ह कही पुर द्वारिक चालहिं, भोग मिथ्या जग आव गमैये ।
ठीक कही चलिकैं पुर जावत, चोजन ये सुनि कांन चितैये ।
कौल्ह सुनावत छंद अनेकन, पीछ अलू भणिये सु कचैये ।
हूं करि कैं प्रभु हार खिनांवत, लै पहिरावत देहु वडैये ॥५५५
नांहि दयौ बड़ कै अपमांनहि, जाइ परचौ दरियाव दुखी ह्वै ।
डूबत भूमि लखी हित चालत, भूलत नांहि अनीति रुखी ह्वै ।
भ्रात भये जन ल्यावन सांम्हन, जाइ मिले पुनि कृष्ण सुखि ह्वै ।
जोमन बैठत पातरि दै जुग, दूसर कौंन स भ्रात मुखी ह्वै ॥५५६

भैर भयौ सुनि है परमोधत, भक्त भलौ वह गाथ सुनीजै।
है तव भ्रात लघू सुखदाइक, बात कहै तिनकी मन धीजै।
भूपति पुत्र हुतौ वह पूरब, छाड़ि दयौ सब मो चित भीजै।
आइ परचौ बन मैं नृप औरहि, रूप लखे तन दे सुख लीजै ॥५५७
अंन र नीर तज्यौ तुमरै हित, जीत नहीं सुधि बेगिहि लीजै।
देत भये परसाद चल्यौ फिरि, आइ भलै लघू सूं हित कीजे।
संग चल्यौ हरि के पुर कौ चलि, पैलहि आंनि मिल्यौ वह दीजे।
बात कही सब धांम तज्यौ प्रभु, जाइ बसे बन मैं जुग भीजे ॥५५८

नाराइनदासजी की टीका

बंस अलू महि जांनहु हंसहि, और बड़े सु नरांइन छोटा।
आंन कुमावत येह उड़ावत, भाभि दयौ करि सीतल रोटा।
दै करि तातहु रीसि करै वहु, येहु हुकार भरावहि मोटा।
छोड़ि गयो घर जाइ भज्यौ हरि, भक्ति भये बसि बोलत धोटा ॥५५९

मूल

छपै **यह बड़ी रहणि राठौड़ की, पृथी परि पृथीराज कबि ॥टे०**
अपणौ इष्ट बखांणि, मनो क्रम बचन रिझायौ।
बरणि बेलि बिसतार, गिरा रुचि गोबिंद गायौ।
सरस सवइया गीत, कबित छंद गूढ़ा गाहा।
बरन्यौ रूप सिंगार, भक्ति करि लीन्हौं लाहा।
जन राघो स्यांन प्रताप तैं, यम आगम जांन्यौं भूत भबि।
इह बड़ी रहणि राठौर की, पृथी परि पृथीराज कबि ॥४५२

टीका

इंदव छंद बीकहि नेरि नरेस बड़ौ कबि, पिथियराज सु भक्त भलौ है।
पूजन सौं हित नांहि बिषै चित, नारि पिछांनन नांहि तलौ है।
देस गयो अनि सेत मनौ मय, रूप हिदै महि नांहि भलौ है।
तीन भये दिन मुंदरि[1] नै हरि, पीछहु देखत चैन रलौ है ॥५६०
कागद देम दयो प्रभु देवल, मैं नहि देखत सो दिन तीनां।
भेजि दयौ उलटौ उर का लिखि, राज लगे हरि बाहरि लीनां।

---

१. मंदरि।

और सुनौं इक नेम लयौ, मथुरा तन त्याग करूं कहि दीनां।
काबिल मौम दई पितस्या[१] लखि, जोर हरि मृति कै न अधीनां ॥५६१
आयु रही तुछ आइ लगे दिन, जांम घरी जुग की सम लागै।
प्रेरि दयौ कबि दै अध दोहर, साच करै पन यौं बड़ भागै।
सांडि चढ़े मथुरापुर आवत, न्हाइ तज्यौ तन हौ अनुरागै।
जै-जयकार भयौ दसहुं दिसि, फैलि गयौ जस जागहि जागै ॥५६२

द्वारिकापति को मूल

छपै दुखदारन द्वारावती जोइसी वैं कीकी अभै ॥टे०
जिवन अजीज अभीज, अनल प्रभु पुर मै वीधी[२]।
साद संभलि[३] रणछोड़, सहाय सांगण सुव कीधी।
धन धरनी गढ़ काज, जुद्ध बीजाहू साजै।
झटकै कुटका थयौ, भक्त भगवत रै काजै।
रूटक बाढ़ कीधी बढ़ेल, चांद नांम चाल्यौ नभै।
दुखदारन द्वारावती, जोइसी वैं कोवी अभै ॥४५३

टीका

इंदव छंद सांगन कौ सुत कावन कौ पति, द्वारिकानाथ कही करि रक्षा।
स्यांम सदाहि सहाइ करै जन, तू हमरी करिये नृप दक्षा।
तुर्क अजीज सु धांम जरावत, बाज न बाग लई मुनि सिक्षा।
पापिन मारि दये हरि राखत, चोज नये र नई यह पक्षा ॥५६३

मूल

छपै माधौस्यंघ कूरम त्रिया, भक्त भली रतनावती ॥
संतन कै समूह सहत, बृजनंद रिझावत।
भक्ति नारदी कथा, प्रेम उछव करवावत।
भगवत[४] पद मन लीन, भक्ति की टेक न छोड़ी।
नृप सौं नेह निवारि, बचन सुन तैं भई मोड़ी।
सुनखा अखी अब प्रगट करै, भांन गढ्ढ आंबावती।
माधौस्यंघ कूरम त्रिया, भक्त भली रतनावती ॥४५४

---

१. पतिस्या-पतास्या। २. वीधी। ३ संभलि। ४. भागवत।

रतनावतीजु की टीका

इंदव छंद मांनहु कौ लघु-भ्रात सु माधव, तास तिया तिन गाथ सुहांनी।
पासि खवासनि नांम रटै हरि, प्रेम जटै उर आंनत रांनी।
नंदकिसोर कबै बृजचंदहि, बोलि उठै द्रिग तैं वहि पांनी।
कांन सुनि तब तौ तिय ब्याकुल, चाहि भई कछु प्रीति पिछांनी ।।५६४
पूछत तू किम कैत गहै चित, नैंन झरै तन भूलि रही है।
चैंन करौ कछु बूझहू नांहि न, गात सहै मम संत कही है।
प्रीति लखी अति कैत भई गति, प्रेमनि कीरति कैत सही है।
कांम छुड़ाइ बठाइ सिरै उन, मांनि लई गुर पाइ लही है ।।५६५
अै-निसि गाथ सुनैं मन देखन, क्यू[१] करि देखहु नैंन भरे हैं।
स्यांम दिखाइ उपाइ बताइ सु, जीवन तौ हिय आइ अरे हैं।
देखन दूरि मिलै तन धूर स भोग तजै बसि प्रीति करे हैं।
सेव करौ उर भाव भरौ, पकवांन रु मेंवन अर्पि खरे हैं ।।५६६
नीलमनी सु सरूप लयो धरि, सेवत भाव सु भाव चली है।
राग र भोग बिबिद्धि लड़ावत, बीजत[२] जांमहि रंग रली है।
भूषन बष्ण अपार बनांवत, स्यांम छिबी अति देखि पली है।
जोग र जज्ञ अनेक उपाइन, नांहि लहै यह प्रेम गली है ।।५६७
देखन चाहि उपाइ कहा अब, वात अहौ कहि कौंन सुनैं ये।
ठौर करावहु म्हैलन कै ढिग, चौकस चौं-दिसि राखि जनै ये।
साध पधार हिवै कहि ल्यावहि, राखहु जागहि पाव धुनै ये।
भोग छतीस धरौ उन आगय, डारि चिगैं द्रिग स्यांम लखै ये ।।५६८
संत पधारत सेव करै बहु, आत भये जिन कौं बृज प्यारी।
गात किसोरजुगल्ल बहै द्रिग, आप अधीर भई सु निहारी।
को मम अंग सु रांनिय या तन, है परदा सत-संगति टारी।
ऊठि चलां कहि हाथ गह्यौ उन, लाज बड़ी यह लेहु बिचारी ।।५६९
येह बिचारि सु स्यांम निहारन, सार हरी कछु लाज न कांनी।
ऊठि गई कहि साधन कै ढिग, पाय लगी बिनती करि रांनी।
हाथि जिमांवन की मनमैं जन, लाखन भांति कही नहि मांनी।
आइ स देहु करौं सुख है यह, प्रीति लखी करि तौ तव जांनी ।।५७०

१. क्यूं। २. बीतत।

कंचन थार चली कर लै करि, प्रेम सु संत परूंसि जिमाये।
देखि सनेह सु भीजि गये जन, नैंन निमेख लगै न लगाये।
पांन चबाइ र चंदन लेपत, स्यांम कथा परसंग चलाये।
सैर सुनी सब देखन आवत, पेखि लिख्यौ नृप लोग पठाये ॥५७१
रांनिय लाज तजी परदा घर, आइ र बैठत मोडन मांहीं।
मांनस कागद भेजि दिवांनहि, भूपति बांचत आगि जरांहीं।
आइ गयौ सुत प्रेम सु ताछिन, भाल तिलक्क सुमाल गरांहीं।
भूपहि जाइ सलांम करि चलि, मोड़िय कै सुनि सोच परांहीं ॥५७२
रोस भरयौ नृप भींतरि जावत, पूछत सो नर बात बखांनी।
तौ हम मोडिय मांनि कह्यौ सुख, भाव र भक्ति तबै उर आंनीं।
मातहि कागद देत भयौ करि, यो हरि भक्ति तजौ मति मांनीं।
मोडिय कौ नृप कैत सभा मधि, ह्वै अब मोडिय जौ मुम ठांनीं ॥५७३
यौं लिखि भेजत मांनस हाथिहि, मातहि जाइ दयो उनि बांच्यौ।
रंग चढ्यौं सुत के परसंगहि, बार मुडाइ र भावहि सांच्यौ।
सेवन पाक करें निसि जावत, आंनि प्रभूतरि गांव न जाच्यौ।
भूपति अन्नि तजे लिखि देवत, स्यांम निपुत्र भई हित राच्यौ ॥५७४
मांनस आइ दयो उर का सुत, बांचि खुसी हुत देत बधाई।
बाज बजाइ बटावत है धन, काहूक जाइ र भूप सुनाई।
भूपति पूछत लोग कही सब, मोडिय मात भई सुत भाई।
भूप सुनी दुख पाइ चढ्यौ खिजि, बैर भयौ उत होत चढाई ॥५७५
राखि लियो नृप कौं समझाइ र, लोग भलां सुत जाइ लखाई।
कैत भयौ तन खोत बिषै लगि, स्यांमहि कांम लगैं सुखदाई।
मांगि लई परि पाइ दई तुम, भूप चल्यौ निसि कौं मन आई।
पासि गयौ गढ़ आइ मिले नर, बात कही सब चित उपाई ॥५७६
म्हैलहि बैठि बुलावत मंत्रिन, नांक कट्यौ अब लोहु निवारैं।
वाहु मरै र कलंक न आंवहि, को मतिवंत बिचारि उचारैं।
पिंजर सीह छुड़ावहु मारहि, दावहि बात नहीं यह सारैं।
होत खुसी सब छोड़त दौरत, कैत खवासि नृस्यंघ निहारैं ॥५७७
सेवत ही प्रभु नैंन लगे छबि, बोल सुन्यौं उत कौं द्रिग ढारे।
ऊठि करयौ सनमांन भलैं मन, भाग बड़े नृस्यंघ पधारे।

फूलन माल गरैं पहिरावत, देत तिलक्क लगे अति प्यारे।
धांमहु तें निकसे मनु खंचहि[1], साखत लोगन मारि पछारे ।।५७८
रांनिय की सुधि लेत भयौ नृप, है जु भलैं भ्रम होइ गयो है।
राय करै परनांम परचौ धर, आय दया उन बैंन दयो है।
भूप करै परनांम कही प्रभु, देखहु नैक कलाल लयौ है।
भूप कही द्रिबिराज तुम्हारहि, लोभ नहीं पति स्यांम धयौ है ।।५७६
मांन र माधव नांव चढ़े नृप, सोच भयो जुग डूबन लागी।
भ्रात कहै बड़ कौंन उपाइ स, छोटहु कैत तिया बड़भागी।
ध्यांन करयौ तब लेत किराड़हि, जेठहि·देखन चाहि सु लागी।
आइ करयौ दरसन्न भयौ खुसि, गाथ अनूप हिये मध पागी ।।५८०

मूल

छपै **करत कीरतन मगन मन, मथुरादास न मंगियौ॥**
हिरदै हरि बेसास, सील संतोष सु आसै।
धर्म सनातन सुह्रिद, ज्ञांन रवि करत उजासै।
नंदकुवर सौं नेह, कुंभ धरि मस्तक ल्यावै।
पर्चर्या नैंबेदि, आचमन दे जल प्यावै।
श्रीबर्द्धमांन गुर की दया, रिसकराय् रंग रंगियौ।
करत कीरतन मगन मन, मथुरादास न मंगियौ ॥४५५

टीका

इंदव छंद बासति जारहि भक्ति करी रसि, वात करी इक तेउ सुनांवै।
स्वांग धरें चलि आवत सालग-रांम सिघासन मांहि डुलावै।
स्वांमिन के सिष जाइ र देखत, भाव भयौ कहि है परभावै।
आप चलौ वह रीति बिलोकहु, कैं सरबज्ञ चलें दुख पावै ।।५८१
लै करि जात भये परि पाइन, फेरि फिरावत नांहि फिरै है।
जांनि लयौ इन कौ परतापहि, मारि चलौ मन मांहि धरै है।
मूंठि चलावत भक्ति फिरावत, वाहि जरावत दुष्ट मरे हैं।
होइ दयालहि जाइ जिवावत, लै समझावत हाथ धरे हैं ।।५८२

१. खंबहि।

मूल

छपै प्रेम बधायौ पुंग सन, नृतक नरायनदास अति ॥
सबद उचारयौ येह, प्रीति कौ नातौ साचौ।
गावत पद मैं गरक, मदन मोहन रंग राचौ।
नृत्य और ऊ करै, यह गति कोऊ न ल्यावै।
देसी त्रिभंग बताइ, लिख्यौ चित्रांम लखावै।
प्रगट भई हंडिया-सराइ, राघो विलिया प्रांनपति।
प्रेम बधायौ पुंग सन, नृतक नरांइनदास अति ॥४५५

टीका

इंदव नृत्य करै हरि के मुख आगय, देसन मं रमि है जन भोरें।
छंद जाइ रहे हडियाह सरायहु, नांव सुन्यौ सु मलेछहु मीरें।
साध महाजन बोलि पठावत, आत गुनी इन ल्यावहु पीरें।
आइ वही तुम बेगि बुलावत, सोच भयौ वह नीच अधीरें ॥५८३
नृत्य करौं न बिनां प्रभु नेमहि, सेवन वा ढिग क्यूं बिसतारें।
ऊंच सिहासन दाम धरी, तुलसी सन देखि रु गांन उचारें।
मीरहु बैठि लखै नहि झांकत, स्यांम लगें द्रिग रूप निहारें।
वार न चाहत है कछु औरन, प्रांन चढ़े कर देन न डारें ॥५८४

मूल

छपै लक्षन उज्जल स्यांम के, येते जन बहु देत हैं ॥
१छीत स्यांम २गोपाल, ३गदाधर ४नारद ५कन्ह र।
६बछ्पतल ७हरिनाभ, ८अनंतानंद ९कुवर बर।
१०स्यांमदास ११जसवंत, १२कृष्णजीवन १३स्यामबिहारी।
१४बोहिथरांम १५दीनदास, मिश्र १६भगवांन जनभारी।
१७हरिनारांइन गोसू, १८रांमदास १९गोबिंद मांडल हेत है।
लक्षन उजल स्यांम के, येते जन बहु देत है ॥४५६
जगमग सूं न्यारे भये, जे जे भजबा जोगि है ॥
१रांमरैंन २जैदेव, ३बिदुर ४उधव ५रघुनाथी।
६बांमोदर ७सोढ़ा, ८दयाल ९गंगा मथुरा थी।
कुंडा १०किंकर ११परसरांम, १२परमानंद १३मोहन।

राघो १४गोपानंद, १५खेम १६चतुरो नागोहन।
१७द्वै-कृष्णदास १८बिश्रांम सुनि, सेससाई आरोगि है।
जगनग सूं न्यारे भये, जे जे भजिबा जोगि है॥४५७

बिदुर बैष्णु की टीका

इंदव छंद
है बिदुरं जयतारनि गांव स, संतन सेवन मै बुद्धि पागी।
मेह भयौ नहीं सूकत साखहि, स्यांम कही जन कौं बड़भागी।
साख कटाइ गहाइ उड़ाइहु, दोइ हजार मनं अनुरागी।
बात करी वह लोग न मांनत, रासि भये हरि सौं लिव लागी॥५८५

मूल

छपै
साधन की सेवा करै, मधुकर बृति करि ये भगत॥
१प्रमांनंद मधुपुरी, द्वारिका २गोमां आंहीं।
सांगावति ३भगवांन, दूसरौ काल ४खमांहीं।
५स्यांमसैन कै बंस, ६बीठल टोडै टकटारै।
७पीपाहड़ चौंथड़, ८खेम पंडा गोनारै।
केवल कूबा ९झींथड़ै, जैतारणि १०गोपाल रत।
साधन की सेवा करैं, मधुकर बृति करि ये भगत॥४५८
मथुरा महि उछव कीयौ, कांन्ह र बहुत उदार मन॥
बर्णाश्रम षट-दरसन, भूप कंगाल जिमाये।
संतन कौं सर्बस, देहु असे हुलसाये।
चंदन अंबर पांन, कीरतन करतां दीन्हे।
गहणे दीये उतारि, प्रभु के यौं रंग भींने।
सुत बीठल कौ सर्ब सिरै, असौ नांहीं आंन जन।
मथुरा महि उछव कीयौ, कांन्ह र बहुत उदार मन॥४५९
चीर बध्यौ दुरपद-सुता, त्यूं रिधि तूंवर भगवांन की॥
अद्‌भुत असौ भयौ, खांड मैंदा घृत बढ़िया।
हाटोक[1] रूपा ढेर, देखि परसन मन पढ़िया।
जीमन लीला रास, कांन की कीरति गाई।
संतन को सनमांन, बहुत संपति सब पाई।

१. सोनौ हाटक।

भीव-पुत्र महिमां करी, नहीं मथुरा नृप आंन की।
चीर बध्यौ दुरपद-सुता, त्यूं रिधि तूवर भगवांन की ॥४६०

टीका

इंदव छंद
आवत है बरसैं दिन नेमहि, सो मथु (रा) रो छव हेम लुटावै।
साध जिमाइ रु दे पट बौ-बिधि, पूजत पाछहि बिप्र न भावै।
छीन भयौ धन होत बिहालहि, साधन आवत नूंन करावै।
ब्राह्मन हौ दुख होत सुखी सुनि, ख्वार करौ इन काज कहावै ॥५८६
मांन करचौ सब सौंपि दयो उन, बांधि लयौ बिनती हु सुनावै।
साध जिमावहु रास करावहु, कै तुम पावहु देस मझावै।
रिद्धि भरो घरि रोक गदी तरि, देत बुलाइ दिनांन[1] घटावै।
काढत ताहुत चौगन बाढत, ठौरन ठौरन फेरि पठावै ॥५८७

मूल

छपै
जयमल केरी भक्ति सर, जसवंत दिढ़ बेला भयौ॥
संतन सूं सम भाइ, हिदै दुबध्या नहीं कोई।
जोरें आंनि पयाद, भवन आइ-स मैं होई।
स्यांमां प्रियसूं प्रीति, अहों-निसि परसन करई।
चांहै कुंज बिहार, चित्त बृंदाबन धरई।
भजन भवन नव मां प्रमांन, राठौर नृपति यह पन लयौ।
जैमल केरी भक्ति सर, जसवंत दिढ़ बेला भयौ ॥४६१
हरिजन हित हरीदास नैं, वांमाता असौ जयौ॥
गुन अनंत बड़गुह्य, सिरोमनि वोही बूझै।
तुलाधार सम ग्यांन, येक उर अंतर सूझै।
नौबति नेम बजाइ, प्रगट बृंदाबन परस्यौ।
स्यांमां प्रिय कौ नांम, लेत प्रतक्ष फल दरस्यौ।
धरम धर्म बिचारि कैं, संतन कौं सरबस दयौ।
हरिजन हित हरीदास नैं, वा-माता असौ जयौ ॥४६२

टीका

इंदव छंद
दास हरी बनियां ढिग कासिय, त्याग करूं तनके ब्रज भूं मैं।
नारि गई छुटि बेद चले उठि, आप कही सु महा बन त्यूं मैं।

1. दिजां।

च्यारि सुता हुत साधन देवत, डोलिय बैठत ध्यांनहि झूमैं।
आत सु चेन प्रभू जुग गावत, आश्चर्य मांनि परी पुर धूमैं ॥५८८
मारग मैं तन छूटि गयो पन, साच करयौ हरि प्रत्तखि देख्यौ।
इष्ट गुरें परनांम करी चलि, चीरहु घाट सु न्हावत पेख्यौ।
साथ हुते सब आइ भरे द्रिग, बेंन कहै वह जा दिन लेख्यौ।
भक्ति प्रताप लखौ मति आंनहि, स्यांम दया यह भाव परेख्यौ ॥५८९

मूल

छपै **भेंल भक्ति प्रभु की जु पे, धोरी उभै बताइ हूं॥**
बिष्णदास दाहिनैं, गांव कासीर नांव बल।
बांवी दिसि गोपाल गुना, रटि लै लक्षन भल।
गुर भगवत सम संत, जांनि निति प्रेति सो सुमरै।
स्यांम स्वांग बसि रहत, भक्त बल है उर हुमरै।
केसव कुलपति ब्रत सदा, राख्यौ तातें गाइ हूं।
भेंल भक्ति प्रभु की जु पे, धोरी उभै बताइ हूं ॥४६३

टीका

इंदव है गुर भ्रात उभै उर संतन, सेवन की नव रीति चलाई।
छंद जाहि महौछब जात लियें रिधि, गाडिय साधन देत मिलाई।
संतन की घटती नहि भावत, हेत यहै किनहूं न जनाई।
सिद्ध बड़े गुर है परसिद्धि, कहै कर जोरि सुनौं सुखदाई ॥५९०
है मन माँहि महौछव ठांनहि, आप कही करि बेगि तयारी।
न्यौति दये चहु वोरहु के जन, आत उनौ हित जागि सवारी।
चौंदिसि तै वह साध पधारत, पाइ परै बिनती स उचारी।
पांच दिनां जन ज्यांइ दयौ सुख, और दये पट बौ मनुहारी ॥५९१
भोर कही गुर द्यौ परिकर्महि, पैल सु नांमहि देव निहारौ।
अंबरसे तरु हेत घणौं जन, जांहि चले सिर पांइन धारौ।
दैहि बताइ कबीरहु कौं वह, बंध चले जुग दैंन सवारौ।
नांमहि देव मिले पग लागत[1], छोड़िहि नांहि कहैं सु बिचारौ ॥५९२

---

1. लागन।

पाप बनैं जित साधन आवत, दें सुख संत तहां सब आवै।
प्रीति लखी तुमरै हम हैं खुसि, जाहु चले सु कबीरहु पांवै।
जात मिले जन राज परे पग, देखि हसे मिलि नांव बतांवै।
हां जु कही तुम पैं किरपा बड़, सेव प्रताप कहां तुक गांवै ॥५६३

मूल

छप्पै　**करमैती कलिकाल मैं, सील भजन निरबाहियौ ॥**
मरन धर्म बर छोड़ि, अमर बर सूरति पाली।
लोकलाज कुल कांनि, काटि हरि मारग चाली।
प्रगट बसी ब्र जाइ, बदन जन कीरति करई।
धनि परसरांम पारीक, सुता असी उर धरई।
बिषै बासनां बवन[1] कर, बहुरि न ताकौं चाहियो।
करमैती कलिकाल मैं, सील भजन निरबाहियौ ॥४६४

टीका

इंदव छंद　भूप खड़े लहि तास पिरोहित, जास सुता करमैति बखांनैं।
स्यांम बसै उर कांम लजै लख, धांम सु सेव मनोमय ठांनैं।
जांमहुं जातन सुद्धि सरीरहि, फूलत अंग छिबी मति सांनैं।
गौंनहि कौ पति आत पिता तिय, चाव भयौ पट भूषन आंनैं ॥५६४
सोच भयो सु उपाइ कहा अब, हाड र चांम सरीर न कांमैं।
छोड़ि चलौं चित ऊठि मिटै दुख, प्यार भलौ जग मैं इक स्यांमैं।
कांनि र लाज नहीं कछु काजहि, चाहत हूं हरिया दिन धांमैं।
प्रात खिनांवहि यौं मन आंवहि, भागि चली प्रभु संग सवामैं ॥५६५
रैंन अधी निकसी उर लालहु, हेत लग्यौ बपुहू बिसराई।
जांनि भई परभाति स दंपति, सोर पर्यौ सब ढूंढत जाई।
दौर गये चहु वोरहि मांनस, ऊंट करंकहु मांहि दुराई।
भोग विषै दुरगंध लगी मन, वै दुरगंध सुगंध सुहाई ॥५६६
तीन दिनां सु करंक रही गति, बंक लई रति जात न गाई।
संगहि संगि सु गंग गईं चलि, न्हाइ र भूषन दै बन आई।
हेरत सो परसापुर आवत, केत पता इक बिप्र बताई।
ब्रह्महि कुंड स ऊपरि हौ बट, देखि लई चढ़ि देत दिखाई ॥५६७

---

१. बचन।

जाइ परचौ पगि रोइ कही पित, नांक कट्यौ मुख काहि दिखावैं।
चालि बसो घर हास मिटावहु, सासर जामति सेव करावैं।
ब्याघ र सिंघ हतै बन मैं डर, मात मरै तव जाइ जिवांवैं।
साच कही बिन भक्ति इसौं तन, त्या इतही मिलिकैं हरि ग वै ॥५६८

नांक कट्यौ कहि होइ कटै किन, भक्ति सु नांक तिहूं पुर गायो।
खोत पचास बरस्स बिषै लगि, त्यागत नांहि चबेहि चबायो।
भोगन मैं नहि सार पदारथ, कांम तजौं भजि स्यांम सुहायौ।
आंख खुली तम जात भयों सुनि, देत सरूप सु लै घरि आयौ ॥५६९

धांम बरचौ निसि लाल धरे रसि, राखि भलै चित टैल कराई।
जात नहीं कहु नांहि मिलै किन, पूछत भूप कहां दिज भाई।
काहु कही घर मैं प्रभु सेवत, भूप भयो खुसी सुद्धि मंगाई।
जाइ कह्यौ नृप देत असीसहि, कैतहि भूप चल्यौ घर जाइ ॥६००

प्रीति लखी नृप पूछत कैत सु, नीर बहै द्रिग स्यांम पगी है।
जात भयो नृप ल्यांउ इहां उन, पात हमैं अति चाहि लगी है।
तीर खड़ो जमुना-जल नैननि, राय लखी रति बौ उमगी है।
लाख बिसां बरज्यो नृप चा अति, कौन कुटीं घरि आत जगी है ॥६०१

मूल

छपै **कृष्ण रूप गुन कथन कूं, खरगसेन नृमल गिरा॥**
बड़ो भक्ति तन मध्य, बरनई दांन केलिकां।
तात मात सुत भ्रात, नांम कहि गोपि ग्वालिका।
मोहन मित बिहार; रंग रस मैं मन दीन्हौं।
चित्रगुप्त कै बंस, बिदत यह लाहा लीन्हौं।
स्मृति गौतमी आंनि उर, रास मांहि बपु तजि फिरा।
कृष्ण रूप गुन कथन कौं, खरगसेन नृमल गिरा॥४६५

टीका

इंदव छंद रास करावत ग्वालिर बासहि, पुंनिम सर्द लग्यौ रस भारी।
पाव चलावनि भाव दिखावनि, थेइ करावन जोरि निहारी।

‡भगवान ब्रह्माण ग्वाल गोप के है है माराजजा।(?)

जाइ मिले बपु छाड़ि र भावहि, लेत अनंत सुखै तन वारी।
साच दिखाइ दई हित रीतिहु, प्रेमिन कौं† अति लागत प्यारी ॥६०२

मूल

छपै गंग ग्वाल गहरौ अधिक, सखा स्यांम चित भांवतौ ॥
राधेजी की सखी हुती, वह संज्ञा पाई।
बृज के गांम रु ग्वाल, गाइ भिन भिन्न सुहाई।
स्यांम केलि आनंद, उदिध हिरदा मैं धारो।
मगन रहे रस मांहि, झूठ बांणी न उचारी।
चाहत बृज बृजनाथ गुर, संत चरन सिर नांवतौ।
गंग ग्वाल गहरौ अधिक, सखा स्यांम चित भांवतौ ॥४६६

टीका

इंदव छंद आत भयो पतिस्याह महाबन, सारंग राग सुनौं हठ ल्याये।
संग सु बल्लभ रंग बन्यौ अति, मात करे जल नैंन बहाये।
हाथहि जोरि कहै चलिये[1] मम, जीवत है बृजभूमि सुनाये।
संग लगे हठ जात दिली छुट, वावत तूवर आई समाये ॥६०३

मूल

छपै यह लोक प्रलोक सुख, लालदास दोऊ लह्या ॥टि०
उर‡ आकर प्रभु सुजस, प्रीति साधन सूं निति प्रति।
जगत कुवल सम बस्यौ, लहरि लालच ह्वै निरबृति।
प्रीक्षत ज्यूं बपु मुच्यौ, बघेरै मांहि बनैती।
बींद बन्यौ भजि रांम, संत समूह जनैती।
हरख भयो हरखापुरै, गुण गाया त्यूं गुर कह्या।
इहलोक परलोक सुख, लालदास दोऊ लह्या ॥४६७
संतन सेवा कारनैं, यहु तन माधव ग्वाल कौ ॥
अहनिसि करै उपाव, साध जा बिधि ह्वै परसन।
स्यांम स्वांग तैं हेत, दास कौ चाहै दरसन।
बरतै पर उपगार, और आसा नहीं मन मैं।
प्रेमा मगन महंत, गाइ है गुन-गन जन मैं।

---

१. कहौ चिलये।

---

†टि० = खान।

‡टि० = भगवान्।

दुखदलन मरदन मदन, नेह नेम हरि लाल कौ।
संतन सेवा कारनैं, यहु तन माधौ ग्वाल कौ ॥४६८
विदत बहुत लछि प्रेमनिधि, नम दिज तिन संग्या धरी ॥
उत्तम सहज सुह्रिद, मिष्ट गिर आनंद दाता।
संतन कौं सुखकार, प्रेमां नौमांतर राता।
भवन मांहि बैराग, तत्वग्र ही भव न्यारा।
नेम सनातन धर्म, भक्त निति लगै पियारा।
सहर आगरै करि कृपा, कथा पृथी पांवन करी।
बिदत बहुत लछि प्रेमनिधि, नम दिज. तिन संग्या धरी ॥४६९

टीका

इंदव छंद प्रेमनिधी बसि है पुर आगर, सेवन कौं तरकै जल ल्यावै।
चातुरमास जहं-तहि कर्दम, सोच करैं किम अप्रस आवैं।
जो चलि हौं तम मै बिगरैं सब, तौ हु चले नर छूत न भावै।
द्वारहु तैं सुकुमार लख्यौ इक, हाथि चिराक इनैं लगि जावैं ॥६०४
मांनत यू पहुचाइ चल्यौ किन, जो टलि है सुख को उघरी है।
आत भयो जमुनां लग आव्रज, न्हात भये बुद्धि वैं सु हरी है।
कुंभ धरयौ सिर आइ गयौ वह, छोड़ि गयो कौंन करी है।
होत भई चित्त चित गयौ बित[1], मित बिनां द्रिग होत झरी है ॥६०५
कैंत कथा सु हरै चित भाव, भरे किरपा करि दुष्ट जरै है।
जाइ कही पतिस्याह रिसावत, लोग बड़े तिय धांम भरै है।
चौपहिदार पठाय बुलावत, तोइ धरौं वह सोर करै है।
लेर गयौ नृप बूझत रंगहि, नारि करौ परसंग बुरौ है ॥६०६
गाथ कहौं प्रभु कांन्हहि की नर, नारिहु आइ रहै उन प्यारो।
ना बरजे न बुलावन जावत, नांहि बिषै तिय है महतारी।
बात भली तुम तौ कहि दीन सु, तो ढिग के नर कैत नियारी।
भूप कही इन राखहु देखहि, रोकि दये तब तौ हरि धारी ॥६०७
पौढत हौ पतिस्याह कही निसि, इष्ट धरयौ वहि को कहि प्यासे।
आब पिवौ कित[2] है सु परैं ढिह, पांवहि कौंन खिजे पुनि खासे।

---
१. छित। २. किन।

लात धरी कहि नांहि सुनी हम, आप कहौ वह पांवहि हासे।
रोकि दियौ वह कांपि उठ्यौ सुनि, भाव भयौ उर सौ दुख नासे ॥६०८
मानस भेजि बुलावत ताछिन, आवत पाइ लगे नृप भीजे।
साहिब कौं तिस जा जल पावहु, नांहि पिवै अनिवै तुम रीझे।
त्यौ दस गांव रहौं तुम पायन, नांहि गहौं द्रिबि राखत छीजे।
साथि चिराक दई पहुचावत, नीर पिवावत है प्रभु धीजे ॥६०९

मूल

छपै राघो तन करि दूबलौ, भक्ति भाव मोटो महा॥
परंपरा सिख गरू, छोड़णौं बिदत बतायो।
मांही बारैं नृमल, कलू कालौ नहीं लायौ।
सुंदर सहज सुसील, गिरा मृखा न सुहाई।
साध-संग मैं जाइ, कीरतन कथा कराई।
कहणी सूं चालै नहीं, जा जन की महिमां कहा।
राघो तन करि दूबलौ, भक्ति भाव मोटो महा ॥४७०
संतन की सेवा लीयें, जित तित भक्त बिराजहीं॥
पदमबेरछै रहै भट, ख्याव देवकल्यांणं।
हरिनारांइन भूप, चिग बोहिथ बर मांनं।
गांव सुहैलै रांमदास, तुलसीजू भेलै।
सहर हुसंगाबाद अड़ि, उधव झड़ झेलै।
प्रमांनंद वोली बिचै, ध्वजा धरम की साजहीं।
संतन की सेवा लीयें, जित तित भक्त बिराजहीं ॥४७१
कीयो भजन साधन सबल, अबला तन इन बाईइन॥
१बीरां २हीरांमन्य ३धनां, ४लक्ष दमां प्रगट जग।
५केसी खीचनी ६रांमबाई, ७लाली चाली मग।
८नीरां ९जमनां रैंदासनि, १०गंगा पुनि ११जेवा।
संत उपासनि १२गोमती, उभै १३पारबती सेवा।
१४बादर १५रांनी कुवरराय, यूं जांनौं १६हरखां जोइसिन।
कीयो भजन साधन सबल, अबला तन इन बाईइन ॥४७२
साध दया उर धारि प्रभु, कांन्हर-जन लाहौ लीयौ॥
लख्यौ भजन मग सत्य, जबै गुर सरनैं आयौ।
साच झूठि पहिचांनि, जगत भ्रम दूरि उड़ायौ।

सब सूं रह्यौ निराल, इंदु द्रुम साखा नांईं।
भारी गुन-गंभीर, सकल जीवन सम आंईं।
संत[1] सुजस आंनन सदा, अपजस कबहूं नां कीयौ।
साध दया उर धारि प्रभु, कांन्हरदास लाहौ लीयौ॥४७३
पापी कलि के जंत जे, केवलरांम कीये बिसद॥
गुर संतन सौं बिमुख, नांव जगदीस न गांवैं।
बहुत इसे नर-नारी, खैंचि मारग सति लावैं।
उज्जल प्रीति अकांम, कनक अरु कांमनि त्यागी।
सार-द्रिष्टि अज्ञान नसन, रहति करुणा के भागी।
स्यांम स्वांग नवमां भक्ति, देत नांहि बोलैं असिद।
पापी कलि के जंत जे, केवलरांम कीये बिसद॥४७४

टीका

इंदव धांमहि धांम कहै मम देवहु, ल्यौ हरि नांवहि सेव बतावै।
छंद स्वांग धरें लखिये न अचारहि, पूजन की प्रभु रीति सिखावै।
सागर है करुणां न सुने अनि, बैलहि चोट दई सु लुटावै।
ऊपरिई मगरां बिचि देखत, है सब ये कहि कै समझावै॥६१०

मूल

छपै हरि-बंस संत सेवा करै, द्रिब्य रहत बिस्वास हरि॥
गांन गाथ सूं हेत, साधन पूजन अति राजी।
खुरपा जाली न्याई, देत सर्बस ले बाजी।
करै नहीं बकबाद, सील सुमरन संतोषी।
भजे अखंडत स्यांम, आतमि या बिधि पोखी।
श्रीरंग सीस गुर धारि कैं, प्रभू मिल्यौ भव सिंध तरि।
हरिबंस संत सेवा करै, द्रिबि रहत बिस्वास हरि॥४७५
कल्यांन लयो कन बीन कें, सुजस सुगन हरि भजन जग॥
आंन रहत पतिब्रत, सीस गोबिंदहि धारे।
बैंन मिष्ट सुख दैंन, जगत चित[2]हरन उचारे।
करुणा के बड़ ढेर, दया उपगार बिबेकी।
संत चरन रज ध्यांन, काय मन बच क्रम येकी।

---

१. सब। २. (नहीं)।

पुत्र भलौ धर्मदास कौ, भयौ प्रगट श्रीरंग[1] लग।
कल्यांन लयो कन बींन कैं, सुजस सुगन हरि भजन जग ॥४७६
साधन के सतकार कौं, हरि जननी के निरमये[2] ॥
श्रीरंग १क्राहव सुमरि, लगनि २लाखा कै लागी।
मारू मुदित ३कल्यांन, ४सदानंद सदा सभागी।
५स्यांमदास लघु ६लंब, भक्त भजिये नृमल मन।
७चेता ग्वाल ८गुपाल, परस ९बंसीनारांइन।
१०संकर सलाघि† उर प्रसन, करत प्रभु धर्म ये।
साधन के सतकार कौं, हरि जननी के निरमये ॥४७७
स्यांम स्वांग पर भाग नैं, हरीदास हिरदौ सुहृद ॥
प्रीति परम प्रहलाद, सिव रस म है सरनाई।
देह दांन दधीच बाद, पुनि बलि सो राई।
सीस दैंन जगदेव, भजन पन मै बीकावत‡।
तूंवर-बंस बिगास, साध सेवा निति भावत।
पृथापुत्र* पीछैं बड़े, अदभुत कहा जस जगत सद।
स्यांम स्वांग पर भाग नै, हरीदास हृदो सुहृद ॥४७८

टीका

इंदव छंद
श्रीप्रहलाद सु आदि कथा जग, सौगुन है हरिदास सरीरं††।
है जगदेव समां रिझवार सु, तास कथा सुनियौ सब धीरैं।
येक नटी गुन रूप जटी कहि‡‡, तांन कटी हस तौं नर भीरैं।
रीझि रह्यौ नृप देवत सीसहि, राखि अबै हमरौ यह बीरैं ॥६११
दांहिन हाथ दयौ तुम कौंनहि, वाड़त भूप सु नीर बुलाई।
नांच र गांन करचौ नृप रीझत, लै अब ल्यावहु बांम कराई।
कोपि कह्यौ अपमांन इसो कर, जीवन[3] तौ जगदेव दिवाई।
जासु गुनी दस देत दिखावहु, होत नहीं यह मोहि सुहाई ॥६१२
भौत कही निह मांनत ल्यावहु, जात भई मम चीज सु दीजे।
काटि दयौ सिर सक्ति रह्यौ बपु, ढांकि रु आंनत नैंन लखीजै।

---

१. श्रीलाल। २. (रच)। ३. हाथ।

---

†संतसलाघि। ‡(भजन पन पन पू)। *जुधिष्ठिर। ††(तत)। ‡‡हंसता।

दूरि करयौ पट देखि गिरयौं नृप, बात नहीं द्रिबि की क्यम कीजे।
पांनि दयौ यम जो सिर[1] देवत, रीझि लई उनकी सुनि जीजे ॥६१३
रीति सुनी जगदेव सुता नृप, कैत पिता† सन मोइ न दीजै।
भूप बुलाइ कही समझाइ, सुनौ यह राइ सुता मम लीजै।
बार नख्यौ सत जाइ हतौ कत, लेर चले मम लै मति छीजै।
नैंनन देखहु काटि र ल्यावहु, आंनि धरयौ सिर फैरित रीझै ॥६१४
रीझि कही बिसतार सुनौ अनि, संतन सेव करै हरिदासा।
साधन सूं परदा न हिरदे सुख, भक्त रह्यौ इक पुत्रिय पासा।
ग्रीषम की रुति सोत छता जुग, देहहि देह मिली सुधि नासा।
प्रात भयें चढियो नृप ऊपरि, चादरि नांखि फिरयौ तरि बासा ॥६१५
दोउ जगे सखि चादरि लाजत, लेत पिछांनि सुता पित जांनी।
साधन ये द्रिग ऊठि चल्यौ नृप, आय परयौ पग बात बखांनीं।
होइ सुचेत करौ बिधि संक न, दुष्ट सुनैं नृप कै कुट बांनी।
निंदत है तुम हीय जरै मम, नांहि डरौं अपनी सुखदांनी ॥६१६
भक्त कलंक लगै इम कैत सु. संतन की घटती नहि भावै।
सर्म भई स बिषै छिटकावत, जीव बिचारि घनौं पछितावै।
फेरि करे खुसी राखि लये, हसि, देत बड़ौ सुख स्यांम लड़ावै।
भ्रात गुबिंद बजावत बंसिय, भूप कही मनमै नही ल्यावै ॥६१७

मूल

छप्पै **कृष्णदास कौं कृष्णजी, स्वैपद तैं दये घूघरा ॥**
मधुर चाल सुर ताल, गांन धुनि मांन तांन पुनि।
रमत रंग द्रिग भंग, संग सम अंगरास सुनि।
धुरपद अरु संगीत, बिरत[2] रतनांकर गावत।
स्यांमां स्यांम प्रसन्न, रागमाला उर भावत।
सुनार जाति खरगू अपति भक्ति भाप गुन सूं भरा।
कृष्णदास कौं कृष्णजी, स्वैपद तैं दिये घूघरा ॥४७९

---

१. जोरि दयो सिर। २. ग्रथ।

---

†(जयचन्द दल पांगलो धारा नगरी को)।

टीका

इंदव　दास किसन्न सुनार जुगल्ल हु, सेव करै नृति गांन उचारै।
छंद　होइ गयो गलतांन दिनां इक, नूपर टूटि परचौ न संभारै।
स्यांम लखी गति भंग भई निज, पाय न काढ़ि र लात पगारै।
होत भई सुधि नीर चल्यौ द्रिग, कीरति छाइ गई जग सारै ॥६१८

मूल

छपै　**श्रीनारांइनदास बड़, भजन अवधि स्वांमी सरस ॥**
जोग भक्ति करि अचल, गात अपनै बल राख्यौ।
आंनंदघन उर मांहि, स्यांम जस आंनन भाख्यौ।
ऐस्वर्ज भल चित रहसि, सदा भक्तन सुख दाता।
बिदत चैंन नर दैन, श्रीनारांइन राता।
साध सेव निति प्रति करै, देस उतर गनि ता दरस।
श्रीनारांइनदास बड़, भजन अवधि स्वांमी सरस ॥४८०

टीका

इंदव　बद्रियनाथ जु तैं चलि आवत, सो मथुरा सु किसोर रहाये।
छंद　मन्दिर लोग बरै दुःख जू तिन, नैन सरूप लगै चित जाये।
आप रक्षा करि है सुख होवत, जांनत नांहि प्रभाव लुभाये।
दुष्ट लखे इक पोट धरी सिरि, लेरि चले मग ना दुख पाये ॥६१९
पेखि बड़े नर लेत पिछांनि सु, पाय लग्यौ परनांम करी है।
पेखि प्रताप परचौ पग दुष्टहु, कष्ट लह्यौ कहि झूठ मरी है।
या करि काज बनै तुमरौ सति, जात नहीं घरि आंखि झरी है।
संतन सक्ति भयौ उपदेसहु, भक्ति लइ उर बास जरी है ॥६२०

मूल

छपै　**लक्षमी भर भगवानदास, सरल चित्त अति सुष्ट जन ॥**
भक्ति भावनां भूप, बिनै उत्म लक्षन घन।
पीवत रस भागोत, बरनि चोजा जांनैं गन।
बसत मधुपुरी निति, हेत साधन चरनांमृत।
हेरत हरि बिश्रांम, नांम गुन रूप यहै बिन।
सिथिर बुद्धि उर सहनता, निडर महा छाड़ै न पन।
लखिमी भर भगवानदास, सरल चित्त अति सुष्ट जन ॥४८१

टीका

इंदव छंद
जांनन कौं पनस्याचित आंनत, दांम तिलक्कही ध्यात[1] दुहाई।
जीवन कौं सब दूरि करै जन, मांनत आंनहु मारि डराई[2]।
लै भगवांन बिसेख करे तन, भक्ति भयौ उर रीति सुहाई।
भूपति रीझि दई मथुरा बसि, मंदिर श्रीहरिदेव कराई ॥६२१.

मूल

छपै
गोविंद गलि सोहै सदा, संत रतनमय दांम ॥
सुष्ट सहज घनस्यांम, धांम रतमत उतम अति।
नांनां वत जन प्रीति, रीति यह नीति सुघर-मति।
हस[3] पींन सुर सरल बाक, कहि सव मन-भांवन।
दिग दूनो बिसवास, साध का परचा गावन।
दास नरांइन गोपि जे, कीये प्रगट गुन नांम।
गोबिंद गलि सोहै सदा, संत रतनमय दांम ॥४८२
मघवानंदन भक्त नृप, परिजा प्रतिपालैं भलैं ॥
कमला सहित लड़ात जगत, स्यंघ भजन भाव करि।
लक्षमीपति आधीन, कीये उत्म रसि उर धरि।
ताकी कीरति करत कठिन, कलिजुग के राजा।
बचन न लोपै भृत्य, सूर सांवत सुख साजा।
मारतंड भुजदंडां[†] सम, अरि अंधेर दोऊ पुलैं।
मघवानंदन भक्त नृप, परिजा प्रतिपालैं भलैं ॥४८३

टीका

इंदव छंद
सेवत है लक्षमी सु नरांइन, यौं पन संगहि राखत डोला।
जावत है जुध कौं तव आगय, नांतरि पूठि रहै यह तोला।
जैसिंघ सो जसवंत सुनी जल, ल्यावत सीस लखै यह छोला।
जात दिली सु बजारहि आवत, देखि परे पग थे निरमोला ॥६२२
जैसिंघ जूहि कहै मम नेह न, है तुम्हरी भगनी उर जैसौं।
दीपकुवारि बड़ी हरि भक्ति सु, क्यूंक भजैं हम नांहिं नवैसौ।

---

१. ह्यात। २. मराइ। ३. हुस।

---

†टिप्पणी — सूरवीरण।

भूप सुनी खुसी होत हुती रिस, गांव दये सु उतारत मैं सौं।
कागद भेजि दयो बरजौ मति, दीपकुवारि करौ मन ह्वै सौं ।।६२३

मूल

छपै गिरधरंन ग्वाल गोबिंद संगि, तन मन धन अर्पि कैं नच्यौ ।।
घर मधि घरिनि उदार, सदा मन पूरौ राख्यौ।
समैं सदन धन त्यागि, बचन सति पति सूं भाख्यौ।
मात-पिता की रीति, पुनि पुत्र न पाली।
भक्ति सबीरज मंत्र परैं, नहीं कतहूं खाली।
जन राघो रिझये रांमजी, मालपुरैं मंगल रच्यौ।
गिरधरन ग्वाल गोबिंद संगि, तन मन धन अर्पि कैं नच्यौ ।।४८४

टीका

इंदव छंद संतन सेव करै गिरधरन सु, देखि सुखी हुत है रति साची।
त्याग करै बपु खोलि पिवै पग, रीति सबै अनि नाहि न काची।
बिप्र कहै सब बात सुहात न, त्याग करौ जन फेरि न राची।
होइ अभाव जको मति लेवहु, जांनत हूं पर भावन बाची ।।६२४

मूल

छपै साधू[1] सेवत सुष्टमति, गोपाली जसमति समां ।।
दसधा रस दिल मांहि, प्रभु पतिब्रत सौं सेवत।
कलि कालिय तैं रहत, संत कौं सर्बस देवत।
नृमल गिरा सुसील, सदा मोहन लैं पागी।
सुभ लक्षन सुभ कला, येक हरिजन रति जागी।
अंतहकरन बिसद महा, भजन रसिक हिरदैं जमां।
साधू सेवत सुष्टमति, गोपाली जसमति समां ।।४८५
संतन की सेवा समझि, रांमदास रतमत करी ।।
सुहिद सांत सम सहजि, गिरा आर्जव अति आंनन।
सुरज साधू पेखि, खिलै उर अंबुज कांनन।
मंगलचार उछाह, सहित भगतन कौ पूजन।
पद पखारि प्रनांम, रचत, नांनां बिधि बिंजन।

---

1. साधन।

बसिबो बछ्र बन प्रेम पन, उभै पदन परि मति खरी।
संतन की सेवा समझि, रांमदास रतमत करी ॥४८६

टीका

इंदव छंद
संत सुनी इक भक्तिहि देखन, आवत रांम हि दास बतावो।
आप उठे पग धोइ लयौ जल, आवत रांमहि दास रहावौ।
भोजन पांन करौ उन ल्यावहु, रांम हि दास यहै चलि पावौ।
पाय परयौ जन भाव भयौ मन, मात नहीं तन हौं अति चावौ ॥६२५
ब्याह सुता हि रच्यौ घर मै वड़, लै पकवांन सुसाल धरे हैं।
चांक गुलीहु लगाय रहे सुत, खोलि लयो अनि नांहि डरे हैं।
साध पधारत पोट पठावत, जाइ जिमावत भाव भरे हैं।
पूजत हैं सु बिहारीय लालहि, मो मन संतन भक्ति हरे हैं ॥६२६

मूल

छपै
रांमराइ दिज सार सुत, प्रभु प्रीति पनपा रही ॥
भजन जोग निरबेद, बोध दिढ़ ह्रीदै बिचारे।
लोभ क्रोध मद काम, मछर मोहादिक मारे।
श्रवन† मनन गुनगांन, मुदित सुख सागर न्हावै।
साध सूर परकास, ह्रिदौ अंबुज बिगसावै।
वा पाघ परी पृथ्वी परै, दोष पिसरणता धार ही।
रांमराइ दिज सार सुत, प्रभु प्रीति पनपा रही ॥४८७
भजन भाव दातारपन, यह निबह्यौ भगवंत कौ ॥
स्यांमा-स्यांम बिहार, सार ह्रदै मैं दरसै।
रसिक राइ जस गाइ, धाइ प्रभु पद सद परसै।
आंन रहत इक भक्ति, संपरदा मधि निहारी।
कर्म सुभासुभ डारि, धारि उर प्रीति बिचारी।
सुवन सरस माधौ तणौं, स्वांग भाइ हरि कंत कौ।
भजन भाव दातारपन, यह निबह्यौ भगवंत कौ ॥४८८

टीका

इंदव छंद
सूरज के भगवंत दिवांन, महा बन-बासिन सेव करी है।
साध गुसांइ र ब्राह्मन को, ब्रज-बासिन दे धन प्रीति खरी है।

†टिप्पणी—जोतष।

गोबिन्ददेवजु सेव करै गुर, है हरिदास चले सु धरी है।
चावर दूध जच्यौ हरि जावत, होत खुसी मति जांन हरी है ।।६२७
आत सुनै गुर मात नहीं तन, कैत तिया सन कौंन करीजै।
जोइ कही घर संपति मालहि, भेट करौ इक बेठ न लीजै।
होत खुसी सुनि भक्ति सु तौ तनि, मानत मो मनि पेख[1] हि भीजै।
कांन परी यह बात फिरे, हरिदास लख्यौ पन आबन रीझै ।।६२८
होत उत्साह रह्यौ तन दाह सु, आय स पाय चले बन आये।
मांनि रहे सुख सब्द कहे मुख, जाइ वहां बृज लोग छुड़ाये।
चोरिय धांम करी न कुभावहि, बुद्धि प्रिया पिय मै द्रिग लाये।
है बड़भाग हरी अनुराग, पिता रसिकी जन माधव पाये ।।६२९
अन्त पिछांनि नहीं सुधि जांनिस, आगर सूं सब लै बन जावै।
आत भये अधि होइ गई सुधि, कूर चले कत जो तुम भावै।
मो बपु फेरहु ह्वां नहि लाइक, बारत बास प्रिया प्रिय आवै।
भ्कां मन होइ स जाइ तहां चलि, भावइ सो वह जागि समावै ।।६३०

मूल

छपै बच्यौ सुबरना अगनिमुख, यौं रांम जपत ज्वाला टरी ।।
चंद्रहास की बेर, न्याव हरिनी कौ कीन्हौं।
विष देतैं बिषिया दई, बहुरि नृप टीकौ दीन्हौं।
कुटम सहत इक भूप, भवांनी पूजन मारचौ।
भरत चक्रवत देखि, पाय गहि पलौ पसारचौ।
जन राघो राख्यौ भरथरी, भई सपत सूली हरी।
बच्यौ सुबरनां अग्निमुख, यौं रांम जपत ज्वाला टरी ।।४८९
सत त्रेता द्वापर जुग्ग सूं, अब कलू कीरतन सार है ।।
गोपी प्यंड प्रजन्न पतिन, परिहरि सुनि भागी।
सुर नर असुर सु नाग, पुरष-पतिनी हरि रागी।
धर्म तेज तिपुरा बच्यौ, हरि सुख मृग्यौ काल कौं।
बृध्यौ बंस बिरोधतहि, धन परजन धनपाल† कौं।

---

1. पेमहि ।

---

†टिप्पणी—सेत ।

राघो सुनत तुरंग तन पलट्यौ, तसकर सुन्यौ बिचार है।
संत त्रेता द्वापर जुग्ग सूं, कलू कीरतन सार है ॥४६०
कउवा तजत किराट कौं, गई अपसरा बरन कौं ॥
भक्ति करत इक भूप, सही कसणी अति भारी।
तब भेटे भगवांन, आइ त्रिभुवन के धारी।
नारि पलटि नर भयौ, सीत परसादी पाई।
भांड भक्त परतक्ष, नृपति पूज्यौ निरताई।
कुवर कठारा की कथा, जन राघो कही जग तरन कौं।
कव्वा तजत किराट कौं, गई अपसरा बरन कौं ॥४६१
लाहौ मनिखा देह कौ, लालमती लीयौ लाल भजि ॥
प्रिया प्रीय तैं प्रेम, प्रेम कालिंद्री तट तैं।
कुंज गली तैं प्रेम, प्रेम अति[1] बंसीबट तैं।
जन गोकल तैं प्रेम, प्रेम गिर गोवरधन तैं।
प्रेम मधुपुरी अधिक, प्रेम घन बारे बन तैं।
बृंदाबन मै जा बसी, सो नगरी घर माल तजि।
लाहौ मनिखा देह कौ, लालमती लीयौ लाल भजि ॥४६२
दक्षण-देस दूजौ कृष्ण, पंडित कृष्णोजी सही ॥
जाके पग के मांन, भाव उर वही भांवनां।
कृष्ण-बसन अरु कृष्ण, जपन पुनि कृष्ण चावनां।
कृष्णहि कौ उपदेस, कृष्ण सब मांहि बतावै।
कृष्णहि सूं रतमत, कृष्ण बिन और न गावै।
बिबेक ग्यांन निरबेद, निज भक्ति बिसतरी वा मही।
दक्षन-दिसि दूजो कृष्ण, पंडित कृष्णौजौ सही ॥४६३
उत्तरदिसि उज्जल भक्त, बारह भये बखांनिये ॥
१थंभण २द्वंदूरांम ३कलंकी कलंक उड़ायौ।
बहुरि ४बलंकीरांम, ५रसालू दूध चितायौ।
६रांमराइ ७हरिराय, रांम ८दादू दिल दरसे।
९रांम मालू १०रांम रंग, पुनह दादू ११प्रभु परसे।

---

१. आत।

१२रांम सायर रत रांम सूं, सुतै सिधि ये जांनिये।
उत्तरदिस उज्जल भक्त, बारह भये बखांनिये ॥४६४

महंत राघवा अंध भयौ, तिहूं लोक उजागर।
पाटि द्वारिकादास, बड़ौ सिष धर्म की आगर।
अरु टीकू हीरा सु, रांम-रस पीय मतिवारा।
येकहूं छांनां नांहि, स्वांमी लोहा गरवारा।
जन तिलोक पूरन बैराठी, कटि हरिया कृष्णदास भनि।
राघो रांम न बीसरै, जिनि बड़ौ सरन गह्यौ संत धनि ॥४६५

कृष्ण जाड़ौ संत, लाल गुलांम भनीजै।
बाबा लाल सु उतर-खंड मैं धांम सुनीजै।
लालदास बहु बरणि, गाइ जस जोध प्रमत्ता।
सहर आगरै मांहि, कीयो अतिहास सपत्ता।
राघो रहणि सराहिये, कहां लौं बरनौं रांम दल।
भीर परें भाजै नहीं, यौं भगतन कै भगवांन[1] बल ॥४६६

ग्यांनी गदि गलतांन अति, अखौ येक गुजरात मैं॥
सोनीकुल महि जनम, आत्मा कौ अनभौ उर।
ससा-स्रिग मृग-नीर, जगत अैसौ जान्यौं धुर।
जसवंत राजा सुन्यौं, गयो सो आप तास पहि।
गोष्टि करी अघाइ, जाइ बनराज आसनहि।
भक्ति ज्ञांन बैराग सम, अद्वीत[2] दिखायौ बात मैं।
ग्यांनी गदि गलतांन अति, अखौ येक गुजरात मैं ॥४६७

ये पुनि पुनीति प्रमार्थी, सब सदन प्रमानंद साह कौ॥
करि उद्यम उदार, उ देही करी उजागर।
पूजि भक्त भगवंत, भक्ति कौ थरप्यौ आगर।
माहौरा तू रांमजी, बालकृष्ण नृस्यंघ निघू।
सकल कुटंब धर्मात्मां, लघु दीरघ बेटी बधू।
राघो रांम निवाजि है, प्रभु करि है तन निरबाह कौ।
ये पुनि पुनीति परमार्थी, सब सदन प्रमांणंद साह कौ ॥४६८

---

१. भगवंत। २. (हाथ मिटावता जान)।

यौं बलिदाऊ कलि मैं करो, समन ज्यू सापुरस[1] गति ॥
कुलसूं तांनू तोरि, फोरि घर लई जलैबी।
संतन कौ मुख पूजि रह्यौं, अब छैनी ह्वै गैबी।
सौंज सवाई बढी, रांमजी रीति बिचारी।
जग्य[2] पुरस जगदीस, प्रगट रस राख्यौ भारी।
जन राघो उपजी राति इम[3], मन बच क्रम कीयों धर्म अति।
यौं बलिदाऊ कलि मैं करो, समन ज्यूं सापुरस गति ॥४९९

मनहर छंद

[4]मसकति करत मगन मतिवारौ भयौ,
नांवकी लगनि कीन्ही कांन्हां लड़ बावरौ।
येक निसा निकटि निसंक रही बाई येक,
भोर भयें सोर भयौ चोर है तूं राव-रौ।
ज्वाब कीन्हौं जुलम जगतपति जाणें भेद,
भरि आये थांन कांन्हा पीवै असैं डावरौ।
राघो कहै परचौ प्रचंड भयौ जांण्यौं जब,
बीनती करत सब गांव[5] दोष छावरौ ॥५००

छपै

दादू दीनदयाल के, येते पोता सिष प्रसिध गनि ॥
प्रथम १फकीर २प्रहलाद, ३खेम छीतर सुबिचारी।
४कल्यांण ५केवल ६चैंन, ७नरांइन च्यारि सु भारी।
८नृस्यंघ ९दमोदरदास, १०गोबिंद ११बेणी ब्रह्मबंसी।
१२दास बड़ौ १३गोपाल, १४अमर १५बालक हरि अंसी।
१६चत्रदास राघो उभै, १७मोहन १८भीख १९गरीब जन।
दादू दीनदयाल के, येते पोता सिष प्रसिध गनि ॥५०१

फकीरदासजी को मूल

मनहर छंद

दादूजो दयाल कीन्ही दया निज नातौ परि,
फहम फकीरी कौ फकीरदास पायौ है।
आये कौं अजब दत रिधि सिधि सील सत,
येतौ अंस कृपा मधि अैन आप आयौ है।

---

१. पुर संगति। २. जषे। ३. (चोरी परमार्थ)। ४. (उपाय कर गुदरान छै)। ५. (साच)।

बाईजी स भाईजी सरस सिर हाथ धरचौ,
संत हूं महंतन सबन मन भायौ है।
राघो कहै रांम धनि पाई बड़ी ठौर बनि,
धनी मसकीन[1] धनि माता जिन जायौ है ॥५०२

छपै
स्वांमी ग्रीब महंत कै, टीकै केवलदास बर ॥
प्रेम भक्ति कौ पुंज, रचे पद साखी नीके।
करुणां बिरह बियोग, सुनत उद्धारक जी के।
जो चलि आवै साध, बहुत तिन आदर करई।
भजन भाव सत सील, देखि सब कौ मन टरई।
राघो महिमां करत वै, सुख पावै नारी रु नर।
स्वांमी ग्रीब महंत कै, टीकै केवलदास बर ॥५०३

मनहर छंद
सूबौ अजमेरि ताकौ भज्यौ ही दिवांन आयौ,
केवल बिराजै बड़ी सरणि निरांने हैं।
आये असवार ताकौं पकरि ले चाले जब,
केवल हूं आये डरपांने दुखदांने हैं।
जिमी मैं गडाऊं थोथे तुकन मरांऊं यह,
वंद वाजे राखै मेरौ काफरन जांने हैं।
दई काढि खंजर की पेट मांझ भृति वाकै,
परचौ प्रतक्ष भयो जगत बखांने हैं ॥५०४

छपै
इम रज्जब अज्जब महंत कै, भले पछोपै साध सब ॥
दीरघ १गोबिंददास, पाटि अब रांमट राजै।
२खेम सरस सरवाड़ि, तास सिष तहां बिराजै।
३हरीदास ४छीतर ५जगन, ६दामोदर ७कैसौ।
८कल्यांण दो बनवारि, रांम रत-मत गहि कैसौ।
जन राघो मंगल राति दिन, दीसत दै दैकार अब।
इम रज्जब अज्जब महंतकै, भलै पछोपैं साध सब ॥५०५

---

१. समकीन।

मनहर छंद
महंत रजब के अजब सिष खेमदास,
जाके नेम निति प्रति व्रत निराकार कौ।
पंथ मधि प्रसिधि हौ देखिये दैदीपमांन,
बांणी कौ बिनांणी[1] अति मांझीं न मै मारि कौ।
रांमति मेवाड़ मै वासी मुख सोहै बात,
बोलत खरौ सुहात बेता वा बिचार कौ।
राघो सारो रहणी कहणी सुकृत अति,
चैतन चतुरमति भेदी सुख सार कौ ॥५०६

छपै
प्रम-पुरष प्रहलाद धनि, देवजोति दिजकुल भयौ ॥
दिपत देह दैदीप, दुती सनकादिक वोपै।
दिढ़ द्रिगपाल महंत, परम गुर थप्यौ पछोपै।
श्रीदादू दादा गुर लगै, सर्बग्य सुंदरदास गुर।
यौं निराकार कौ नेम ब्रत, पहुचायौ परलोक धुर।
इम राघो रांम परताप तैं, प्राण मुक्ति परमपद लयौ।
प्रम-पुरष प्रहलाद धनि, देवजोति दिजकुल भयौ ॥५०७

मनहर छंद
दादूजी के पंथ मैं दरद वंद देवजोति,
प्रगटे प्रहलादजी प्रहलाद कै पटंतरे।
वह प्रेम वह नेम वह पण प्रीति रीति,
वह मन माया जित मगन महंत रे।
वह जत वह सत वह रंग रांम रत,
नृमल नृदोष सुखदाई महासंत रे।
राघो कहै मन बच क्रम धर्म धारणां सूं,
जीवत मुकति भयौ वोपमां अनंतरे ॥५०८

छपै
दादू केरा पंथ मै, चैन चतुर चित चरण हरि ॥
कथा कीरतन प्रीति, हेत सौं हरि जस गाया।
साथि र[2] रहै समाज, प्रेम परब्रह्म लगाया।
गृंथ रचे बहु भांति, बिहंगम नांमां रूपक।
सिधि साधिक गुन कथन, जास थैं अधिके ऊपक।

१. छिनानी। २. साथरि है।

ग्यांन जोग बैंराग मग, बरणे मन बच काय करि।
दादू केरा पंथ मै, चैंन चतुर चित चरण हरि ॥५०९

इंदव छंद दादूदयाल गोपाल प्रताप तैं, चैंन कै ग्रैंन यौं ग्यांन उपन्नौं।
आठहु जांम अखंडत येकहि, यौं उर मै गुर जाप जपंन्नौ।
बीणि लीयौ बित ब्रह्म बड़ी निधि, देख्यौ सबै जग झूठ सुपन्नौ।
सास सबद सुरत्ति बिचारत, राघो कहै धुनि ध्यांन निपंन्नौ ॥५१०

मनहर छंद दादूजी के पंथ में सराहिबे जुगति जति,
नांव कौ लिहारी भारी निरांनदास मांगल्यौ।
सोभित सकल अंग रोम रोम नांव नग्ग,
ब्रह्मा विद्या-वीदड़ी पहरि भयौ आंगल्यौ।
भजन कौ पुंज गलतांन लग्यौ रांम रंग,
स्यांम कांम सूरबीर मोक्षपद नांगल्यौ।
आग्याकारी असिल मिसल भजनीकन की,
राघो रूड़ी भांति सेति जाइकैं रांमैं रल्यौ ॥५११
मोहन दफतरी कै दिपत पछोपैं दीप,
चत्रदास चैंतनि परबींन परसिधि है।
रांमजी कौ बासौ जाकी रांमसाला मध्य बृध्य,
विद्या उपविद्या ताकैं क्रम मधि रिधि[1] है।
सांखिजोग क्रमजोग भजन भगति-जोग,
विद्या बेद सास्त्रहि जांणैं सारी बिधि[2] है।
राघो कहै राति दिन रांम न बिसारचौ छिन,
तन मन जित निरपक्ष बड़ी निधि[3] है ॥५१२

छपै दादू गुर दसहूं दिसि, प्रगट धर्म †मोरधी मोहनदास ॥
तास पाटि थिर थप्यौ[4] धुरंधर, जन गरीब गोविंदनिवास।
तास पछोपैं श्रबगि सिरोमनि, हरि प्रताप उपज्यौ प्रमहंस।
भजि भगवंत भरम कर्म प्रहरि, कीयो उजागर ऊंचो बंस।

१. रिध्य। २. विध्य। ३. निध्य। ४. थरप्यौ।

†(धर्म कौ धोरी)।

बड़ो पुरष पुरसा[1] रचव, या आंवानेरी अजब उठाण[2] ।
जन राघो प्रणम पछोपै वोवैं, तुलछीदास तपै जिम भाण ॥५१३
अब जगजीवन कै पाटि है, दिपत दमोदरदास भणि ॥
ध्यांनदास धनि पिता, आंन तजि हरिगुण गावै ।
भ्राता कान्हड़दास, सहित हरि भक्ति बढावै ।
सकल पराकृत संसकृत, कवित छंद गाहा गूढ़ा ।
खीरनीर निरवारि, करै अरथन का कूढा ।
यम राम जपत राघौ कहै, सकल कुटंब की गई सु बणि ।
अब जगजीवन कै पाटि है, दिपत दमोदरदास भणि ॥५१४

मनहर छंद

नारांइन दूधाधारी घड़सी गुर पाय भारी,
राजा जसवंत असवारी भेजी आइये ।
बैलन लीये चुराइ भैल कैसें चलै पाइ,
चढ्य करि कह्यौ जु निरंजन चलायये ।
भैल चली आवै अचिरज सब पावै,
राजा सनमुख ध्यायौ हुलसायौ मन भाइये ।
अदभुत कीनौं नृप चीन्हौं द्रिष्टि आपनी,
सु परचौ प्रतक्ष यह संतन सुनाइये ॥५१५

छपै

दादू दीनदयाल कै, घड़सी घट हरि भजन कौं ॥
घड़सी कै गोंबिददास, कुल नांमां बंसी ।
रची डीडपुर साल, भक्ति बल है हरि अंसी ।
बांणी करी रसाल, ग्यांन बैराग चितावनि ।
साखि सबद मै रांम, नांम गुन और न भावनि ।
परचा दे परकाज कौं, जांनत तन प्रभु[3] संजन कौं ।
दादू दीनदयाल के, घड़सी घट हरि भजन कौं ॥५१६

मनहर छंद

रतीयाज गांव देस जंगल मै हुतौ संत,
प्रमांनंद रहै दया सील सत पाले हैं ।
परचौ है दुकाल देस मटकी भरी ही सात,
बाबा अन सौंपि लोग मालवा कौं चाले हैं ।

---

१. पुरासार । २. (प्रभाव) । ३. प्रछ ।

आये हैं असाढ़ मास बरखा भई है पास,
बाहन कौं नाज नास चिंता मनि साले हैं।
मटकी बताई अन भरी सो दिखाई सब,
लीये[1] पाव खैंचि सब अचिरज न्हांले हैं ॥५१७

नालेरी प्रमांन सूके टूकरे भिजोइ राखै,
पांनी घोरि पीवै स्वाद षटरस त्यागी है।
रिधि सिधि अवै बहु संतन खुवावैं,
प्रमारथ बतावै अप स्वारथ न मांगी है।
आतम कवल जहां ग्यांन कौ प्रकास कीयौ,
हिरदै कवल तहां ब्रह्म लिव लागी है।
प्रमांनंद आनंद सु पायौ बनवारी गुर,
सेवै संत चरण सदा ही बड़भागी है ॥५१८

छपै
दादू दीनदयाल कै, सिष बिहांणी प्रागदास ॥
ताकै सिष दस भये, दसौं दिसिही कौ गाजै।
१रांमदास बड़ सिष, फतेपुर अस्तल राजे।
२केसौदास ३निरांनदास, ४बोहिथ ५धर्मदासा।
६हरीदास ७हरदास, ८प्रमाणद ९टीकू पासा।
१०टीकौ माधौदास कौं, सब दीयौ डीडपुर मांहि तास।
दादू दीनदयाल कै, सिष बिहांणी प्रागदास ॥५१९

दादूजी कै जगंनाथ, जाकै है बलरांम निधि ॥
दिपे सहर आंबेरि, राइ महास्यंघ नवाये।
भजन तेज प्रताप, प्रगट प्रचे दिखराये।
जिते सचिव उमराव, रहै कर जोरें ठाढ़े।
करवायौ मध धांम, पूरबिया सेवग गाढ़े।
चरण सरण जे आप रे, तिनके कीये काज सिधि।
दादूजी के जगंनाथ, जाकै है बलरांम निधि ॥५२०

माखूं दादू दास कौ, जाकै बेणीदास जन ॥
अगुन भक्ति कौ भाव, नांव निति प्रिति मन भायौ।

---
१. भये।

जनम करम गुन रूप, कृष्ण तन दसम बनायौ।
पखा-पखी सौं रहत, सहत बैराग बिबेकं।
पंथ संप्रदा संत, सबन कूं जानत येकं।
चांमलि तीर गंगाइचौ, जन राघो कीयो वास वन।
माखू दादू दास कौ, जाकै बेणीदास जन ॥५२१
बूसर सुंदरदास कै, सिष पांच प्रसिधि हैं॥
टीकै दयालदास, बड़ौ पंडत परतापी।
काबि कोस ब्याकरण, सास्त्र मै बुद्धि अमापी।
स्यांम दमोदरदास, सील सुमरन के साचे।
निरमल निराइनदास, प्रेम सौं प्रभु पैं नाचे।
राघो-रांम सुं रांम-रत, थली थावरे निधि हैं।
बूसर सुंदरदास कै, सिष पांच प्रसिधि हैं ॥५२२

मनहर छंद

सुंदर के नरांइनदास काहू कै न संग पास,
रहत हुलास निति ऊंचे चढि गांवहीं।
दिल्ली के बजार मांहि डोले मैं हुरम जांहि,
परे कूदि तांहि नीकी गोष्टि करावहीं।
साथ केनि सोर कीयौ आप उन चेत लीयौ,
कूदि गये जहां के तहां अचिरज पांवहीं।
गगन मगन जन सुख दुख नांहीं मन,
गावत सु रांम गुन रत रहै नांवहीं ॥५२३

छपै

दादू दीनदयाल के, नाती बालकरांम ॥
करै हंस ज्यूं अंस, सार अस्सार निरारै।
आंन देव कौं त्याग, येक परब्रह्म संभारै।
कीये कबित षट तुकी, बहुरि मनहर अरु इंदव।
कुंडलिया पुनि साखि, भक्ति बिमुखिन कूं निंदव।
राघो गुर पखि मै निपुन, सतगुर सुंदर नांम।
दादू दीनदयाल कै, नांती बालकरांम ॥५२४
दादू दीनदयाल कै, नाती उभै सुभट भये ॥
चतुरदास अति चतुर, करी येकादस भाषा।

पखापखी कौं छाड़ि भज्यौ हरि सास उसासा।
भीख बांवनी प्रसिधि, सु तौं सारैं जग होई।
जा मांहै सब भाव, जाहि भावै सो सोई।
संतदास गुर धारि उर, राघो हरि मैं मिलि गये।
दादू दीनदयाल के, नाती उभै सुभट भये॥५२५
दादू दीनदयाल कै, नाती दास सर्बज्ञ मनूं॥
बांणी बहु बिसतरी, मांहि गुर हरि भक्तन जस।
सपतदीप बरणियां, ग्रंथ गुणसागर अति रस।
पंथपरक्षा आदि ग्रंथ, बहु पद अरु साखी।
महिमां बरणी नांव, भक्ति बिरदावली भाखी।
राघो ठाकुर पद परसि, इन पायौ अनुभौ घनूं।
दादू दीनदयाल कै, नाती दास सर्बज्ञ मनूं॥५२६
दादू दीनदयाल कै, नांती दोइ दलेल मति॥
नृस्यंघ करी निज भक्ति, प्रेम परमेसुर मांहीं।
छपै सवईया कीये, दोष दस दीये दिखाई।
अमरदास के सबद, सूर कै पटतर दीजै।
बिरह प्रेम संमिलत, चोज अनप्रास सुनीजै।
राघो हूं बलि रहणि की, नीकै सुमरे प्रांनपति।
दादू दीनदयाल के, नाती दोइ दलेल मति॥५२७
इम प्रमपुरष प्रहलाद कै, सिष हरीदास सिरोमनि भयो॥
कुछवाहौ कुल आदि, नांम पहली हौ हापौ।
पुनह परसि प्रहलाद, तज्यौ कुल बल क्रम आंपौ।
कोमल कुछव कुवार, नहिं चंचलता हासी।
सम दम सुमरन करै, मोक्ष-पद जुगति उपासी।
यौं हदफ मारि हरि कौं मिल्यौ, जन राघो रटि अनहद गयौ।
परम पुरष प्रहलाद कै, सिष हरीदास सिरोमनि भयौ॥५२८
प्रम-पुरष प्रहलाद कै, इतने सिष सर्ब धर्म-धुर॥
तिन मधि बड़ बांनैत, हेत हापौजी होई।
दीरघ अवर अनंत, बुरौ जिन मानौं कोई।
चरणदास भजनीक, तिलकधारी है केसौ।

हरीदास पुनि पाटि, कीयो हरि घर प्रवेसौ।
कांन्हड़दास कल्यांण, पुनहि परमांनंद घमडी।
रांमदास हरदास, भक्ति भगवत की समडी।
इम राघौ कै रुचि राति दिन, भणै भक्त भगवंत गुर।
इम प्रम-पुरष प्रहलाद कै, इतने सिष ध्रब .धर्म धुर ॥५२६
इम येक टेक हरि नांव की, हापाजी के सिषन कै॥
टीकै ऊधौदास, धर्म धीरज की आगर।
रथि राघो कै रांम, बैठि उन कीयौ उजागर।
दीरघ दिनन कल्यांण, उदैचंद ईस्वर अरजन।
आनंद लाल दयाल, स्यांम गोबिन्द जस गरजन।
तुरसी हैं हरिरांम, पुनह पारबती बाई।
टीकू द्वै भगवांन, सकल ग्यांनि गुर-भाई ॥५३०
कृष्णदास मोहन मगन, अजमेरी ऊधौ रहै।
गगन मगन खेलत फिरै, जथासक्ति हरि हरि कहै।
परमार्थ मै निपुन अति, आये कौं जल अंन दे।
संतन कौ उर भाव बहु, सनमुख जाइ र धांम ले।
ये करणी कृतब भले, ज्यूं राजस बृति रिषन कै।
येक टेक हरि नांव की, हापाजी के सिषन की ॥५३१

भक्तवत्सल कौ उदाहरन

मनहर छंद

रांमजी की रीती अैसी प्रीति सुं खुसी है भया,
करमां की खीचड़ी आरोगनैं को आये हैं।
त्यागे हैं अवास दुरजोधन के जांनि बूझि,
बिदुर गरीब घरि साक पाक पाये हैं।
बिप्र सुदांमां कौ दलिद्र दुख दूरि कीयौ,
कूरी कन देखे प्रभु हेत सौं चबाई हैं।
राघो कहै रांमजी दयाल अैसे दीनन सूं,
भीलन के झूठे बेर आप अैसें खाये हैं ॥५३२
भक्तबछल भगवंत देखौ संत काज,
देहु रोद्र हाल फेरचौ नांमदे की टेर सूं।

कासी मैं कबीर कसि बांधि डारयौ हाथी आगैं,
स्यंव रूप धारि कैं दहारयौ मुटभेर सौं।
भीर मैं भगत्त काज बहुत बिरद लाज,
धूसे कीन्हे अटल बधायौ येक सेर सौं।
प्रगटे प्रहलाद काज खंभ सूं नृस्यंघ रूप,
राघो हत्यौ हिरनांकुस हाथ को थपेर सूं ॥५३३

गरीबनिवाज सूं अवाज कीन्हीं येक बेर,
आये गज काज कौ छुडायौ येक छिन मैं।
द्रोपती की राखी पति अंबर बढायौ अति,
दूसासन दुष्ट खिसांनौं परचौ मन मैं।
कासी मैं कबीर काज बालदि मैं ल्याये नाज,
देखे प्रभु दीनबंधु अैसे पूरे पन मैं।
राघो कहै पंडुन सूं वोर ज्यूं निबाही प्रीति,
राखे केऊ बार करतार राति-दिन मैं ॥५३४

दीनबंधू दीन काज दौरे गज टेर सुनि,
आंनिक छुड़ायौ उन राख्यौ त्रिय ताप सौं।
बीगरचौ बिटप दिज सोऊ गयौ लोक निज,
अजामेल अंतकाल नांव के प्रताप सौं।
सूवा कौं पठावतैं सरीर सुदि भूलि गई,
गनिका बिवांन चढ़ी गढी हरि जाप सौं।
राघो अंबरीस बेर भये हैं द्रुबासा जेर,
कीयौ है अधिक जगदीस जन आप सौं ॥५३५

इंदव छंद
पैज रही परमेश्वर गावत, दादूदयाल की देखौ रे भाई।
काजी नैं कौंस दई खिजि कैं मुखि, स्वांमी न दूखे सजा उन पाई।
सांभरि सात महौछिन कौ दल, सातौं ही ठौर भये सुखदाई।
राघो रक्षा करी राज सभा मधि, पौरि उभै गज लागौ है पाइ ॥५३६

भारत मैं भृति राखि लीये, पंडवां हरि हेत सौं खेत जितायौ।
जन कौ रिपु रांम हत्यौ, हिरनांकुस प्रांन सौं प्रहलाद लगायौ।
टेर सुनी गज की इतनी, अर्ध नांव की लेत ही रांमजी आयौ।
राघो कहै द्रोपती भई दीन सु, कीन्हीं कृपा हरि चीर बढायौ ॥५३७

भोग छतीस कीये दुरजोधन, भाव बिनां भुगते न बिधाता।
येकक भाव इकोतर सै तजे, बिद्र कै कौंन उतारैं है पाता।
साग कै लेतहि भाग उदै भयौ, कृष्ण मिले त्रिये-लोक के दाता।
राघो कहै हरि हेत के गाहक, प्रीति बिनां कुछ[1] नेह न नाता ॥५३८

छपै अधिकार श्रवन सुनि साध कौ, अदभुत कोई न मांनियौ ॥
अहं भक्त आधीन, कह्यौ हरि दुरबासा सौं।
ध्रू प्रहलाद गयंद, सेस सिवरी सरितासौं।
पांडुन के जगि कृष्ण, अंघ्रि सुचि झूठि बुहारी।
चंद्रहास बिष मेटि, राज दे विषया नारी।
परचा कलि महि बिदत बहु, आसतिक बुधि उर आंनियौ।
अधिकार श्रवन सुनि साध कौ, अदभुत कोई न मांनियौ ॥५३९

अरिल छपै दाई आगैं पेट, दुरांयें क्यूं दुरैं।
ज्यूं निजरबाज निसतू, कठ गहि ठांवो करै।
समझै साल सराफ, दरबि खोटो खरौ।
करै राग के भाग, गुनीजन कौ गरौ।
यौं साध सबद कौं पेखि कैं, गुनी बहुतर[2] चाल रहि।
जन राघो यौं हंस ज्यूं, खीरनीर निरनौ करहि ॥५४०
कीयौ ग्रंथ गमि बिनां, सुनौं कबि चतुर बिनांनी।
सरवर कौं सर मांझ, भिरा भरि अरप्यौ पांनी।
सोवन भई सुमेर, ताहि कंचन की किर्ची।
गणपति कौं इक साखि, गिरा दे सरस्वती अरची।
सूरजबासी ससि दसी, कलपबृछ कौं धरि धजा।
स्यंघ खोज सेवत चढ़ी, जन राघो गज मस्तक अजा ॥५४१
अन लह माइ रु हंस, गरुड गोबिंद कौ आसन।
लघु खग और अनेक, उड़हि पंखी आकासन।
सत जोजन हनवंत, कूदि गयौ सबका[3] गावै।
मृग चीता मृगराज छल, और पै फाल न आवै।

---

१. कछ। २. बहुत चरचाल रही। ३. सब को।

टीडा मेंडक भाड भृंग सरकि, सरनि उन पुनि गह्यौ।
त्यूं राघव रचि पचि रसन मम, भोर मिति भृति कृत कह्यौ ॥५४२

इंदव छंद
नौस निवासिन दीब निरंतर, स्यंध सूं सोत मिलेहि रहैं हैं।
जैसव चंद चकोर कमोदनि, अमृत कौ पुट पांन गहै हैं।
कुंज अकास बचे बिचि बारिक, श्रुत्तिक द्वारि सतोष लहै हैं।
राघो कहै गुर की लछि नृमल, निर्पखि रांमहि रांम कहै हैं ॥५४३
पूरण भाग उदै जब होतह, ताहि दिनां सत-संगति भावै।
साध रु बेद कौ भेद सुनें बिन, कोटि करौ हिरदै बुधि नावै।
मुंडत केस जनेउ जटा सिर, ज्ञांन बिनां बिसरांम न पावै।
बैठे तें ब्याधि गछेन कछै[1] कछु, राघौ कहै[2] मन कौन सूं लावै ॥५४४
पूरण भाग बिनां भृति कौ कृत, कौंन लहै गज ज्ञांन मुदा के[3]।
संगति सार बिचार बड़ी निधि, मांट भरे मधि स्वांति सुधा के।
हाथि चढ़ै धन धांम सु धीरज, बीरज बज्र जमैं सुबधा कै।
राघो कहै जस जोग समागम, संत कौं आनंद रूप उदा के ॥५४५

मनहर छंद
बीन कछू जांनें नांहि जानत है बीनकार,
प्रतक्ष बजावत छतीस राग रागणी।
पांख कौ परेवा करै बाजीगर बाजी मधि,
जेवरी सूं जुलम दिखावै नाग नागणी।
दंपति अनेक दाव करत उपाव बहु,
पति जांहि मांनै सोई सदन सुहागणी।
राघो कहै रीसि जिन मांनौं कोई कबिजन,
राम रथ बैठे तब देत बाग बागणी ॥५४६
अक्षर अरथ तुक जांणैं ब्यास सुक मुनि,
मैं का जांणौं ग्रंथ करि मूढमति छोहरा।
आवत है सकुचि बड़ौं सौं बकि दीन्हो धीठ,
दुरै न दुकांन कूर कारीगर लोहरा।
महुर रुपया नग[4] ख्वार टकसार बिन,
लेत परसाइ ताहि साहूकार सोहरा।

१. (जा पन्न ही)। २. (पूरा तन धीर)। ३. (अर्थ)। ४. नम, नरा।

राघो कबि कोबिद महंत संत स्यंधजल,
मेरो उनमांन असौ डांग मधि डोहरा ॥५४७

मम गुर मांथैं परि स्वांमी हरीदासजू है,
प्रम गुर स्वांमी प्रहलाद बड़ी निधि[1] है।
स्वांमी प्रहलादजू कैं गुर बड़े सूरबीर,
नांम स्वांमी सुंदरदास जांणै सारी बिधि[2] है।
तास गुर दादूजी दयाल दिग्गियर सम,
सो तो त्रियलोक मधि प्रगट प्रसिध्य है।
स्वांमी दादूजु के गुर ब्रह्म है विचित्र विग,
राघो रटि राति दिन नातो प्रनती वृध्य है ॥५४८

साखी दुगध गऊ कौ लीन है, अस्त मास तजि चाम।
ज्यौ मराल मोती चुगै, त्याग सीर जल ताम ॥१
जौ अंतिज आभूषन सजै, नख-सिख बार हजार।
तऊ हाटक हटवारे गये, मोल न घटै लगार ॥२
त्यूं प्रसिध्य पंचूं बरण, अन्य न भक्ति उर जास कै।
तिन चरनन की चरणरज, मनि मस्तक राघोदास कै ॥३॥५४९
उर अंतर अनभै नहीं, काबिन पिंगुल-प्रमाण।
मैं चुणि बीण सिलोकीयौ, कबिजन लीज्यौ जांण ॥४
अक्षर जोड़ि जांणौं नहीं, गीत कबित छंद ग्रंन।
सिसु रोटी टोटी कहै, जननी समझै सैंन ॥५
भूल चूकि घटि बढ़ि बचन, मो अनजांनत निकसियौ।
रांम जांणि राघो कहै, संत महंत सब बकसियौ ॥६॥५५१
छंद प्रबंद अक्षर जुरहि, सुनि सुरता देदादि।
उक्ति चोज प्रसताव बिन, बक्ता बकै सु बादि ॥७
बालक बहरौ बावरौ, मूरख बिनां बिबेक।
बार कुबार भलौ बुरौ, इनकै सबही येक ॥८
हूं अजांन यौं कहत हूं, कबिजन काढ़ौ खोरि।
राघव अरजव अरज करै, सबहिन सूं कर जोरि ॥९॥५५१

---

१. निध्य। २. विध्य।

आंनी गिलौ न उच्चरहि, निंदत नहि मुख मोरि।
ततबेता जिनतर कही, निपट तगा ज्यूं तोरि ॥१०
महापुरष मदि तक रहि, तब पलटहि चक्षु दोई।
आतम अनभव ऊपजै, सबद संचौ यौं[1] होइ ॥११
इह जीव जंबूरा बापरौ, करै कौंन सौं टेक।
राघो तउ कबि कहैंगे, तेरी कला न मांनै येक ॥१२॥५५२
माया कौ मद ऊतरै, सुनि साधन की साखि।
कथा कीरतन भजन पन, हित सूं हिरदै राखि ॥१३
अठसिठ तीरथ कोटि जगि, सहंस गऊ दे दांन।
इन सबहिन सूं अधिक है, सत-संगति फल मांन ॥१४
भगवत गीता भागवत, त्रितय सहसर-नांम।
चतुर सतोतर अवर सब, पंचम पूजा धांम ॥१५॥५५३
गाइत्री गुर-मंत्र लखि, अठसठि तीरथ न्हाइये।
भक्तमाल पोथी पढत, इतनौं तत फल पाइये ॥१६
भक्तबछल कृत भक्त कृत, श्रवा कृत अब धर्म कौ गलौ।
राघो करि है रांमजी, श्रोता वक्ता कौ भलौ ॥१७
भक्तबछल बृद रावरौ, बदत बेद च्याऊं बरण।
जन राघो रटि राति-दिन, भक्तमाल कलिमल-हरण ॥१८॥५५४
संबत सत्रह-सै सत्रहौंतरा, सुकल पक्ष सनिबार।
तिथि त्रितीया आषाढ़ की, राघो कीयौ बिचार ॥१९

चौपाई पीपा बंसी चांगल गोत। हरि हिरदै कीन्हौं उद्योत ॥
भक्तमाल कृत कलिमल-हरणी। आदि अंति मधि अनुक्रम बरणीं ॥२०
सीखैं सुणैं तिरैं बैतरणी। चौरासी की होइ निसरणी ॥
साध-संगति सति सुरग निसरणी। राघो अगतिन कौं गति करणीं ॥२१॥५५५

इति श्री राघोदासजी कृत भक्तमाल संपूर्ण ॥ समाप्त

मनहर छंद
अग्र गुर नामा जू कौं आज्ञा दीन्हीं कृपा करि,
प्रथमहि साखि छपै कीन्ही भक्तमाल है।
पीछै प्रहलाद जू बिचार कही राघो जू सूं,
करो संत आवली सु बात यौ रसाल है।

---

१. तव।

लई मांनि करी जांनि धरे आंनि भक्त सब,
नृगुन सगुन षट-द्रसन बिसाल है।
साखि छपै मनहर इंदव अरेल चौपे,
निसांनी सवइया छंद जांनियो हंसाल है॥६३१
प्रथमहि कीन्ही भक्तमाल सु निरांनदास,
परचा सरूप संत नांम गांम गाइया।
सोई देखि सुनि राघोदास आप कृत मधि,
मेल्हिया बिबेक करि साधन सुनाइया।
नृगुन भगत और आंनि यां बसेख यह,
उनहूं का नांव गांव गुन समझाइया।
प्रियादास टीका कीन्ही मनहर छंद करि,
ताहि देखि चत्रदास इंदव बनाइया॥६३२
स्वांमी दादू इष्टदेव जाकौ सर्ब जानैं भेव,
सुंदर बूसर सेव जगत विख्यात है।
तिनके निरांनदास भजन हुलास प्यास,
उनहूं कै रांमदास पंडित साख्यात है।
जिनके जु दयारांम कथा कीरतन नांम,
लेत भये सुखरांम और नहीं बात है।
त्रिष्णा अरु लोभ त्याग लयौ है सतोष भाग,
असे जू संतोष गुर चत्रदास तात है॥६३३
संप्रदाइ पंथ पाइ षट-द्रष्ण जक्त आइ,
भजत गोबिंद राइ मन बच काइये।
जिन मांहै काढ़ि खोरि निंदत है मुख मोरि,
दूषन लगाइ कोरि साचहि झुठाइये।
साध कौं असाध करै अनदेखी बात धरै,
रांम सूं न डरै लरै जोर तैं धिकाइये।
यसे कलिजुगी प्रांनी आइ कहै कटुबांनीं,
पाप की निसांनी प्रभु ताहि न मिलाइये॥६३४

इंदव बुद्धि नहीं उर नां अनभै धुर, पासि न थे गुर दूषन टारैं।
छंद. आइ गई मनि औरन पैं सुनि, संतन कौं भनि होइ उचारैं।

जो तुक छंद र अक्षर मातर, अर्थ मिले बिन साध सुधारै।
चातुरदास करै बिनती नवि, मांनि कबीसुर चूक निवारै ॥६३५
संबत येक रु आठ लिखे सुभै, पांच र सातहि फेरि मिलावै।
भाद्रव की बदि हैं तिथि चौदसि, मंगलवार सु बार सुहावै।
ता दिन पूरन होत भयौ यह, टिप्पण चातुरदास सुनावै।
बांचि बिचारि सुनै रु सुनावत, सो नर-नारि भगत्तिहि पावै ॥६३६

इति श्री भक्तमाल की टीका संपूरण समापत। सुभमस्तु कल्यांणरस्तु॥ लेखकपाठकयो॥ छपै॥ ३३८॥ मनहर ॥१५२॥ हंसाल ॥४॥ साखी ॥३८॥ चौपाई ॥२॥ इंदव ॥७५॥ राघोदासजी कृत संपूर्ण॥ इंदव छंद॥ सर्ब ६२१॥ चतुरदासजी कृत टीका छै सर्ब कबित ॥१२०४॥ ग्रंथ संख्या श्लोक ॥४१०१॥ लिखतं बाबाजी श्री चतुरदासजी तिनका सिष बाबाजी श्री नंदरामजी तिनको सिष गोकलदास बांचै नाकौं रांम रांम।

मनहर छंद

बर्स दस आठा साठा उपरंत्य येक पुनि,
मास बयसाख बदि त्रितिया बखांनियें।
कह्यौ मोर गुरधर बर भक्तमाल बनी,
याकौ भनि सुनि प्रांनी नीर द्रिग आंनियें।
याही तैं बिचारि कैं संभारि सार लीन्हौं धारि,
लिखि डीडवांनैं व्रिधि नीकीं मन मांनियें।
मोरी मति भोरी अति कीजियों जु बुद्ध सुद्ध,
खोट ठोठ लिख्यौ कछू सोऊ अब मांनियें ॥१॥

नोट : प्रति नं० 'B' की पुष्पिका इस प्रकार है —

इति श्री भक्तमाल की टीका सम्पूरण-समाप्त। सुभमस्तु॥ कल्याणरस्तु॥ लेखकपाठकयो॥ छपै-३३८॥ मनहर-१५२॥ हंसाल-४॥ साखी-३८॥ चौपई-२॥ इंदव ७५॥ राघौदासजी कृत संपूर्ण॥ ॥ इंदव छंद ६२१॥ चतुरदासजी कृत टीका का छै। सर्व कवित-१२०४॥ ग्रन्थ संख्या श्लोक-४१०१॥ लिखतं बोलता-राम। बांचै पढ़ै तिनकौं सत राम॥ संवत १८९७ भादवा सुद ८—राम राम राम राम॥ श्री दादू॥

नोट : नं० 'C' की पुष्पिका इस प्रकार है—

इति श्री भक्तमाल की टीका समाप्त-संपूर्ण। सुभमस्तु॥ कल्याणमस्तु॥ लेखकपाठक-यो ब्रह्मभवतु।

आदि गुर ब्रह्म जानि सति चिदानंद मानि, सोउ अब दादुदास प्रगट्यो सिस्ये।
तिन के तो सिषब नवारी हरिदास सिध, छत्रीलदास ताके सिख प्रमद सू लेखिये।
श्यामदास ताके सिष स्वामी ही की ध्यावे दिसि, प्राणदास तिन सिष प्रचे ब्रह्म देखिये।
तिन सिष हरिदास, जग में जिहाज रूप, चरणदास ताके सिष, जोगेसुर पेखिये॥१॥

दोहा॥ छपै छन्द ३३३॥ मनहर १४१॥ हंमाल-४॥ साखी ३८॥ चौपई २॥ इंदव छंद ७५॥ राघौदासजी कृत भक्तमाल सम्पूर्ण॥ ५५३ इंदव छंद चतुरदास कृत टीका का छै ॥६२१॥ सरवस कवित २१८५॥ ग्रन्थ की श्लोक संख्या ४१०१॥ लिखतम् शुभसुथान रीणीनगरे—भानीदास उदय लिपि कृते संवत १८८६-मिति बैसाख सुदी १०॥

परिशिष्ट १

(परिवर्द्धित संस्करण का अतिरिक्त पाठ)

मूल मंगलाचरण

दादू नमो नमो निरजनं, नमस्कार गुरुदेवतः।
वन्दनं सर्व साधवाः प्रणाम पारंगत ॥

पृष्ठ २ पद्यांक ६ के बाद —

कवित्त

नमो नमो गुरुदेव, नमो कर्ता अविनासी।
अनन्त कोटि हरिभक्त, नमो दशनाम सन्यासी ॥
नमो जैन जोगेश, नमो जंगम सुखराशी।
नमो बोध दरवेस, नमो नवनाथ सिद्ध चौरासी ॥
नमो पीर पैगम्बरा, ब्रह्मा विष्णु महेश।
धरनि गगन पाणी पवन, चन्द सूर आदेश ॥
नर-नारी सुर नर असुर, नमो चतुर-लष जीवकों।
जन राघौ सब को नमो, जे सुमरे नित पीव कूं ॥१०

पृष्ठ १४ पद्यांक २६ के बाद—

इदव छंद

द्विज एक अजामिल अन्त समै, जमकै जमदूतनि आन गह्यो।
भयभीत महा अति आतुर ह्वै, सुत हेत नरायन नाम लह्यो।
जब सन्तनि आय सहाय करी, गहि बेत सों दूत को देह दह्यो।
'माधौदास' कहै प्रभु पूरण है, हरि के सुमरे अघ नाहिं रह्यो ॥६३
जमदूत भजे जमलोक गये, जमराय सों जाय पुकार करी।
जहां अंग के भंग दिखाय दियो, तहां त्रास की पास उतार धरी।
करता हम और न जानत हैं, हम पै अब होत न एक घरी।
'माधोदास' कहै अघ मेटत हैं, सोई दीन अधीर न सन्त हरी ॥६४
जमराय कहै जमदूतन सों, तुम बात भली सुनल्यो अब ही।
जहां भगत के भेष की बात सुनो, वह मारग जाहु मतै कब ही।
हरि के जन सों कोई कोप करे, हरि देत सजा ताकों जब ही।
'माधोदास' की आस विश्वास यह, हरिराय की टेक सदा निबही ॥६५

जमदूत कहै जमरायन सों, तुम्ह काहे को बीच करावत हांसी ?
इततें पठवों उत वे न गिनें, हरिजन बीचहि मारि भगासी।
पशु मानुष पंखि की कौन चलै, तहां कीट पतंग सबै जु मैं वासी।
'माधोदास' नरायन नाम प्रताप सों, पाप जरै जैसे फूस की राशी ॥६६
डरै धर्मराय उठे अकुलाय, रहे जु खिसाई इक बात चलाई।
नाम उचार भयो तिहिं वार, सहि सिर मारग एक न धाई।
सुनहु जमदूत कु जान कुपूत, भई भल सूत बचे हम भाई।
जहां काल प्रचण्ड को डण्ड मिट्यो, हमरी तुमरी किन बात चलाई ॥६७

पृष्ठ ३० पद्यांक ६५ के बाद—

अन्य मत

मनहर छंद

भयो हूं पिशाच तेरी कूंखि अवतार लियो,
मेरे जाने निपटि पिशाचनी तूं कैकयी।
हंस हति कुमति तें बांधि धरे वायस कों,
अमृत लुटाय के जु वेलि विष की बई।
कमल से कोमल चरण रघुवीरजी के,
कैसे वन जैहैं कुश-कण्टक मही छई।
मैं तो मरिजेहूं मोसौं कैसे दुःख सह्यो जात,
होणहार हुई और कहा होयगी दई ॥१४८

पृष्ठ ८२ पद्यांक १८६ के बाद—

परसजो का वर्णन : मूल

छप्पय

मरुधर कलरू गांव परस जहां प्रभु को प्यारो।
सतवादी सूतार कर्म कलिजुग तें न्यारो।
ता बदलै तन धारि राम रथ-चक्र सुधार्यो।
इकलग पूठी एक बिना शल तबै विचार्यो।
परस गयो जहां भूपति, चित चक्रत चरनौं नयो।
'राघौ' समथ्र रामजी, भक्ति करत यों वश भयो ॥४१२

पृष्ठ ८८ पद्यांक २२२ के बाद—

भूपति मन्दिर लाय लगी, अति लाट जु अम्बर लाय लगी है।
नांहि बुझै सु उपाय करे बहु, हाय खुदा किम चूकि परी है।

बीब रु लौंड पुकारत आतुर आत दया हिय पाहरण ही है।
राघवदास अनाथ यूं दाकृत साध दुखावन को फल ली है ।।४४४

पृष्ठ ६३, मूल पद्यांक २०४ के बाद—

दीन ह्वै राम रहे जन के गृह, प्रीति तिलोचन की मन भाई।
वात अज्ञात लखै मन की, ग्रह को सब काज करै सुखदाई।
एक समै कहुं दासिक दूखन, पीस पोवन की मन आई।
'राघौ' कहै निज रूप निरन्तर, ह्वै गये सेवक कों समझाई ।।४७७

पृष्ठ १३७, टीका पद्यांक ४१६ के बाद—

मनहर छन्द

शंकर के शिष्य चारि जातैं दस-नाम यह,
स्वरूपाचारज के द्वै तीरथ रु आरनैं।
पदमाचारज के जु दोय शिष शूरवीर,
आश्रम रु वन नाम ज्ञानी गुन जार नैं।
त्रोटकाचारज के सु तीन शिष्य भक्त-ज्ञानी
प्रवत सागर गिरी तुरू सेय वार नैं।
पृथीधराचारज के राघौ कहै तीन शिष्य,
सरस्वती, भारती, पुरी दश-नाम वारनैं ।।७१६

पृष्ठ १४०, पद्यांक २८१ के बाद—

टीका

इंदव छंद

मांग हुती सुत की नृप व्याहत, रूपवती अति बुद्धि चलाई।
खेलत गैंद गई दुरि ता घर, दौरि गयो तिस लेनहि जाई।
देखत रूप अनूप महा अति, बांह गही संग मोहि कराई।
हाथहि जोरि कहै मुख सूकत, बात अजोगि कहो जिन भाई ।।७३०
त्रास दिखावत मारि डरावत, एक न भावत शील गह्यौ है।
जोर करयो निकस्यो झट छूटिक, चालत दाव न फारि लह्यो है।
रूसि रही नृप आवत बूझत, कैत भई सुत भोग चह्यो है।
क्रोध भयो नृप हो तिय को, जित न्याव न बूझत मूढ बह्यो है ।।७३१
नीच बुलाय लयै कर पांव हि, काटि कुवा मंहि डारि सु आऐ।
राम भजे करुणा हि करे, गुरु गोरख आय रु बोल सुनाऐ।

सांच कहों सत नांहि गयो तुम, पारख ले नहि तार भुलाये।
छींवत तार भये कर पाद हु, शिष्य करयो हरि के गुण गाये ।।७३२

चौपाई तत सूं लगे उभै संग रहियै। अन्तर कथा चली सो कहिये ।।
नृपति शालवाहन की नारी। महाकपटनी अति धूतारी ।।१
सुन्दर सुत सोतिकी जायो। रूप देखि तासों मन लायो ।।
अतिहि बन्यू सु अम्बुज-नैंना। महासन्त मुख अमृत बैना ।।२
हित करि लीयो निकट बुलाई। मन मांही उपजी सो बुराई ।।
लज्जा छोडि करो परसंगू। सनमुख ह्वै कै देखो अंगू ।।३
कियो श्रृंगार न वरन्यो जाई। मन हु इन्द्रकी रम्भा आई ।।
मृगनयनी सो विगसी बोले। महा अडिग मन कबहूं न डोले ।।४
कर पकरयो सुन विनती मेरी। ह्वै हूं सदा तुम्हारी चेरी ।।
कह्यो करहि तौ सूं यौं राजू। सरवस दे सारूं सब काजू ।।५
कर मुक्ती कर कह्यो सुनाई। तुम तो लगो धर्म की हमारी माई ।।
ऐसी कथा का लेहु न नाऊं। नहिं तो प्राण त्यागि मर जाहूं ।।६
काको पूत कौन की माई। दुख दे हूं तोहि कही सुनाई ।।
कियो नहिं सु कह्यो हमारो। अबै कौन तोहि राखनहारो ।।७
कह्यौ शहर सों द्यों नृप घेरी। काढों नगर ढंढोरा फेरी ।।
अब आई है बेर हमारी। कछु न राखों मानि तुम्हारी ।।८
कर सूं कर लियो मरोरी। करी कहां है तैं कछु थोरी ।।
होहि चोरंग्यो प्रगट ऐंन। दूरि करों भुज देखत नैंन ।।९
तजे अभूषन वस्त्र फारी। गई सु पति पै शीश उघारी ।।
कह्यौ मात मत आवे नेरो। तो उन छोड्यो मेरो केरो ।।१०
मेरी पति सों नेक न राखी। देखि शरीर सु प्रगट साखी ।।
अब हूं प्राण त्यागि मर जाऊं। कहा जगत में मुख दिखाऊं ।।११
देखि गात कामिनी को नैन। पश्चाताप उपज्यो मन ऐंन ।।
दहुं दांत विच अंगुरी दीन्ही। कैसी पुत्र कमाई कीन्ही ।।१२
तब कीनी मौज संतोषो नारी। दे सिरोपाव भरतार सिंगारी ।।
तुमको दुष्ट बहुत दुख दीयो। पावेगो सो अपनों कीयो ।।१३
पुत्र नहीं पर बैरी मेरो। अब कोई ल्यावे मत नेरो ।।
कीज्यो दूर हाथ पग जाई। जो हमकों मुख न दिखावै आई ।।१४

हृदो कियो सुबज्र समानो। उर अन्तर नहिं उपज्यो ज्ञानूं ॥
नीति अनीति कीयो नहिं खेदू। निरणै करि बूझ्यो नहिं भेदू ॥१५
काटि चरन करि नाख्यो कूपू। महाप्रवीन सु अजब अनूपू ॥
तहां मछिन्द्र गोरख आये। दरद देखि अरु अति दुख पाये ॥१६
करुणा करै भये कृपालू। बूझै पीर सु प्रेम दयालू ॥
कौन चूक सासना दीनी। सो तो हम पै जाय न चीन्ही ॥१७
माई दियो मिथ्या दोषू। राजा अति मान्यो मन रोषू ॥
सोति सुत अति भई सु क्रूरी। किये पिता हाथ पग दूरी ॥१८
बसै सुनि धू गांइ किहि बासू। अपने पिता को नाम प्रकासू ॥
बसै सहीपुर मांडल गाऊं। नृपति शालिवाहन है नाऊं ॥१६
नां हमसों कोई भई बुराई। कर्म-संजोग न मेट्यो जाई ॥
लिख्यो विधाता त्यूंही होई। कोटि कियां हूं मिटै न सोई ॥२०
अब मोहि राखो निकट हजूरी। चरन-कमल सूं करो न दूरी ॥
भाग बड़े थे भेटे आई। तुम बिन दुती न और सुहाई ॥२१

दोहा भाग बड़े थे पाइये, निरमल साधू सन्त।
आनि मिलाप गैव मैं, कृपा करी भगवन्त ॥२२
आये सद्गति करन कों, निन्यानवे कोटि नरेश।
भूपन का छन भवन सों, दे दे गुरु उपदेश ॥२३

चौपाई तब अमृत फल करसों अर्प्यो। चौरंगी अपनों कर थर्प्यो ॥
दियो मुदित ह्वै सिर पर हाथू। होहु सहायक गोरखनाथू ॥२४
गुरू मच्छन्दर सिष चौरंगू। उपजी अनभै भक्ति अभंगू ॥
आरती बड़ी सु आत्म मांही। भगवन्त नाम विसारै नांहीं ॥२५
इहां रहो तुम द्वादस वर्षू। सुमरि सनेही मन करि हर्षू ॥
रमे मछिन्द्र दे प्रमोधू। गोरख रहे सिखावन बोधू ॥२६

टीका

इंदव छन्द द्वादश वर्ष हि नेम लियो गुरु, गांव सु पट्टण पाउ[1] रहाई।
ग्राम गयो सिष भीष न पावत, एक कुम्हारि उपाय बताई।

---

१. पहाड़।

मों सुत साथिहिं इन्धन ल्याकर, पीसन पोवन की मम आई ।
आवत शिष्य जु पाव नहीं घर, बूझि गये गुरु भीष न पाई ।।७३४

अथ धुंधलीमल की शब्दी लिख्यते

'आयस जी आवो' ।। १ ।।
बाबा आवत जावत बहुत जग दीठा, कछु न चढ़िया हाथम् ।
अब का आवण सुफल फलिया, पाया निरंजन-नाथम् ।।१
'आयस जी जावो' ।। २ ।।
बाबा जे जाया ते जाइ रहेगा, तामें कैसा संसा ।
विछुरत बेला मरण दुहेला, ना जाणों कत हंसा ।।२
'आयस जी बैठो' ।। ३ ।।
बाबा बैठा उठी, ऊठा बैठी, बैठि उठि जग दीठा ।
घर-घर रावल भिक्षा मांगै, एक महा अमीरस मीठा ।।३
'आयस जी ऊभा' ।। ४ ।।
बाबा जे ऊभा ते इक टग ऊभा, शम्भु समाधि लगाई ।
ऊभा रहा हीं कौण फायदा, जे मन भरमैं जग मांही ।।४
'आयस जी आडा पडो' ।। ५ ।।
बाबा जे आडा ते गहि गुण गाढ़ा, नो दरवाजा ताली ।
जोग जुगति करि सनमुख लागा, पंच पचीसों बाली ।।५
'आयस जी सोवो' ।। ६ ।।
बाबा जे सूता ते खरा विगूता, जनम गया अरु हारचो ।
काया हिरणी काल अहेड़ी, हम देखत जग मारचो ।।६
'आयस जी जागो' ।। ७ ।।
बाबा जे जाग्या ते जुग-जुग जाग्या, कह्या सुन्या है कैसा ।
गगन मण्डल में ताली लागी, जोग पंथ है ऐसा ।।७
'आयस जी मरो' ।। ८ ।।
बाबा हम भी मरणां तुम भी मरणां, मरणा सब संसारम् ।
सुर नर गण गन्धर्व भी मरणां, कोई विरला उतरे पारम् ।।८
'आयस जी जीवो' ।। ९ ।।
बाबा जे जीया ते मित ही जीया, मारचा ते सब मूवा ।
जोग-जुगति करि पवना साध्या, सो अजरामर हुवा ।।९

'आयस जो ठगो' ॥१०॥
बाबा जे ठगिया ते तो मन बैठि गया, अरु ठगिया जम कालम् ।
हम तो जोगी निरन्तर रहिया, तजिया माया-जालम् ॥१०
'आयस जी फेरी द्यौ' ॥११॥
बाबा जे फेरे तो मन कों फेरे, दस दरवाजा घेरे ।
अरध उरध बीच ताली लावे, तो अठ-सिद्ध नो-निधि मेरे ॥११
'आयस जी धन्धै लागौ' ॥१२॥
बाबा गोरख धन्धै अहनिस इक मनि, जोग जुगति सों जागै ।
काल व्याल का मैं हम देख्या, नाथ निरंजन लागे ॥१२
'आयस जी देखो' ॥१३॥
बाबा इहां भी दीठा उहां भी दीठा, दीठा सकल संसारम् ।
उलट पलटि निज तत चीन्हिवा, मन सूं करिवा विचारम् ॥१३
जैसा करै सु पावै तैसा, रोष न काई करणां ।
सिद्ध शब्द को बूझे नांहीं, तो विण ही खूटी मरणां ॥१४

इंदव छंद
जाय जहां सब दुष्ट ही देखत, खेचर तें सबदी हु करी है ।
आय कही सिष सों तब सेवक, होय सु बाहरि जाय धरी है ।
कोप भये गुरु पत्तर लेकर, पट्टण पट्टण मार करी है ।
सन्त अनादर को फल देखहु, दण्ड दिये परजा सु डरी है ॥७३५

पृष्ठ १४२ पद्यांक २८८ के बाद—

(यह पद्य पृष्ठ २५ पद्यांक ४७ में आ गया है)

अथ बोध-दर्शन

छप्पय छंद
भृगु मरीच वाशिष्ठ पुल्हस्त पुल्ह क्रतु अंगिरा ।
अगस्त चिवन सौनक्क सहंस अग्रासी सगरा ।
गौतम गृग सौभ्री करिचक सृङ्गी जु समिक गुरु ।
वुगदालमि जमदग्न जवल पर्वत पारासुर ।
विश्वामित्र मांडीफ कन्व वामदेव सुक व्यास पखि ।
दुर्वासा अत्रेय अस्त देवल राघव ऐते ब्रह्म-रिष ॥७४२

इति बोधदर्शन समाप्त ॥

पृष्ठ १४२ पद्यांक २८९ के बाद—

अथ जैन-दर्शन वर्णन

चौवीस तिथंकर बीनहुं जन राघौ मन वच कर्म ।।
ऋषभ अजित अरु पदम चंद्र संभव सुबुद्धि मन।
अभिनन्दन निम नेम सुमति शीतल श्रीहांसि गन।
वासुपूज्य पारस्स अनन्तजी विमल धर्म धर।
संत कुंथ अरिहंत सुमलजी मुनि सुव्रत धर।
पारसनाथ मुनिहि प्रसिद्ध, जगवीर वर्धमान सुधर्म धर।
चौवीस तिथंकर बीनहुं, जन राघौ मन वच कर्म ।।७४४

अन्य मत

पहुपदन्त प्रभु चन्द चन्द समि सेत विराजै।
पारसनाथ सुपासैं हरित पन्नामय छाजै।
वासुपुज्ज अरु पदम रक्त माणिक दुति सोहै।
मुनिव्रत अरु नेम श्याम, सुरनर मन मोहै।
बाका सोलह कंचन वरन, यह व्यवहार शरीर-दुति।
निहचै अरूप चेतन विमल, दरश ज्ञान चारित्र जुति ।।७४५

॥ इति जैन-दर्शन समाप्त ॥

अथ जीवन दर्शन वर्णन :

मूल

छप्पय अनलहक मनसूर राबिया, हेतम शेष फरीद सुलतान।
छन्द दास कबीर कमाल कमधुज, देखो साधना सेऊ समन।
ए षट् गुण जित गलतान, विज्जुलीखां वाजीन्द बिहावदी कादन।
महमूद संत भनि जन जमुला उसमान,अवलिय पीरौं दास गरीब गन।
इन पंच पचीसों वश किए, हरि पिण्ड ब्रह्मण्ड विचि उरक की।
जन राघौ रामहिं मिले, हद तजि हिन्दू तुरक की ।।७४६

फरीदजी का वर्णन

मनहर माई कीन्ही परख ब्रती न हु छतीस वर्ष,
छंद पीरका मुरीद कीन्हा फेरि कै फरीद को।
बारह वरष खाये पात दरखत जानै गात,
कौन मानें बात खुदाई खरीद को।

काठ की रोटी बनाय पेट सों बांधी चढाय,
क्यूं कही बढाय बात पूछिए सरीद कों।
राघौ कहै तीसरे तरूर तप तेग भयो,
आय के खुदाय दयो मौज दे मुरीद कों ।।७४६

सुलतानां का वर्णन

अजब है मजब गजब सों तरक दई,
शाह सुल्तान गलतान गल गूदरी।
आसफ अटारे लखि बुलक बुखारै देश,
त्यागे हाथी हसम सहस्र सोला सुन्दरी।
मादर बिरादर वलक खेस ख्वाहि खेल,
खेलत खालिक दर छडि रहे बूदरी।
राघौ कहै कदम करीम के करार दिल,
शाहि रू खुदाई मिले माबूद माबूदरी ।।७४८

हेसमशाह वर्णन

छप्पय छंद

दुश्मन करे दरेग, तेग हेतम सों हारचो।
इक गजा करत दरवेस, शाह तजि सर्म पुकारचो।
दुखतर करौं कबूल, सकल चाकर घर खंगो।
दरबड़ चाहु दिवान, जाय हेतम सिर मंगो।
जिन्दै किया पयान, खाए कुछ खरच मंगाया।
कुछ दिन लागे बीच, नगर हेतम के आया।
जन राघौ मिले अवाज करि, देहु सिर नियत खुदाई।
मैं आया तकि तोहि, सकस ने शरम गहाई ।।७४९
यों हेतम बूझी माय, फक्कर मेरो शिर मंगै।
पिसर नियत खुदाय, देहु दिल करो न तंगै।
मादर की दिल खूब रहै, खालिक सों नेरी।
रे तुम जाहु फकर के, साथि सुनों सुत वातां मेरी।
सुत चले कुनन्द करि, माय पायन गो सिर खुले।
तब दुशमन देखि रहफ गये, अवगुन सब भूले।
सकल हसम घर राज तन, दुखतर दे पांऊं परचो।
जन राघौ हेतमशाह का, यों अलह शीष कायम करचो ।।७५०

मनसूर का वर्णन

मनसूर अलह की बन्दगी, अनल-हक्क कहि यों मिले ॥
अनल-हक्क अनल-हक्क, कहै मनसूर जु प्यारो।
काजी मुल्ला सबै कहै, मिलि गरदन मारो।
डरपे नहिं हुशियार, आप दिल साहिब भायो।
जारि बारि तन भस्म, उदधि के मांहि बहायो।
राघौ कंचन ताइकै, हक्क हकी कतियों मिले।
मनसूर अलह की बन्दगी, अनल-हक्क कहि यों मिले ॥७५१

वाजोन्द ख्वाज को वर्णन

ख्वाज वाजोन्द दरि मजल की, ख्वाही राह ठाही करी ॥
मृतक बैठो ऊंट, देखि तिहिं अति डर लाग्यो।
बिना वन्दगी बाद, स्वाद सब तजि करि भागो।
सुन ही वनके मांहि, काटि तिहिं नीर पिलायो।
करी वन्दगी सार बेचि नहिं, निमिक खिलायो।
राघौ खुदी जुलम तजि, साहब मिले तबकरी ॥
ख्वाज वाजोन्द दर मजलकी, ख्वाही राह ठाही करी ॥७५२

साखी

बन्दा शाह खुदायका, बैठा जीतल जीति।
माल मुलक राघौ कहै, अरपि अलह को प्रीति ॥१
कुल ही जामां बेच के, ताम बुखोर महकु।
राघौ उन मन अरसमें, अवलि मजिल परिपकु ॥२
इक दमरी के साग कों, हजरत कही हुशियार।
सवा भए राघौ कहै, बकसि त्रूह करतार ॥३
मल मालिक त्रियलोक में, शोभित सरवरदीन।
राघौ जग जीतै न कों, दृष्टि परत ह्वै हीन ॥४
तब पैज बदी पतिशाह ने, जो जंग जीते याहि।
शहर सहित राघौ कहै, दुखतर ब्याहूं ताहि ॥५
यों राघौ आयो शेख के, भेष गदाई धारि।
बरा खुदाई काम है, तूं मुझ आगे हारि ॥६
राघौ सरवरदीन धनि, सुनि कीन्ही इकतार।
मैदा मिश्री घी गिरी, ताम बुषोरम यार ॥७

यों परमारथ के कारणै, जन राघौ हारचो सूर।
साहिब सरवरदीन विचि, पड़दा ह्वै गये दूर ॥८
एक विपिन द्वै सिद्ध निपुन, साधक करी तरक्क।
अरस-परस शोभा सरस, राघौ दुवै गरक्क ॥९
मुसलमान मुरतजाअली, करी भली इक रोस।
जन राघौ काज रहीम कै, पुरई परकी हौंस ॥१०

छपै छन्द
राघौ सन्त जु ऊतरे, सेउसमन घरि आयके ॥
पिता पुत्र पुनि मात, आहि अति पण के गाढे।
घर मे कछू नहिं अन्न, सोच सब दिन मन वाढे।
चोरी गए समन, फोरि घर अन पकरायो।
वणिक पुत्र सुत गह्यो, काटि मस्तक लै आयौ।
धड़ सूली मस्तक फिरचो, परसाद कियो जन भायके।
राघौ सन्त जु ऊतरै, सेउसमन घरि आयके ॥७५३

काजी महमद वर्णन

करुणां विरह विलाप करि, काजी महमद पिव मिले ॥
आठ पहर गलितान, छक्यो रस प्रेम सुं मातो।
टोडी आशा राग, प्रीति सों हरि गुन गातो।
पुत्री को सुत मृतक देखि, मन दया जु आई।
सुता कियो मन सोच, मृतक सों लियो जिवाई।
राघौ कुल-मरजाद तजि, काम क्रोध सब गुण गिले।
करुणा विरह विलाप करि, काजी महमूद पिव मिले ॥७५४

नमस्कार

द्वादश पंथ जोगी नमो, नमो दशनाम दिगम्बर।
नमो शेष सोफी जु नमो जैनी सेतम्बर।
नमो बोध शिव शक्ति, नमो द्विज निगम उपासी।
नमो महन्त विरकत, नमो वैकुण्ठा-वासी।
विष्णु वैसनों वेद गुरु, तारक तीनों लोक के।
ये षट्-दरशन पुजि खलक में, जन राघो हंता शोक के ॥७५५

इति श्री जीवन दरशन समाप्त ॥

छप्पय ए हद तजि हिन्दू तुरक की, साहिब सों रहे सरख-रू[1]॥

छन्द जांभा जग मध न्हांन, विष्णु व्यापक जप सीधो।
सिद्ध भयो जसनाथ, भेष भगवां धरि लीधो।
उद्धवदास उदास स, सति सों राम बतायो।
लाल चाल जंजाल तज्यो, पिवहि कों पायो।
राघौ रजमों धारि के, नर-नारी सब पर खरू।
ए हद तजि हिन्दू तुरक की, साहिब सों रहे सरख-रू ॥७५६

इति षट्-दरशन मध्ये भक्त वर्णन समाप्त ॥

पृष्ठ १५८ पद्यांक ४६२ के बाद—

नृप चोर वंकचूल वर्णन

(साखी) चारि मास चुपके रहे, नीच नगर मधि सन्त।
राघौ यों सिध समझ करि, काल बचायो अन्त ॥१
पुर मधि पूरे सन्त जन, पावस कीयो वदीत।
राघौ पुनि ज्ञानी गछे, चित स्वाधीन अतीत ॥२
पुरवासी गोहन लगे, पहुंचावन को पंच।
राघौ साधन सुख दियो, उपदेश्यो धर्म संच ॥३
फहम विना फूल तोरिके, भरि लै आयो गोद।
राघौ पुनि प्रगट भयै, एक वचन परमोद ॥४
कवर जियो सन्यास-हित, साथ सबद उर धारि।
राघौ पुनि नगरी रही, वची वहनी अरू नारि ॥५

जसू कुठारा का वर्णन

नर-नारी मन जिन जिते, ते नाहिं न माया वसू।
राघौ त्यागी लष म्होर, लकरी वीन तज्यो जसू ॥६
भूप रूप भगवन्त को, आयो ताके पास।
झिलमिलाट करती म्होर, राघो देखी रास ॥७
नीति विचार निपट कर, राघौ नृप नें मूलि।
नृप अतीत मै को पड्यो, द्रव्य छुवै नहिं भूलि ॥८
नृप भूषो प्रजा डण्डे, तऊ न या सम भार।
राघौ उच्छिष्ट के लिये, वृक-तन ह्वै भण्डार ॥९

---

१. सुर्खरुह।

जदपि अजाची जाचई, तो शुभ भिक्षा लीन्ह।
राघौ अब हित ना गहै, सो अतीत परवीन ॥१०
जन राघौ राजा कियो, विन पर इती विचार।
जे कोई दुर्बल मिलै, ताहि करूं उपकार ॥११
मनकों चाराक दे चल्यो, नृप विवेक को पुंज।
राघो गुरू ज्ञानी मिले, जहां सघन वन-कुंज ॥१२
देख्यो लकरी वीनतो, दुर्वल उभानैं पाव।
जन राघौ नृपनैं कही, महोर बताऊं आव ॥१३
जन राघौ नृपनें कही, मोहर जिसीं मल खात।
वर्ष बारह देषत भई, कहूं न चलाई बात ॥१४
राघौ नृप विनती करी, स्वामी में शिष तोर।
पूरे गुरु बिन उर-विथा, मिटे न तिमिर अघोर ॥१५
कही जसू तूं द्रव्य सौं, बन्ध्यो द्रव्य वित-पूर।
हूं कमीरा तूं नृपति नर, भिन कर भजि है दूर ॥१६
नृपति कही भाजों नहीं, मैं राखौं गुरु भाव।
जन राघौ दण्डव्रत कियो, मस्तक धारो पाव ॥१७
राघौ करि है लोक-लज, कही जसू नृप डाटि।
हूं निकसोंगो मींड लै, तूं बैठेगो पाटि ॥ ८
नृपति कही चूकों नहीं, धर्म खडग की धार।
राघौ देखि रु दौरि हूं, लेहूं सिर ते भार ॥१९
धन्नि सिष्य वह धन्नि गुरु, निह-स्वारथ निर्दोष।
सहर सहित राघौ कहै, भये भजन करि मोष ॥२०

पृ० १६५, मूल पद्यांक ३१६ के बाद—

रामदास वर्णन

इंदव छंद
आप गऐ बनिजी अनि गांवहि मोट धरें सिर बोझ सु भारी।
दास दुखी लखि मोट लई हरि जानि गऐ मन मांहि विचारी।
होय कढी फुलका जलता तहु जाय कही घरि मोट उतारी।
आय रु देखत सो पछितावत रामहि थे सुनि मूरख नारी ॥८८२

पृ० १७६, प० ३४६ के बाद--

छप्पय छंद
मजैलि मारफत मोज मरद मक्कै कों आया।
जिकर करत गय जाम परे टुक पैर हलाये।
रिवजे मजा वर कैफ कौन यह परचा चिकारा।
डारो बाहर खैंच अलह दिस पाव पसारा।
कही मवक्कल यह देह दिल मालिक अख्यो।
खैंचन लागै जबै भई अजमत्ति अरथ को।
जन राघौ सुलतान दिस फिरचो दश हूं दिश मकों ॥९४१

पृष्ठ १७९ प० ३५९ के बाद.

दादू दिल दरियाव, हंस हरिजन तहाँ भूलै।
गगन मगन गलितान, राम रसनां नहिं भूले।
उपजे महन्त मराल, मुक्ति मुक्ताहल भोगी।
रहत भजन बलशील, विष लगि होंहिं न रोगी।
मन माला गुरू तिलक तत, रटणि राम प्रतिपाल की।
जन राघौ छाप छिपे नहीं, दादू दीनदयाल की ॥९५४

पृष्ठ १८० प० ३६० के बाद—

दादू दीनदयाल सो, धनि जननी एक जन्यो॥
भक्ति भूमि दे दान, नाम नोवत्ति बजाई।
चारी वर्णं कुल धर्म, सबन कों भक्ति दिढ़ाई।
हरि बिन आन जु धर्म, तास के नाहिं उपासी।
पूरण ब्रह्म अखण्ड, तहाँ की करत खवासी।
हद छाड़ि वेहद गयो, जग तार्यों, नाहिं न तण्यू।
दादू दीनदयाल सोध, निज जननी एको जन्यो ॥९५६
वह चवदह रतन प्रगटे उदधि म, दादू दयाल प्रगट भयो॥
महा पुत्र की चाह, विप्र न्हावै जल मांही।
डाबक-डूबा होय, तिरता आंए ता मांही।
ऋषि रु लिये उठाय, चिन्ह अद्भुत से दरसे।
कर्त्ता पुत्र यह दियो, कहा हमरो को करते।
कोटानकोटि जीव तिरहिंगे, परा शब्द राघौ कह्यौ।
वह चौदह रतन प्रगटे उदधि म, दादू दयाल प्रगट भयो ॥९५७

गुजरात घटा उत्पन्नि, न्याती नगर जानी।
लोदीराम सु तात, लछि जाके बहुवानी।
वर्ष बीते दश एक, आप हरि दर्शन दीन्हों।
कर सों कर जब गह्यो, लाय अपने अंग लीन्हों।
जन राघौ सुर-नर-दुर्लभ, सो प्रसाद मुख सों दियो।
जग जहाज परमहंस, एक दादू दयाल प्रगट भयो ।।६५८

पृष्ठ १८३ प० ५५७ के बाद—

टीका

इंदव छंद
सीकरी शाह अकब्बर ने सुनि दादू अवलज फकीर खुदाई।
भगवन्त बुलाय लये इक साव तूं ल्याव दरव्वड बेरिन लाई।
नृप करी तसल्लीम ततक्षन सूजे को भेज दिया तब भाई।
राघौ गयो दिन राति प्रभाति यों दादू दयाल को आन सुनाई ।।६७०
दादू दयाल चले सुनि के उनके सतिरामजी एक सहाई।
सिष सातक संगि लिये सब ही दिन सात में साध पहुँचे जाई।
अवल्लि फजल्लि उभै द्विज देखित खोजत बूझन ले गय आई।
राघौ कहे धनि दादू अकब्बर साखी कबीर की भाखि सुनाई ।।६७१
आदि रु अन्त उत्पत्ति की सब बूझी अकब्बर दादू कों भाई।
तुम इलम गैब अतीत मौक्कलि मौल न अर्गति कैस उपाई।
दादू कही करतार करीम के एक शबद में ह्वै सब जाई।
राघौ रजा दिल मालिक की भई सोर हकीकति हाल सुनाई ।।६७२

छप्पय छंद
इम कही अकब्बर शाह देहु दादू को डेरा।
तब विप्र विद्यापति कहि सुनो हजरति मन मेरा।
इनको मैं ले जाहुँ करों खिजमति सो इलहणां।
तब शाह खुशी ह्वे कहो मजब सुनि हमसों कहना।
बहुत खूब हजरात जिवै गुदराऊँगा आनिकैं।
जन राघौ तव रात दिन अति खोजे इन आनि कै ।।६७३
द्विज अपने डेरे जाय जावना कीन्हों भारी।
नृप विवेक को पुंज बात अति भली विचारी।
सब विधि बहुत विछाहना पादारघ परणाघ करि।
अचवन कों कोरे कलश तुरत मगाये नीर भरि।

भक्ष भोजन अति भाव सों महल दिखाये निज नये।
जन राघौ नृपसों निपट विरक्त वचन स्वामी कहे ॥९७४

बह्मदास ब्रह्म-ज्ञान को भिन्न-भिन्न पूछ्यो भेद।
दादूजी इस देह में कहत है चारों वेद।
तब निर्वाण-पद आपणों, स्वामी उचरै बैन।
जिन सेती द्रव्य-दृष्टि ह्वै, सो गुण निरखों नैन।
गुरु लक्ष बिन उर वज्र, ब्रह्मा जड़े कपाट।
जन राघौ स्वामी कही, विकट ब्रह्म की वाट ॥९७५

इत अनभै को पुञ्ज, अतहि कवि चतुर विनाणी।
ज्ञान घटा घररांहि, दुहंघां द्वन्द्व बाणी।
इत आगम उत निगम, कहां लग वरणों गाथा।
तब स्वामी दादू हँसे, बीरबल नायो माथा।
चरचा दिन चालीस लों, अष्ट पहर नितप्रति नई।
जन राघौ नृप की नसां, मन वच कर्म करि कै भई ॥९७६

यों गयो अकब्बर पासि, बीरबल बुद्धि को आगर।
हजरति मैं हैरान, साध दादू सुख-सागर।
मजब बहुत बसियार, ज्ञानमुक्ति कहत न आवै।
तब कही अकब्बर एक वेर मुझि क्यों न मिलावै।
दरवड़ जहाँ ले आव, अब तलब बहुत दीदार की।
जन राघौ धनि रामजी, यों चोट चुकावै धारकी ॥९७७

मनहर छंद

नूर हो के तखत रु पाए जाके नूर ही के,
नूर ही के दादू दास नूर मन भाव ही।
नूर ही के गुनीजन गावत गुणानुवाद,
नूर ही को सभा करजोर शीश नावई।
धरनी आकाश नाहीं देखे सो अधर माँही,
नूर को दिदार कियो पाप-ताप जावही।
राघौ कहै ताकी छवि मानो उदय कोटि रवि,
तरबत की महिमां कछु कहत न आव ही ॥९७८

छप्पय इम देखि तख़्त पुनि नूर को, शाह अकब्बर को संसो मिट्यो ॥
छंद खड़ो करत अरदासि पार किनहुँ नहिं पाए।
तुम जहाँन के वीचि खुदा के दोस्त आए।
मेरी बगसो चूक, अकब्बर ऐसे भाखै।
हम यह करत अरदास, साहिब तुम सरनैं राखै।
ऐसे आप काशिया, अफताप तुदै ज्यूं तम तिप्यो।
यम देखि तखत पुनि नूर को, शाह अकब्बर को संसो मिट्यो ॥९७९
यों स्वामी दादू चलत, बीरबल अति विलखानों।
मोहर रुपैया धरै, प्रभुजी एह रषानों।
हम यह हाथ छुयें न लेह को चेला-चाँटी।
तुम राजा हम अतिथि देहु विप्रन को बाँटी।
बहुरि बीरवल ले गयो, अकब्बर के दरबार।
यौं राघौ चलते रस रह्यो, जग माहिं जय जयकार ॥९८०

इंदव आय रहे दिवसा सरके तट स्वामि कह्यो सहनान करीजै।
छंद शिष्य जगो यह कहत भयो प्रभु तातिं जिलेबी जिमावन रीजै।
जानि गये सबके मन की हरि ध्यान करचो सिधि आय खरीजै।
राघौ कहै हरि छाव पठावत पात वची जल मांहि करीजै ॥९८१
आत ही आमेर भई एक नाथहु वैन सुबोलि सुनायो।
स्वामी करी जरनां मन में सिष टलिहु जोगि अकाश उड़ायो।
स्वामी खिजे सिषगा करूणा पद जोगि सिलासुघरा परि आयो।
दुष्ट पलें तजि आय परचो पग राघौ कहै जब शिष्य कहायो ॥९८२

मनहर कपट सों तुरक संगोती लायो ढांक करी,
छंद जानि गये स्वामी हरि भोग न लगाये हैं।
कह्यो परसाद लेहु स्वामी खोलि ऐहै,
बूरा भात मेवा गिरी प्रगट दिखाए हैं।
रामत करत सुने माधो, कारिण टोंक मधि,
स्वामी कों बुलाए हिये, अति हुलसाए हैं।
राघौ कहै गुरु महा छै में सन्तन देखि,
रिधि थोरी जानि आय स्वामी को सूनाए हैं ॥९८३

इन्दव छन्द
स्वामि कह्यो जिन सोच करो हरि ध्यान करो प्रभु पूरण हारे।
सामगरी गंज मांहि मंगाय रु भोग लगा हरि ता महि डारे।
रिद्धि अटूट भइ दिन सात लो जस भयो जग बाग अधारे।
लोग मिरचि प्रसाद दिये जुग राघौ कहै गुरु बहुरि पधारे ॥६८४
देखि प्रताप जष्यो अति दुष्टहु कपट छिपाय रु स्वामि बुलाऐ।
मारन को खणि गाड़िहि ढाँकत जानि गए चित नांहि डुलाऐ।
काढ़ि तलाक चले ततकालहि लोहर खाड़त वेगि बुलाऐ।
राघौ कहै खल कूप परे लखि गा करूना पद भौरि चलाऐ ॥६८५
वानि अकाश भई मम. रूपहि आय मिलो हरि सैंन करी है।
ढूँढि सथान निराने मकान जु राखि मनो मन चिन्त परी है।
दास नरान निरानहु को नृप दे सुपनों हरि मत्ति हरी है।
दक्षिन तें ततकालहि आय रु राघौ कहै गुरू-प्रीति खरी है ॥६८६
मन्दिर में पधराय रखे गुरु भीर भई तब बाहर आये।
कोउ दिना तर पोर रहे पुनि शेष के साथ सु खेजर धाए।
आयस तीन हुई हरि की तब तत्व मिलाए रु ब्रह्म समाए।
राघौ कही बुद्धि के अनुमान सु दादुदयाल को पार न पाऐ ॥६८७

पृ० १८६ पद्यांक ३७३ के बाद—

करतार सुनि करुणा जिनकी जन चारि विचारि रु ले घरि आए।
रीति बड़े की बड़े पहिचानत सार करी बहु भाँति जिंवाए।
कपड़ा हथियार तुरी खरचि दई यों करिके घरिकों पहुँचाए।
राघौ कहै सति सुन्दरदासजी आवत ही मथुरा मधि न्हाए ॥१०००

पृ० १८५ मूल पद्यांक ३६६ के बाद—

सुन्दरदास वर्णन : मूल

छप्पय
गुरु दादू बड़ | शिष्य भयो, लघु नृप बीकानेर को।
बादशाह करि हुक्म, पठायो काबलि जाई।
जुद्ध करि धावां पड्यो, समझि किन लियो उठाई।
ताजा ह्वै राठौड तुरी चढ़ि मथुरा आयो।
मिल्यो देश को लोग, सति समचार सुनायो।
राघौ मिलि चतुरै कही, मग लै सांभरि सैर को।
गुरु दादू बड़ शिष्य भयो, लघु नृप बीकानेर को ॥६६६

पृ० १६० पद्यांक ३६० के बाद—

इन्दव छन्द माँहि रहाय रु बार मुँदाय सु प्राण चढाय समाधि लगाई।
मारि विलाय लै माँहि नखाय कही द्विज जाय न होय भलाई।
माँहि मुवो सिध होय लिख्यो विधि वासि उठ्यो सुनि राय रिसाई।
राय रिसाय दियो वलि वायक ह्यो सिष आप जु खाज गँवाई ॥१०१७

अरेल श्रीफल चन्दन तूप चिता विधि सों करी।
अगनि सु दई लगाय देह अति परजरी।
ब्रह्मंड फूटि सुशब्द होत रंकार रे।
परिहां राघौ खल भये फट राय दृग धार रै ॥१०१८

पृ० १६० पद्यांक ३६१ के बाद—

मनहर छन्द काशी को पण्डित महानाम जग-जीवन,
सुदिग्गविजै कृत आम्बावती सु पधारे हैं।
सुने दादू सन्त बड़ दर्शन को गयो तट,
चर्चा को उभावो अति पण्डित जु हारे हैं।
प्रश्न कीयो है जाय स्वामी दियो समझाय,
रामजी मिले सुकरि बैन उर धारे हैं।
रघवा मिटी है आँट पोथा द्विज दीन्हाँ बाँटि,
मन वच कर्म स्वामी दादूजी तुम्हारे हैं ॥१०२०

पृ० १६१ पद्यांक ३६३ के बाद—

अरेल देह त्यागतो वेर कही सव साधि कां।
धरि आज्यो मम देह श्रीगुरु पादुकां।
चलो बीच जगत हट्ट पट परे करे।
परहां राघौ रथ सुरीति देख चर पग परे ॥१०२३

दोहा जगजीवन धनि राघवै, रीत भलि अति कीन।
देह कारवज कारण मिले, आप भये ब्रह्मलीन ॥१

पृ० १६३ पद्यांक ४०२ के बाद—

चतुरदासजी का वर्णन : मूल

छप्पय मरदनियाँ की छाप शीश शिष्य चतुरदास दयाल को ॥
ब्राह्मन कुल उत्पत्ति जगत गति निपट निवारी।
गगन मगन गलतान भजन रस में मति धारी।

उर वैराग अपार, सार ग्राही गुण सागर।
निहकामी निर्दोष मोष मारग मधि नागर।
पाय परमपद विमल, विघ्न गयो भाजि भय काल को।
मरदनियाँ की छाप शीष शिष्य चतुरदास दयाल को ॥१०३३

चतुरदास चोकस चतुर, धीर वीर ध्रुव धर्मधर॥
गुरु सेवा को नेम, प्रेम नित नूतन लायो।
भजन ध्यान की खान. ज्ञान उर उडिग्ग सवायो।
गुरु दादू प्रताप पाप, दुष यु दोंष निवारे।
रह्यो न संसो कोय,. काज सब सुघर सँवारे।
पुर संग्रावट वास वसि, मिले ब्रह्म सुख सिन्धुवर।
चतुरदास चौकस चतुर, धीर वीर ध्रुव धर्मधर ॥३४

पृ० १६५ पद्यांक ४०८ के बाद—

साधूजी का वर्णन

इन्दव छन्द

दादूजी दीन दयालु के पंथ में साधुजी साध शिरोमणि सारो।
बड़ो भजनीक भगति को पुंज हो ज्ञानी महा करतूति करारो।
गर्व नहीं गलतान मतो गह्यो धर्म की टेक निवाहनहारो।
शीश सर्वस दियो जगदीश हि राघौ रह्यो जग सेति नियारो ॥१०४१

मनहर छन्द

भगति को पुंज भजनीक बड़ो शूरवीर,
आसन विभूति साधे साधू साध सारो है।
बालापन मांहि जाके विरह अत्यन्त बढि,
प्रभु-रुचि प्रीति गढि लग्यो सब खारो है।
आवे कोऊ वेदमात बूझै हित धाय धाय,
रोग को गमावै मोहि भयो सोच भारो है।
काहू शिष्य स्वामोजी को पद गायो सुनि धायो,
राघौ गुरू बैद मिले कियो निर्विकारो है ॥१०४२

आसन को दिढ कर साल मधि ध्यान धर,
विश्वरूप व्यापक में गलत जू भीनो है।
काहू नर विना ज्ञान म्है कीकै लगाई चोट,
आपने जु लई वोट, उघरी है सोट तन एक ब्रह्म चीनो है।

ताहि समै सेवकहु दर्शन को आयो जित,
गुरूजी लगाई कित,
स्वामी कही हकीकत शीश चरण दीनो है।
राघौ बात छानी नहीं, प्रगट जगत मांही,
नासिक कों मूंदिवार पच्छिम को कीनो है ॥१०४३

पृ० २०२ मू० पद्यांक ४०८ के बाद—

दादूजी के सेवकों का वर्णन

छप्पय दादू दीनदयाल के, ए सेवग भूपति भले ॥
छन्द अकबर शाह बडमती, बीरबल बुधि को आगर।
खंघार स्यंघ नरायण (भाषर) सिंह, कृष्णसिंह भोज उजागर।
ईश्वर कुछवाहोहि, ताहि गुरु दादू भाए।
लाडखांन घाटवै दयाल दादू पधराए।
पीथो निर्वाण उर आण धरि, पुनि खींची सूरजमलै।
दादू दीनदयाल के, ए सेवग भूपति भले ॥१०६४

बाईयां को वर्णन

दादू दीनदयाल की, संगति ए बाई तिरी ॥
नेमा के गुरु नेम, तहां गुरु दादू पूजे।
रम्भा जमुना जानि गंगा छोडे भ्रम दूजे।
लाडां भागां सन्तोषी, राणी हरिजाणी।
रुक्मणि रतनी भलै, गुरू की रीति पिछाणी।
जगत जसोधा जस लियो, सीता सान्ति हृदय धरी।
दादू दीनदयाल की, संगति ए बाई तिरी ॥१०६५

पृष्ठ २३५, प० ५०८ के बाद—

मीठे मुख वचन रु कंचन ज्यूं क्रान्तिवन्त,
दिपत लिलाट पाट स्वामी प्रहलाद को।
हाथ को उदार हरि हेत होतें राखे नांहीं,
सुध बुध महा सन्त जैसे सनकादि को।
भगति को पुंज भगवन्त जु रिझायो जिन,
भूत भविष्य वर्तमान आज्ञाकारी आदि को।

लोपो नांही रामरेष प्रीति सेतो पूज्यो भेष,
राघौ कहै रामजी निवाहेंगे व्रत साध को ॥१०७२

इंदव छन्द कलिकाल में निहाल भये, प्रहलाद मिले प्रहलाद की नांई।
उदार अपार दया सनमान, इसी विधि सों रिझिए जिन सांई।
शील सन्तोष निर्दोष निरम्मल सन्तन सों न दई कहु बांई।
राघौ कहै गुरू के गुरु सों, मिलियों मुजरो कियो राम के तांई ॥१०७३

पृष्ठ २४१, प० ५३१ के बाद—

दादूदयालजी के शिष्यों के भजन-स्थानों का निरूपण उदाहरण

मनहर छन्द
दादूजी दयाल पाट गरीब मसकीन ठाठ,
जुगलबाई निराट् निराणैं त्रिराज ही।
वखनों संकर पाक जसो चांदो प्राग टाक,
बडो उ गोपाल ताक गुरुद्वारे राज ही।
सांगानेर रज्जब जु, देवल दयालदास,
घड़सी कडेलवंशी धरम की पाज ही।
ईडवै दूजणदास तेजानन्द जोधपुर,
मोहन सु भजनीक आसोप निवाज ही ॥१०६८
गूलर में माधोदास विद्याद में हरिसिंह,
चत्रदास संग्रावटि कियो तन काज ही।
विहाणी प्रयागदास, डीडवाणै है प्रसिद्ध,
सुन्दरदास बूसर सु फतेपुर गाजही।
बनवारी हरदास, रतिये जंगल मधि,
साधूराम मांडोठी में, नीके नित छाजही।
सुन्दर प्रल्हाददास, घाटडै सु छींड मधि,
पूरब चतुरभुज, रामपुर वाराजही ॥१०६६
नराणदास मांगल्यो सु, डांग मांही इकलोद,
रणत-भंवरगढ़, चरणदास जानिए।
हाडोती गंगायचा में, माखूजी मगन भये,
जगोजी भडोंच मधि, प्रचाधारी मानिये।
लालदास नायक सु पीरान पटणदास,
फोफले मेवाड़ मांही दीलोजी प्रमानिए।

सादा पर्मानन्द ईदोर वली में रहे जपि,
जैमल चौहान भले बोलि हरि गानिये ॥११००
जैमल जोगी कछाहा वनमाली चोकन्यौ सु,
सांभर भजन करि यों वितान तान तानियों ।
मोहन दफ्तरी सु मारोठ चिताई भलैं,
रघुनाथ मेड़ते सु, भाव करि आनियों ।
कालेडेहरे चत्रदास, टीकमदास नाँगले में,
झोटवाडैं झांझू वांझू, लघु गोपाल धानियों ।
आम्बावति जमंनाथ, राहौरी जनगोपाल,
बारै हजारी संतदास चाँवण्डे लुभानियों ॥११०१
आंधी में गरीबदास, भानुगढ़ माधव के,
मोहन मेवाड़ा जोग, साधन सों रहे हैं ।
टेटड़े में नागर-निजाम हू भजन कियो,
दास जगजीवन सुदयो, साहरि लहे हैं ।
मोह दरियाई सु, समिंधी मधि नागर-चाल,
बोकड़ास संत जु, हिंगोल गिरि भए हैं ।
चैनराम काणोंता में, गुंदेर कपिल मुनि,
श्यामदास झालाणा में, चोड़के में ठये हैं ॥११०२
सौंक्या लाखा नरहर, अलूदै भजन कर,
म्हाजन खण्डेलवाल, दादू गुरू गहे हैं ।
पूरणदास ताराचन्द, म्हाजन मेहरवाल,
आंधी में भगति करि, काम क्रोध दहे हैं ।
रामदास राणी बाई, झांजल्यां प्रगट भये,
म्हाजन डिंगायच सु, जाति बोल सहे हैं ।
बावनहि थांभा अरु, बावन महन्त ग्राम,
दादूपन्थी चतरदास, सुनी जैसें कहे हैं ॥११०३

इति दादू सम्प्रदाय मध्ये भक्तवर्णन समाप्त ॥

पृ० २०६ प० ४४४ के बाद—

अथ पुनि समुदाय-भक्त वर्णन

अरेल यम हरि सों रत हरिदास, पठांण भाण भयो भक्ति को ।
धनि माधो मुगल महन्त, गह्यो मत मुक्ति को ।

अन्तज कुल अवतार कहर पखि परहरचो।
भक्तवछल रछिपाल काल भ्रम थरहरचो।
जन राघौ षट-ऋतु, ख्याल अजपा जापसों।
निशि दिन गोष्ठी ज्ञान आपनों आपसों ॥११२२

पृं० २०६ प० ४४५ के बाद—

निपटजो का वर्णन

निपट कपट सब छाडि कर, एक अखण्डित उर धरे॥
उत्तम कविसो ऐंन, काव्य सब के मन भावै।
मनहर इन्दव छप्पै, भूलणां खूब सुनावै।
ज्ञानी अति गलितान, ब्रह्म अद्वैतहि गायो।
सांची दे चाणक, भरम गहि अधर उडायो।
छाप निरंजन की तहां, जिते कवित राघौ करे।
निपट कपट सब छाडि, करि एक निरंजन उर धरे॥११२४

पृ० २१८ प० ४६४ के बाद—

करमैंती कर्म न लग्यो साहा पैली शीश दह।
गृह तैं निकसि भागि करक को मन्दिर कीन्हो।
तीन रैन तहाँ बसी बहुरि मारग पग दीन्हो।
ब्रज भूमि में जाय महा ऊँचे स्वर रोयै।
लोक कुटुम्ब सब त्याग पंथ हरिजी को जोवै।
जन राघौ हरिजी मिले सुख प्रगट्यो दुख गयो वह।
करमैती कर्म न लग्यो साहा पैली शीश दह॥११८६

पृ० २३० मू० प० ४८६ के बाद—

बलोजी का वर्णन

हुकुम हसम घर माल तजि वलिराम उर सुध कियो॥
लगी नाम सों प्रीति रीति औरे सब छाडी।
पियो ब्रह्म-रस नीर आन धर्म छाडि र नाडी।
गयो पाताशा पासि ज्ञान वैराग दिपाए।
दोऊ करले कांख पांव दोऊ मुकलाए।
राघौ भक्ति करी इसी श्रवण सुनत उमग्यो हियो।
हुकुम हसम घर माल तजि वलिराम उर सुध कियो॥१२४६

पृ० २३१, प० ४६१ के बाद—

कडवा तजत किराट कों, गई अप्सरा वरनकूं ।।
भक्ति करत इक भूप, सही कसणी अति भारी।
तब भेटे भगवान, आप त्रिभुवन-धारी।
नारी पलटि नर भयो, सीत परसादी पाई।
भांड भगत प्रतिछ नृपत, पूज्यो निरताई।
कंवर कठारा की कथा, जन राघौ कही जग-तिरन कों।
कडवा तजट किराट कों, गई अप्सरा वरनकूं ।।१२५१

खरहंत को वर्णन

साखी सत-संगति परताप तें, निकसि गयो सब खोट।
धुनही तोरी धान कै, आयो हरि की वोट ।।

छप्पय छंद अंत्यज एक अन्तर मही, धुनि धुनिही हिरदै धरी ।।
दुनी देख वेहाल, काल को बहुत पसारो।
लुक्यो धाम के मांहि, मूंदि पण घर को द्वारो।
आम्बानेरी विप्र, तास ने मोठ पठाई।
दईरामजी सैन, भक्त मेरो वह भाई।
राघौ धनि धनि रामजी, खरहन्त की रक्षा करो।
अंत्यज एक अन्तर मही, धुनि धुनिही हिरदै धरी ।।१२५२

दोहा साहिब के घर वस्तु बहू, खरहन्त अपना खोठ।
गेहूं चावल घी घणा, लिख्या भाग में मोठ ।।

पृ० २३३, प० ४६८ के बाद—

टूटै व्रत आकाश, कौन करता विन जौरे।
परमेश्वर पति राखि, होह परजा कै वोरे।
बूडत बाजी राखि, विधाता चित्र धिनाणी।
चौरासी लक्ष जोनि, पूरि सब :को अन-पाणी।
रघवो प्रणवत रामजी, दृष्टि न कीज्यो कहर की।
जती सती को पण रहै, करि वर्षा एक पहर की ।।१२६०

पृ० २४६, प० ५५५ के बाद—

अनन्यशरणता

मनहर छन्द

दादू को सेवक हूं दादूजी सहाय मेरे,
दादूजी को ध्यान धरूं दादू मेरे धन्न हैं।
दादूजी रिझाऊं नित नाम लेऊं दादूजी को,
दादू-गुन गाऊं वडो दादूजी सों पन्न हैं।
दादूजी सों नातो रसमातो रहूं दादूजी सों,
दादूजी अधार मेरे दादू तन मन्न हैं।
कहै दादूदास मोहि भरोसो एक दादूजी को,
दादूजी सों काम दादू अघ के हरन हैं॥१२८०

इति राघौदासजी कृत मूल भक्तमाल सम्पूर्ण ॥

——

परिशिष्ट २

दादूशिष्य जग्गाजी रचित

भक्तमाल

(दादूपन्थी सम्प्रदाय की प्राचीन व संक्षिप्त भक्तमाल)

चौपाई ढाढियो हरि सन्तन केरो। निसदिन जस करौ में चेरौ ॥
प्रथमे गुरु दादू मैं जाच्या। दिया राम धन दुख सब वांच्या ॥१
चन्द सूर धरती असमाना। इनहू कह्यौ रामको ग्याना ॥
एक पवन अरु दूजा पानी। तेज तत्त कह्यौ राम वखानी ॥२
ब्रह्मा विष्णु महेश हनुवंत भाई। इनहू हरि की सन्धि वताई ॥
गोरष भरतरी गोपीचन्द। इनहू कह्यौ भजौ गोविन्द ॥३
सन्त कणेरी चरपट हाली। प्रिथीनाथ कह्यौ हरि मार्ग चाली ॥
अजैपाल नेमीनाथ जलध्री कन्हीपाव। इनहू कह्यौ भज समरथ-राव ॥४
धूंधलीमल कंथड भडगी विप्रानाथ। इनहू कह्यौ हरि देवे हाथ ॥
नागार्जुन बालनाथ चौरंगी मींडकीपाव। इनहू कह्यौ भज समरथ-राव ॥५
सिद्ध गरीबदेव लहर ताली। चुणकर कह्यौ लाय उनमनी ताली ॥
गणेश जडभरथ शंकर सिद्ध घोडाचोली। इनहू कह्यौ राम लै रोली ॥६
आजू-वाजू सुकल हँस ताविया भाई। इनहू कहचौ गोविन्द गुण गाई ॥
वगदाल मलोमाच सिंगी रिष अगस्त। इनहू कहचौ रांम भज वस्त ॥७
रिषिदेव कदरज हस्तामल व्यास। इनहू कहचौ भज सासैं-सास ॥
ऋषि वशिष्ट जमदग्नि पारासर मुचकंदा। इनहू कह्यौ भज हरिचंदा ॥८
गर्ग उत्तानपाद वामदेव विश्वमात्र भाई। इनहू कहचो साची राम सगाई ॥
भृंगी अंगिरा कपिल दुरालभा। इनहू कहचौ हरि भज सुलभा ॥९
दुरवासा मार्कंडेय मत्तन नासाग्रेह। इनहू कहचौ हरि भज प्रेह ॥
अष्टावक्र पुलिस्त पुलह गंगेव। इनहू कहचौ करो हरि-सेव ॥१०
सुभर च्यवन कुंभज गजानंद। इनहू कहचौ हरि भज आनंद ॥
पहुपाल्या अदै कुंभ भुजजा भगनौ। इनहू कहचौ राम भज घनो ॥११

शांडिल्य कुरतजा जाज्ञवालिक्य श्रया। इनहू कह्यौ राम भज नया ।।
शतजोति दशजोति सहस्रजोति गालवरिषि। इनहू कह्यौ राम-रस चषि ।।१२
मांडव्य पिपलाद उद्दालक नासकेत। इनहू कह्यौ करि हरि सों हेत ।।
कर भजन नारद अर्जुन सरस्वती। इनहू कह्यौ राम भज जती ।।१३
सनक सनंदन सनतकुमार। इनहू कह्यौ भज राम संवार ।।
कायाहरि अंतरिष प्रबुद्धा। इनहू कह्यौ भज समरथ शुद्धा ।।१४
पहपाल्या मर्द दमला चमासे। इनहू कह्यौ राम हरि रमासे ।।
जब्राइल रसूल वलेल वहावदी मुल्ला। इनहू कही अल्ला की गल्लां ।।१५
फरीद हाफिज ईसा मूसा। इनहू कह्यौ अला तोहि तूसा ।।
थाज वाजिद ढिलन समन सहवाज। इनहू कह्यौ अल्ला की आवाज ।।१६
वलख का बादशाह शेख वूढा मनसूर। इनहू कह्यौ रख अला हजूर ।।
अलहदाद अनलहक जांन। इनहू दिया नाम निसान ।।१७
काजी महमूद रूहा पठानां। इनहू दिया नांव निज जांना ।।
कायाश्री संजावती सविया मन्दालसाह। इनहू कह्यौ भज समरथ साह ।।१८
एता सिद्ध ऋषीसुर तुरकी संत जगियो गावै। और भगतनि पै माँगै पावै ।।
ध्रू प्रहलाद शेष सुखदेवा। सत्यराम की कहि मोहि सेवा ।।१९
नामदेव तिलोचन कबीर घूरी स्वामी। इनहू कह्यौ भज अन्तरयामी ।।
रामानन्द सुखा श्रीरंगा। नानक कह्यौ रहहु हरि-संगा ।।२०
पीपा सोंझा धना रैदासा। राम राम की वन्धाई आसा ।।
सुकाल सेठ जनक रांका वांका। इनहू दिया हरिनाम का नाका ।।२१
पदमनाभ आधारू नरसी। सो म कह्यौ तोकौं हरि दरसी ।।
उनपति सुनपति हंस परमहंस। इनहू कह्यौ राम भज अंस ।।२२
वीसल वेणी नापा हरिदास। इनहू कह्यौ हरि तेरे पास ।।
अंगद भुवन परस अरुसेन। ए भी उठ्या रामधन देन ।।२३
सूर परमानन्द माधौ जगनाथी। इनहू कही मोहि राम की थाति ।।
छीतर वहवल सीहा भाई। इनहू मोकौ इहै दिढाई ।।२४
कीता सन्ता चत्रभुज कान्हां। प्रगट राम कह्यौ नहिं छाना ।।
दत्त दिगम्बर औघड़ नरसिंह भारती। इनहू वात कही इक छूती ।।२५
ग्यांन तिलोक मति सुन्दर भींव। मुकुंद कह्यौ रहु हरि की सींव ।।
विजिया वेलिया हालण अरु हाथो। इनहू कह्यौ राम है साथी ।।२६

दीप कील्ह अरु वेलियानन्द। भर्तृ कह्यौ भजि राम गोविन्द ।।
घाटम द्यौगू सूरिया आसानन्दा। इनहू कह्यौ राम भजि गंदा ।।२७
सधना सांवल मुवा अर गालिम। इनहू कह्यौ राम भजि खालिम ।।
तापिया लोदिया सायर अरु नीर। इनहू कह्यौ करि हरि सूं सीर ।।२८
वोहिथ पैवंत हरिचन्द ऋषीकेश। इनहू दियो राम उपदेश ।।
डूंगर विसालष परमानन्द वीठल। इनहू कह्यौ राम भज मीठल ।।२९
कान्हैयो नाइक वैकुण्ठ-वन। सारी कह्यौ हो हरि को जन ।।
लाडण वालमीक भैरूं कमाल। इनहू कह्यौ हरि मारग हाल ।।३०
हातम छीहल पदम धूंधली। इनहू कह्यौ भज राम भली ।।
जैदेव कृष्ण राम लिछमण भाई। इनहू हरि-मारग दियो वताई ।।३१
सीता माता मैंणावती बाई। पारवती अरु ध्रू की माई ।।
सरिया कुंभारी अनुसूया अंजनो जांणी। इनहू कहो राम की वांणी ।।३२
इतना सन्त पुरातन जगियो हिरदै राखै। गुरु दादू का सेवग भाखे ।।
गुरु दादूका सेवग वखांण। गरीबदास मसकीना जांण ।।३३
नानी माता दोन्युं बाई। इनहू कह्यौ राम भज भाई ।।
वावो लोदी माता वसी। हवा साधु कह्यौ हरि-मारग धसी ।।३४
संतदास माधो मांगौ रामदास। इनहू कह्यौ हरि तेरे पास ।।
चान्दा टीला दामोदरदास। इनहू कह्यौ रहु हरि के वास ।।३५
दयालदास वडो गोपाल संतदास। इनहू कहचौ वन हरि के दास ।।
जगजीवन जगदीश स्यांम पहलादू। इनहू कह्यौ भजो हरि साधू ।।३६
वखनो जैमल जनगोपाल चतुर्भुज वणजारो। इनहू कह्यौ भजौ साहब सारो ।।
नारायण प्रागदास भगवान मारु सन्तदास। इनहू कहचौ करो हरि के वास ।।३७
मोहन दफतरी मोहन मेवाडो केशो राघो। इनहू कह्यौ भजौ हरि आघो ।।
रज्जव दूजण घडसी ठाकुर। इनहू कह्यौ होहु राम को चाकर ।।३८
सादो परमानंद रीकू लालदास नाइक। इनहू कह्यौ भजो हरि लाइक ।।
जैमल पूरण गरीब साधु साध। इनहू कह्यौ भजि हरि-अगाध ।।३९
चतरो भगवान हरिसिंह भवना। इनहू कह्यौ होहु हरि-जना ।।
दयाल माधो जोगी खाटरचो चत्रददास। इनहू कह्यौ भज हरि अवास ।।४०
प्रागदास धीरो जगनाथ चतरो मर्दनो वीरौ। इनहू कह्यौ भजो हरि हीरो ।।
लघु गोपाल रामदास मोहन नरसिंह लावालौ। इनहू कह्यौ भजि राम राले आलौ।।४१

तेजानन्द हरिदास कृष्ण गोविन्द झावरि वालौ। इनहू कह्यौ जगा राम संभालो ।।
डूंगो भगवान माधौ सन्तदास। इनहू कह्यौ करो हरि की आस ।।४२
वनमाली देवेन्द्र ब्रह्मा अरु मोनी। इनहू कह्यौ भजो हरि क्यों नी ?
गंगदास चरणदास साधू अर मोहन। इनहू कह्यौ राम भजि सोहन ।।४३
हरिदास कपिल नारायण टीकू माली। इनहू कह्यौ जगाराम संभाली ।।
वधू चेतन नरहरि मांधो कांणी। इनहू कह्यौ भजो एक विनांणी ।।४४
वाजिन्द परमानन्द निजाम नागर। इनहू कह्यौ भजो हरि उजागर ।।
परसरांम चतरो गोविन्द जंगी। इनहू कहयौ राम है संगी ।।४५
गजनीसा सांवल महमूद वोहिथं। इनहू कह्यौ राम रमि सोहिथ ।।
पूरण चतरो लालदास नागौ। केवल केसो झांझु हरि मांगौ ।।४६
वीठल जसो अरु जगनाथ। इनहू कह्यौ रहु हरि के साथ ।।
केसो चतरो निरंजनी सन्तो तोलो सरवंगी। इनहू कहयौ राम रंग रंगी ।।४७
ऊधो रामदास चूहड़ वनमाली। इनहू कहचौ जगा राम संभाली ।।
चैन नारायण ठाकुर पांचो। इनहू कहचौ भज साहब सांचौ ।।४८
नारायण दांतणियो जगनाथ गोपाल ऊधो। इनहू कहचौ राम भजि सूधो ।।
गरीबजन रामदास शारंगदास। इनहू कहचौ हरि हिरदै वास ।।४९
नारायण गोविन्द दिढ दास मुरारी। इनहू कहचौ हरि भगति सारो ।।
दखणी मोहन उतराधा हरिदास टीको पाल्हा। इनहू कहचौ राम भजि वाल्हा ।।५०
ईसर केशो साहूकार वैरागी श्यामा जगा। इनहू कहचौ राम है सगा ।।
श्यामदास पूरवियो सांगा गांगा। इनहू कहचौ लै राम मैं आंगा ।।५१
सांगो पहराज स्यांमदास कलौ। इनहू कह्यौ राम भज भलो ।।
सुन्दरदास गोपाल भगवान देवो गुजराती साध। इनहु कह्यौ भज हरि अगाध ।।५२
चरणदास माधो पंचायण पूरा। इनहू कह्यौ राम भज सूरा ।।
रामदास दामोदर नारायण नरसिंह षेमदास। इनहू कह्यौ होहु हरि के वास ।।५३
ध्यानदास बालो लालो हरिदास जंत्री। इनहू कह्यौ राम भज मंत्री ।।
जगदीश सन्तदास माधो बोहिथ माली। इनहू कह्यौ राम करे रखवाली ।।५४
चरणदास हेमो शंकरदयाल वन। इनहू कह्यौ होहु हरि को जन ।।
माखू माधो केसोलाल। इनहू कह्यौ भज हरि हर हाल ।।५५
चरणदास गुजराती वीरम केसो हापा। इनहू कह्यौ राम भज वापा ।।

उतराधा सन्त वखाणों

दयालदास दामोदर माधो। इनहू कह्यौ सोध हरि लाधौ ॥५६
परमानन्द भगवान मनोहर जीता। इनहू कह्यौ राम भज रहो न रीता ॥
गोपाल मनोहर वनमाली मीठा। इनहू कह्यौ राम तोहे दीठा ॥५७
हरिदास दमोदर परमानन्द दूदा। इनहू कहचौ राम भज सूदा ॥
हरिदास कलाल दयालदास कांणोतेवालौ। इनहू कह्यौ राम भज रलि पालो ॥५८
संतोषो राघो कान्हड़ हरिदासा। इनहू कह्यौ राम भजि खासा ॥
राघो भगवान गोरा तो मोहन धनावंसी। इनहू कह्यौ हरि के दर वसी ॥५६
जन जलाल खेमदास राघो माली। इनहू कह्यौ राम करै रखवालो ॥
ऊधोदास जोधा संतोषदास पिनारो। हरीदास मूंडती-वालो ॥६०
विरही राघो राम लखी नारो। इनहू कह्यौ गहि राम को डालो ॥
तुलसी गोविंद दामोदर ईसर। इनहू कहचौ राम जनि वीसर ॥६१
पूरण ईसर गोपाल रैदास वंशी। इनहू कह्यौ हरि के दर वसी ॥
लाखो नरहरि कल्याण केसो। इनहू दियो राम उपदेशो ॥६२
टोडर खेमदास माधो नेमां। इनहू कह्यौ रहु हरि की सीमां ॥
राणी रमा जमना अरु गंगा। इनहू कह्यौ राम भज चंगा ॥६३
लाडां भागां संतोषां रांणी। इनहू कहचौ भज एक विनांणी ॥
रुकमणी रतनी सीता जसोदा। इनहू कहचौ करि राम का सौदा ॥६४

स्वामी दादू के कीरतनिया वखांणों

स्वामी दादू का कीरतनिया वखांणो। रामदास हरीदास धर्मदास बावो बूढौ वानों ॥
रामदास नाथो राघो खेम गोपाल। इनहू कहचौ हरि वडे दयाल ॥६५
हरिदास लखमी विसनदास कल्यांण। तुलछा नेता स्याम सुजांण ॥
हुये होहिंगे अब ही साधां। तिनकौ खोजय हु मारग लाधा ॥६६
अगणित साध अगोचर वांणी। कृपा करौ मोहिं अपणौ जांणी ॥
गुरु प्रसादे या बुधि आई। सकल साध मेरे वाप र माई ॥६७
गुरु गुरु-भाई सब में वूझ्या। तिनके ग्यांन परम-पद सूझ्या ॥
जगि ये साध सिध सुण्यां ते जाच्या। दियो रामधन दुख सव वाच्या ॥६८
जनम-जनम का टोटा भाग्या। अखै भडार विलसने लाग्या ॥
भक्तिमाल सुनै अरु गावे। योनि-संकट बहुरि न आवै ॥६९

॥ इति जग्गाजी की भक्तिमाल सम्पूर्ण ॥

परिशिष्ट ३

चैनजी रचित

भक्तमाल

दोहा

सीस नाय वन्दन करूं, गुरु गोविन्द उर आनि।
सकल संत कौ जोर कर, कहुं सु नवां बखानि ॥१
प्रसिद्ध भये जेते जपूं, छिपे सु रहे अनन्त।
अनक्षुनियां सौ हेत अति, गुपत कह्या सोई सन्त ॥२
ब्रह्मा विष्णु महेश शेष सनकादिक नारद।
मारकंडे वगदालक मयूरवी गर्ग सुशारद ॥३
भजनानंद विकेसनि प्रवलंवआण अधारु।
नंद सुनंद प्रवीन कबै देखै दीदारु ॥४
चंड प्रचंड पुनीत सुतौ, अति निरमल अंगू।
शील सुशील सु सैन, भजै हरि लागौ रंगू ॥५
भद्र सुभद्र हरै पर पीरु, कमध कमदाक्षि अधारू।
, सही सरवै सुख सूं सीरु ॥६
सगर भगर सत्यव्रत प्रीति, अभिअन्तर परकासू।
सिवरी सुमति धना, धरम में कीया वासू ॥७
रवि अध्यारक ऐलि, वलि सु अरपियो सरीरु।
रुकमांगद हरिचन्द, व्रत्त मांही मति धीरु ॥८
अरीहन्त निज शेष, भक्ति भागीरथ पाई।
वालमीक मिथलेश, भरत कै राम सहाई ॥९
गंधीर गज गनपरणं, सुपारथ पहचाणी।
वोढा नील दधीचि, स्मृति भगौत वखांणी ॥१०
तामरध्वज परचीन्ह, परीक्षत पाई परखू।
अणमृत प्रियव्रत भजै, स्वयंभू मनु हरखू ॥११
ग्राह पृथु भीषम मनु भूप, सुग्रीव सुदामा विप्र अनूप।
अगस्त पुलस्त्य कमला ध्यांन, मन्दालसा प्रचेता जांन ॥१२

विरह वालमीक स सुमरै एक। चन्द्रहास चित्रकेतु अनेक।
सरभ ऋषि कर्दम भृगु अंगिराई। लउचम अत्रि करहे ल्यौ लाई ॥१३
विश्वामित्र माधवाचार्य ध्यावै। पदमनाभ परमातम गावै।
पुलह च्यवन जस कहै वखानी। लीन भये गौतम से ग्यानी ॥१४
सनक सनंदन सन्त कंवारू। सनातन पावै नहिं पारू।
कवि हरि अन्तरिक्ष हरि गावै। प्रबुद्ध पुहपला पारं न पावै ॥१५
अविर होत दुर्मिल हरिदासू। चम स रहै क्रमांजन पासू।
सनकादिक नारद भये पारू। नौ जोगेश्वर सुमिरे सारू ॥१६
कदरज हस्तामल निज संतू। अष्टावक्र भजै भगवन्तू।
जै विजै मांडवी भृगु अंगराई। अजामेल गणिका गति पाई ॥१७
अनुसूया अंजनी सु धावै। सहस अठ्यासी मुनि हरि गावै।
कोटि तेतीसूँ कहे सु देऊ। इन्द्रदेवनि दुर्वासा सेऊ ॥१८
गवराँ श्याम कार्तिक गनेसू। लियो कपिल कर निज उपदेसू।
ध्रू सुनीति लिछमन सुख दैऊ। सन्त शौनिक गुरु गंगेऊ ॥१६
गण गन्धर्प देहुति सुमाई। जप निज नाम सु शुन्य समाई।
धर्मराय जयदेव वखांणी। जनक भये निज सन्त विनाणी ॥२०
ऊधो अक्रूर प्रहलाद हणवंतु। विल्वमंगल वशिष्ट जपै अनन्तू।
अलखनाथ पराशर दिलीप अम्बरीष। समकि सींगी गुरु की सीख ॥२१
जड-भरथ रघु गुणदत्त गुँसाई। मछिंदर गोरख लगै सु नांई।
बालनाथ औघड़ सावरानन्दू। कणेरी चौरंगी जपै गोविन्दू ॥२२
सुध-बुध भीन र भैरूँ रु जोगी। काकभंडी कोरट अमृत भोगी।
टिटणी कपाली खंड नाम सारू। वीरू पाख वेलिया भई करारू ॥२३
नित्यनाथ निरंजन विदु सु नाथू। सिद्धपाद सदानंद कियो मन हाथू।
भूली गौड़ भालुकी तारे। निनांणवै कोड नृप पार उतारे ॥२४
सतीनाथ भर्थरी करै अनंदा। श्री मछिंदर चर्पट वन्दा।
सिध गरीबा वालगु नाई। देवल सुरति निरन्तर लाई ॥२५
नागार्जुन अरु घोड़ाचोली। अजैपाल अन्तर हरि बोली।
चुणकर गोपीचन्द मैंणवती माता। जलन्द्रीपाव धूंधली जपै हो विमाता ॥२६
पूजपाद अरु हालीपाऊ। कान्हीपाव सिधां सौ भाऊ।
नागदेव जोगी जप जप जागै। मांडकी पाव सु भये सभागे ॥२७

कंथडीपाव चिरणगी स्याल सेटू। अलसनाथ जोगी पहुँचे थेटू।
अंगद सोम वालमीक पासा। मोरधज वीजल करैहों विलासा ॥२८
कहै हरकेस अनाहद वांणी। ऋषीकेस दईदास वखांणी।
विसनदास तिलोचन नामा गाई। रांका वांका वेण सुणांई ॥२९
रामानंद कबीर अरपियो परसू। गलगला सुरसुरा पावै दरसू।
मतिमुन्दर रैदास पद्मावती सेवा। वेलि सूरिया भजै हरि देवा ॥३०
अनंतानन्द अन्तर हरि गाई। सुरसुरानन्द सुरसुरि रहे ल्यौ लाई।
रूप सनातन भावानन्दू। रामदास हिरदै गोविन्दू ॥३१
सोंझा सांवलिया स्योश्रम भांणू। सधना धना भये अति जाणूँ।
सीहा सोभू जन भगवानू। विशनपुरी भीव परवानूँ ॥३२
रतन पारखू अरु केतगा मीरां। अनलहक उतरे भौ तीरा।
सुकलहँस पाई निज परखू। आजूज वाजूज हरिभज हरसू ॥३३
जन तिलोक महादेवा कुरु। लघु परमानन्द संत अध ध्रू।
ताविया लोदिया सदगति सरगू। नासकेत उदालक हांडी भरगू ॥३४
नानक नरसी परमानन्द सूरं। मुकन्दसेन वहवल पूरं।
सुखानन्द अरु माधो गुसांई। कीता नापा सुमरै सांई ॥३५
कृष्णानन्द श्रीरंग अधारू। विद्यादास वीसौ हुसियारू।
ष्वाज वाजिद विराहम सिकंदर मनसूरं। फरीद हातम कै मुख नूरं ॥३६
शेष वहावदी अरु सहवाजू। वाहिद भीकरण सारे काजू।
बाबा वूढौ विजली खानूं। परम जोति में प्राण समानू ॥३७
काजी महमूद कादन जीवनि जीकौ।
सारी छीतम गोविन्द भांणू। गालिब वीठल लघ निसाणू ॥३८
रहुवा चइया कान्हा अवू। सन्तदास घाटम नृसिंह सवू।
कर्मानंद त्रिलोक प्रथीनाथ टोली। चंदनाथ व्यासर माणक कोली ॥३९
चत्रनाथ चतुर्भुज हरि की आसा। द्यौगू किसनदास कील्ह हरदासा।
जोगानंद विमलानंद मुनी मन हाथू। नरसो वांदरौ घूडी सव साथू ॥४०
स्वामी दादू संत सुतौ कलि मांहि कबीरू। जेते परसे आइ सुखी सो सदा सरीरू।
ज्यौं पारस कै संग लोह सू कंचन होई। भये सुनिरमल अंग कुल सु कारण नहिं कोई॥४१
कियो सकल माया कौ त्याग। गृह मांही लीयो वैराग।
भजै अहोनिस प्राण अधारू। सकल संग लै उतरे पारू ॥४२

गरीबदास कुलदीप। दुती शशि करै विगासू।
भाव भगति वेसास। सुतौ उर भयो परकासू ॥४३
अति चेतन सरवंगी। भजै हरि हिरदै सारू।
कैंधो ध्रुव मति धीर। धर्म मांही इकतारू ॥४४
जनगोपाल रु जमनाबाई। गुरु दादू की कीरति गाई।
ध्रुव प्रहलाद भरथरी लीला। 'मोहविवेक' ग्यांन मन मीला ॥४५
नारायण चैन रु ठाकुरदासू। सूर हरी खेमदास उदासू।
चैनदास तिनके गुण गावै। और सबन कै नाम सुनावै ॥४६
वहन हवा अरु दोन्यू बाई। टीलो. चांदो हरि ल्यौ लाई।
हरिदास द्वारिका सन्तदासू। चेतन वधू चरण कै पासू ॥४७
वीठल केसो भगति प्रकासू। बडौ गापाल हरि मांहि निवासू।
रामदास ताकै सिख सन्तू। महा कठिन निज गुरु का मन्तू ॥४८
दूदै खवास दया दिल धारी। मिलै सन्त जन पर उपगारी।
गरीबदास सौ सनमुख भालू। भजै अहोनिस दीनदयालू ॥४९
गुरु आज्ञा मैं गोविन्ददासू। राघो ईसर चरणों पासू।
केवल चोखी करै कमाई। चांटी दे गोपाल सवाई ॥५०
वीरमदास रहै दरवारू। करै अहोनिस पर उपगारू।
गुरु गोविन्द सौं अतिसै हेतू। सनमुख सेवा करै सचेतू ॥५१
सन्तदास दूदो दरवारी। वखनै को अणभै विसतारी।
पूरणदास र जैमल जोगी। गरीबदास अमृतरस भोगी ॥५२
रहै सु देवगिरि असथानू। तहाँ धरै जगजीवन ध्यानू।
सिख दामोदर हरिजन हरिदासू। ध्यानदास धरणी धर पासू ॥५३
रजब अजब अनूपम सारू। गुरु दादू संग भई करारू।
सिख दामोदर गोविन्द खेम। जगा हरी को हरि सू नेम ॥५४
रामदास केसो तेजो सन्तू। द्रिढदास मुरारि गह्यौ निज मंतू।
परमानंद पुरौ चतुरो हुसियारू। हीरौ जैराम सेवग निज सारू ॥५५
दूजनदास करी गुरु सेवा। किये प्रशन्न गुरु दादू देवा।
सिख टीकू लाल दयाल कल्यांणू। नारायण ठाकुर निर्मल प्राणू ॥५६
सन्तदास लूंणो गोपालू। सबसौ सनमुख दीनदयालू।
रूपौ रामल केसीबाई। सदगति भये सन्त सुखदाई ॥५७

मोहनदास भजै हरि प्यारो। सिखन साखा सबसौं न्यारो।
रहै आसोप ब्रह्म ल्यो लाई। गुरु दादू की वन्ध्यो सगाई ।।५८
मोहनदास दफतरी सन्तू। सदगति भये सु भज भगवन्तू।
चत्रदास सिख भगति प्रकासू। झांझू कै सोहे निज दासू ।।५९
देवल दया रही भरपूरी। सन्त विराजै जीवन मूरी।
तहाँ सुख को सागर दयालदासू। प्रेम प्रीति पंजर परकासू ।।६०
गलित गरीबी वाइक दीन। रहै अहोनिसि हरि सूं लीन।
स्वामी दादू कौ मत मारू। छिन छिन देखै हरि सुख सारू ।।६१
कलो दिसावर सांगौ सन्तू। सिख पहराज सही दिढमन्तू।
भागां कर्मां के हरि रंगू। साध संग सूं पलट्यौ अंगू ।।६२
पीपा-वंशी सन्त पिरागू। प्रगट भये सु पूरण भागू।
हिरदै विराजै दीनदयालू। रहै सोह वाहू गोपालू ।।६३
वन सु दयाल धना को सांगो। हरि सन्तन में लीयो आगो।
अहनिसि सुरत निरंतर जोरी। शंकर जसो उनमनी डोरी ।।६४
पंडित कपिल और जगनाथू। निरवह्यौ सील गह्यौ हरि हाथू।
सिख सुन्दर गोपाल दयालू। सतगुरु काटै सकल झंझालू ।।६५
सुन्दरदास सन्त निज आदू। सिख सुधरे पीपा पहलादू।
केसौ चतरा कै नहिं आपौ। पोता सिख हरिदास र हापौ ।।६६
हरीदास हिरदै हरि हीरू। सिख नारायण निर्मल सरीरू।
पीपा वंशी पूरण ग्यांन। परम-जोति में धरे सु ध्यान ।।६७
ऊधौ माधौ रामदास हेमू। अर देवल कौ बालक पेमू।
श्यामदास झालांणौ साधू। करै सु अवगति को आराधु ।।६८
प्रागदास विहांणी सन्त सुजांण। दादू किरपा वजे नीसाण।
चरणदास सिख वन्यो नारायण। रामदास भगवन्त परायण ।।६९
संतदास परमानंद सुखनिवासू। ब्रह्म निरूपै गोविन्ददासू।
गोपाल दामोदर गुरु सिख लीन। केसो मनोहर मधुकर दीन ।।७०
मोहन मेवाडो मन थीरू। संगि जगनाथ माधौ मति धीरू।
गरीबजन गोविन्द गुरु ग्यांन। हरीदास कै हरि कौ ध्यांन ।।७१
निर्मल सन्त निजामर नागर। दोऊँ भये ग्यांन के आगर।
ऊधो चतुर्भुज अरु माधो कांणी। रइयौ कहै राम की वांणी ।।७२

सन्तदास अरु तेजा नन्दू। चरणदास नित करै अनन्दू।
माधौदास रु रुकमाबाई। रूपानन्द के रांम सहाई ॥७३

माधौ देव देवो गुजराती। आतम रहै परम रंग राती।
देवेदर अरु मौनी कालो। श्यामदास मदाऊ वालौ ॥७४

ठाकुर मोहन घडसी सन्तू। पावन भये सु भज भगवन्तू।
मगन भयो हरि को रंग राच्यो। स्वामी दादू आंगै नाच्यौ ॥७५

चतरो थलेचो रांमाबाई। सिख वीठल जीवौ सुखदाई।
रैदास-वंशी दयाल सुधारे। नामा-वंसी टीकू सारे ॥७६

माधौ सन्तदास सिख गोपाल। हिरदै विराजै दीनदयाल।
पूरणदास सुमति को धीरू। सिख चतरो साहिबखां राघौ हीरू ॥७७

चत्रौ भगवान भज करै विलासू। सुमरै वनमाली हरिदासू।
साधू कियो शुद्ध शरीरु। सतगुरु कृपा दई हरि धीरु ॥७८

सन्तदास सिख को अति सेवा। किये प्रशन्न परम गुरुदेवा।
मोहनदास महा वैरागी। रहैं टहरडै हरि ल्यौ लागी ॥७९

सादो परमानन्द भगवन्त भज जाग्या। माधो खेम सु गुरु की आग्या।
हरिसिंह सन्त-शिरोमणि सारु। सिख सपूत मोहन हुशियारु ॥८०

धनावंसी चत्रदास सूरौ। हरि मारग में निविह्यौ पूरो।
जगदीशदास बाबो भगवानू। परम जोति में प्राण समानू ॥८१

देदो रहै धणी सूं दीन। गरीबदास आगै लै लीन।
जगन्नाथ बाबा जपि जपि जागे। वणिक भगवान ब्रह्म कै आगे ॥८२

गिरधरलाल गंवार हरि साधू। नापा-वंसो तहाँ जगनाथू।
सीधू सन्तदास वारा-हजारी। जैमल माधौ की बलिहारी ॥८३

गोविन्ददास वैद्य मऊ थानू। सिख सपूत माधौ भगवानू।
जैदेव-वंशी गोविन्द द न। तिलोचन वंसी सुन्दर लीन ॥८४

सांभर भगवान राघौ जपियो।

सैर परै चोखां की साला। तहाँ रहे दादू दीनदयाला ॥८५

जैमल को सिख सारंगदासू। सिख नारायण भक्ति प्रकासू।
पोता सिख सो लालपियारो। सनमुख सदा सन्त निज सारौ ॥८६

हरिसूं हित लपट्यो जगनाथू। आनदास सिख विचरै साथू।
निर्गुण भोजन कियो न स्वादू। हिरदै न आन्यो वाद-विवादू ॥८७

गह्यौ निरंजन को मत सारू। माया पंक न लगी लगारू।
तजि प्रतिमा अविनासी गायो। अन्तरयामी सूं मन लायो ।।८८
स्यामदास कै सन्त प्रसंगू। निराकार कौ लागौ रंगू।
जप निज नाम सु जन्म सुधारचौ। साचो इष्ट सीस पै धारचौ ।।८९
सिख ऊधो नवल सूजा अरू लाल। रामदास जंगली कौ हरि सूं ख्याल।
रामदास गोकली कोमल-बैन। निर्मल मूरति देख्यो नैन ।।९०
माधौ मोहन नारायण नदेरे। नाथो हरि को मारग हेरे।
पिराग रावत जमनाबाई। कुन्ती जसोदा सील समाई ।।९१

॥ इति चैनजी की भक्तमाल सम्पूर्ण ॥

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक—पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

प्रकाशित ग्रन्थ

राजस्थानी और हिन्दी

		मूल्य
१.	**कान्हडदे प्रबन्ध**, महाकवि पद्मनाभ विरचित, सम्पादक—प्रो० के० बी० व्यास, एम०ए०।	१२.२५
२.	**क्यामखां-रासा**, कविवर जान रचित सम्पादक—डॉ० दशरथ शर्मा और श्री अगरचन्द नाहटा।	४.७५
३	**लावा-रासा**, चारण कविया गोपालदान विरचित सम्पादक—श्री महताबचन्द खारैड़।	३.७५
४.	**बांकीदासरी ख्यात**, कविराजा बांकीदास रचित सम्पादक—श्री नरोत्तमदास स्वामी, एम०ए०, विद्यामहोदधि।	५.५०
५.	**राजस्थानी साहित्य-संग्रह**, भाग १ सम्पादक—श्री नरोत्तमदास स्वामी, एम०ए०, विद्यामहोदधि।	२.२५
६.	**राजस्थानी साहित्य-संग्रह**, भाग २ सम्पादक—श्री पुरुषोत्तमलाल मेनारिया, एम०ए०, साहित्यरत्न।	२.७५
७.	**कवीन्द्र-कल्पलता**, कवीन्द्राचार्य सरस्वती विरचित सम्पादिका—श्रीमती रानी लक्ष्मीकुमारी चूंडावत।	२.००
८.	**जुगल विलास**, महाराज पृथ्वीसिंह कृत, सम्पादक—श्रीमती रानी लक्ष्मीकुमारी चूंडावत।	१ ७५
९.	**भगतमाळ**, ब्रह्मदास चारण कृत, सम्पादक—श्री उदैराजजी उज्ज्वल।	१.७५
१०.	**राजस्थान पुरातत्त्वान्वेषण मन्दिर के हस्तलिखित ग्रंथों की सूची, भाग १।**	७.५०
११.	**राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान के हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची, भाग २।**	१२.००
१२.	**मुंहता नैणसीरी ख्यात**, भाग १, मुंहता नैणसी कृत, सम्पा०—श्री बदरीप्रसाद	८.५०
१३.	,, ,, ,, ,, २, ,, ,, साकरिया	९.५०
१४.	,, ,, ,, ,, ३, ,, ,,	८.००
१५.	**रघुवरजसप्रकास**, किसनाजी आढा कृत, सम्पादक—श्री सीताराम लाळस।	८.२५
१६.	**राजस्थानी हस्तलिखित ग्रन्थसूची, भाग १,** सम्पादक—पद्मश्री मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य।	४.५०
१७.	**राजस्थानी हस्तलिखित ग्रन्थसूची, भाग २,** सम्पादक—श्री पुरुषोत्तमलाल मेनारिया, एम०ए०, साहित्यरत्न।	२.७५
१८.	**वीरवांण**, ढाढ़ी बादर कृत सम्पा०—श्रीमती रानी लक्ष्मीकुमारी चूंडावत।	४.५०

१९. स्व० पुरोहित हरिनारायणजी विद्याभूषण ग्रन्थसंग्रह सूची,
सम्पादक—श्री गोपालनारायण बहुरा, एम०ए० और श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी दीक्षित । ६.२५

२०. सूरजप्रकास, भाग १, कविया करणीदानजी कृत, सम्पा०—श्री सीताराम लाळस । ८.००

२१. ,, ,, २, ,, ,, ,, ,, ९.५०

२२. ,, ,, ३, ,, ,, ,, ,, ९.७५

२३. नेहतरंग, रावराजा बुधसिंह हाड़ा कृत, सम्पा०-श्री रामप्रसाद दाधीच, एम०ए० । ४.००

२४. मत्स्यप्रदेश की हिन्दी साहित्य को देन (शोध प्रबन्ध)
डॉ० मोतीलाल गुप्त, एम०ए०, पी०-एच०डी० । ७.००

२५. राजस्थान में संस्कृत साहित्य की खोज, एस० आर० भाण्डारकर
हिन्दी अनुवादक—श्री ब्रह्मदत्त त्रिवेदी, एम०ए०, साहित्याचार्य, काव्यतीर्थ । ३.००

२६. समदर्शी आचार्य हरिभद्र, श्री सुखलालजी सिंघवी,
हिन्दी अनुवादक— शान्तिलाल म० जैन, एम०ए०, शास्त्राचार्य ३.००

२७. बुद्धि विलास, बखतराम शाह कृत, सम्पादक—श्री पद्मधर पाठक, एम०ए० । ३.७५

२८. रुक्मिणी-हरण, सांयाजी झूला कृत
सम्पादक—श्री पुरुषोत्तमलाल मेनारिया, एम०ए०, साहित्यरत्न । ३.५०

२९. सन्त कवि रज्जब : सम्प्रदाय और साहित्य, (शोध प्रबन्ध) डॉ० व्रजलाल वर्मा ७.२५

३०. भक्तमाल, राघवदास कृत, टीका—चतुरदास, सम्पा०—श्री अगरचन्दजी नाहटा । ९.७५

प्रेसों में छप रहे ग्रन्थ

राजस्थानी-हिन्दी

१. गोरा बादल पदमणी चऊपई, कवि हेमरतनकृत, सम्पा०—श्री उदयसिंह भटनागर, एम.ए.

२. राठौड़ाँरी वंशावली, सम्पादक—पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य ।

३. सचित्र राजस्थानी भाषा साहित्य-ग्रन्थ सूची,
सम्पादक—पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य ।

४. मीरां बृहत्-पदावली, स्व० पुरोहित हरिनारायणजी विद्याभूषण द्वारा संकलित,
सम्पादक—पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य ।

५. राजस्थानी साहित्य संग्रह, भाग ३, सम्पा०—श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी दीक्षित ।

६. पश्चिमी भारत की यात्रा, कर्नल जेम्स टॉड,
हिन्दी अनुवादक और सम्पादक—श्री गोपालनारायण बहुरा, एम०ए० ।

७. पृथ्वीराज रासो, महाकवि चन्दवरदाई कृत,
सम्पादक—पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य ।

८. सोढ़ायण, महाकवि चिमनजी कविया कृत, सम्पादक—श्री शक्तिदान कविया, एम०ए० ।

९. बिन्ह रासो, कवि महेशदास राव कृत, सम्पादक—श्री सौभाग्यसिंह शेखावत, एम०ए० ।

१०. पाबूजीरे जुद्धरा छन्द, मेहाजी विठू कृत, सम्पादक—श्री उदैराजजी उज्ज्वल ।

११. प्रताप रासो, जाचिक जीवण कृत
सम्पादक—डॉ० मोतीलाल गुप्त, एम०ए०, पी-एच०डी० ।

१२. मुंहता नैणसी री ख्यात, भाग ४, सम्पादक—श्री बदरीप्रसाद साकरिया ।

सूचना : पुस्तक-विक्रेताओं को २५% कमीशन दिया जाता है ।